श्री राम जय राम जय जय राम

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति

स्मारिका

वर्ष- 32

विक्रमी संवत् 2082 (सन् 2025–2026)

卐 ॐ गं गणपतये नमः 卐

!! श्रीराम !!

श्रीराम जय राम जय जय राम

जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।
चर अरु अचर हर्षजुत राम जनम सुख मूल।।

सम्पादक मण्डल

पं0 दिनेश चन्द्र शर्मा
डॉ0 भगवान दास पटैरया
श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'
श्री राजेश बैरागी, 'पत्रकार'

स्मारिका

विक्रमी संवत् 2082 सन् 2025–2026
वार्षिक अंक – 32

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत)

पंजीकृत कार्यालय : 593, ग्राम बिजवासन, नई दिल्ली –110061
स्थानीय कार्यालय : ए–447, सैक्टर –47, नोएडा –201 303
वेबसाइट –**www.shriramcharit.com** ई–मेल -**contactus@shriramcharit.com**
दूरभाष – 0120–3274619
चल – 9811056467

मुद्रक : **AAR PACK**
प्रिंटिंग एण्ड पैकेजिंग सोलूसन्स
G-24, सैक्टर 11, नोएडा–201301
फोन : 0120–4347256
ईमेल : **aarpacknoida@gmail.com**

पाठकों से निवेदन

स्मारिका का यह वार्षिक अंक–32 आपके हाथ में है। हमारा प्रयास रहा है कि इसमें भगवान श्रीरामजी के आदर्शों को प्रतिपादित करते हुए ऐसे लेख प्रकाशित किए जाएँ, जिनसे समाज में नैतिक मूल्यों का उत्थान हो। इस दिशा में हम कहाँ तक सफल हुए, यह आप ही बता सकते हैं। आशा करते हैं कि आप पत्रिका पढ़कर हमें अपना लेख/अपनी प्रतिक्रिया अवश्य भेजेंगे, ताकि हम अगले अंक में उसे समाहित कर सकें। लेख के संदर्भ में निम्नांकित बिन्दु उल्लेखनीय हैं–

1. लेख श्रीरामचरितमानस में वर्णित प्रसंगों पर तथा उसका शीर्षक यथासंभव चौपाई, दोहा आदि पर आधारित हो।
2. लेखन में उद्धरित दोहा–चौपाई आदि गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित 'श्रीरामचरितमानस' के अनुसार हों। कृपया संदर्भ निम्नांकित प्रकार से अंकित करें।
   जामवंत के वचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।। (5/1/1)
   (5/1/1) का आशय है, पाँचवें काण्ड (सुंदरकाण्ड) के पहले दोहे की पहली चौपाई। सातों काण्डों को क्रमशः इस प्रकार से इंगित करें :– 1, बालकाण्ड, 2. अयोध्याकाण्ड, 3. अरण्यकाण्ड, 4. किष्किंधाकाण्ड, 5. सुंदरकाण्ड, 6. लंकाकाण्ड एवं 7. उत्तरकाण्ड।
3. लेख bpateria@gmail.com पर अथवा 9899004263 पर Whatsapp या A-447 सैक्टर–47, नोएडा–201303 पर डाक से भी भेज सकते हैं।

स्मारिका के प्रकाशन में विज्ञापन से प्राप्त धन का महत्वपूर्ण योगदान है। अनुरोध है कि आप भी अपने संस्थान का विज्ञापन भेजकर पुण्य लाभ प्राप्त करें।

विज्ञापन दरें इस प्रकार से हैं–

क्रमांक	विवरण	राशि (रुपयों में)
1.	प्रथम पृष्ठ के पीछे (दूसरा कवर पेज)	35,000
2.	अंतिम पृष्ठ (चौथा कवर पेज)	30,000
3.	अंतिम पृष्ठ के पीछे (तीसरा कवर पेज)	25,000
4.	पत्रिका पृष्ठ के अंदर पूर्ण पृष्ठ	15,000
5.	पत्रिका पृष्ठ के अंदर आधा पृष्ठ	10,000

पाठकों से प्राप्त सहयोग राशि का योगदान भी इसके प्रकाशन में सराहनीय है। इसे भेजने हेतु विवरण निम्नांकित है। ''श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति'' के नाम 'भारतीय स्टेट बैंक, सैक्टर–31 नोएडा की शाखा में चालू खाता सं0 35299035590, ब्रांच कोड : 15971, IFS Code : SBIN0015971 विज्ञापन–प्रकाशन भी इसी खाते में जमा करा सकते हैं। समिति के पेटीएम का आईकॉन (क्यूआरकोड) पृष्ठ संख्या 09 पर दिया गया है। इसको स्कैन करके भी यूपीआई के माध्यम से समिति के खाते में राशि जमा की जा सकती है।

कृपया सहयोग राशि अथवा विज्ञापन–प्रकाशन राशि भेजकर हमें उपर्युक्त ईमेल या 9899004263 पर फोन या SMS करके सूचित करने का अनुग्रह करें, ताकि तदनुसार प्राप्ति रसीद जारी की जा सके।

अध्यक्ष की ओर से

प्रिय श्रीरामचरितमानस प्रेमियो!

आजकल हमारे देश में ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व में सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। समाज में पाश्चात्य संस्कृति का तेजी से प्रभाव बढ़ रहा है। हम अपनी शिक्षा, व्यवहार, समाज के प्रति कर्तव्य, धर्म तथा सेवा भावना से विमुख होकर मानव–जाति का अहित कर रहे हैं। आज प्रेम और भाईचारे का स्थान हिंसा एवं वैमनस्य ने ले लिया है, जिसका प्रमुख कारण यह है कि अत्यधिक सांसारिक वैभवों को प्राप्त करने की होड़ लगी है। ऐसी विषम परिस्थितियों में भी आपसी सद्भाव बढ़े, जन–जन में ईश्वरीय आस्था तथा भावी पीढ़ी में सुसंस्कार जाग्रत हों, इसी उद्देश्य से 'श्रीरामचरितमानस सत्संग समिति, नोएडा' की सन् 1990 में स्थापना हुई, जिसका अगस्त 2015 को श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति में विलय हो गया है। हमारा उद्देश्य श्रीरामचरितमानस पाठ एवं प्रवचनों के माध्यम से मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीरामचन्द्रजी के पावन चरित्रों का प्रचार–प्रसार कर समाज एवं धर्म की सेवा करना है। इसके द्वारा हम सभी का कल्याण होगा।

यहाँ पाठकों के मन में यह शंका उठनी स्वाभाविक है कि भगवान श्रीकृष्ण का अवतार भी तो धर्मोत्थान के लिए हुआ था, फिर धर्म की सेवा करने के लिए भगवान श्रीराम के चरित्रों का प्रचार–प्रसार ही क्यों? भगवान श्रीकृष्ण की लीलायें अलौकिक हैं और रासलीला आदि कुछ लीलायें तो इतनी गूढ़ हैं कि आम आदमी की समझ से परे होने के कारण अनुकरण करने योग्य नहीं हैं, परन्तु भगवान श्रीराम की लीलायें अलौकिक होते हुए भी लौकिक हैं। साथ ही बहुत ही सहज, सरल और अनुकरणीय हैं, इसलिए वे सर्व साधारण के लिए ग्राह्य हैं। इस भाव को ध्यान में रखकर हम श्रीराम के चरित्रों का प्रचार–प्रसार करते आ रहे हैं।

यह समिति अपने स्थापना काल से दिसम्बर 2024 तक 561 मानस पाठ, संकीर्तन एवं प्रवचनों आदि के कार्यक्रम आयोजित करा चुकी है। इस कड़ी में अब तक अनेक विख्यात विद्वान कथाकारों से प्रवचन एवं रामकथा के आयोजन किये जा चुके हैं। ऐसे पुनीत कार्य करने के लिए जगन्नियंता जगदीश्वर भगवान श्रीराम हमें शक्ति एवं प्रेरणा प्रदान करें, जिससे ऐसे ही कार्यक्रम भविष्य में भी होते रहें, ऐसी परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है।

श्रद्धालुओं से निवेदन है कि समय–समय पर होने वाले धार्मिक समारोहों में उपस्थित होकर धर्म–लाभ प्राप्त करें।

समिति द्वारा आयोजित मानस पाठ एवं प्रवचन

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत) द्वारा समय–समय पर श्रीरामचरितमानस अखण्ड पाठ/सुन्दरकाण्ड पाठ, प्रवचन (सत्संग) आदि का आयोजन किया जाता रहा है। इस क्रम में दिसम्बर 2024 तक 561 मानस पाठ, प्रवचन संकीर्तन आदि कार्यक्रम आयोजित किये गये, इसका विवरण समिति की विगत वर्षों की स्मारिका में प्रकाशित किया गया है। पिछले वर्ष सन् 2024 में 19 कार्यक्रम आयोजित हुए, जिनका विवरण निम्नांकित है–

क्र.सं.	दिनांक	नाम व पता जहाँ पर कार्यक्रम आयोजित हुए
1.	05.01.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
2.	02.02.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
3.	02.03.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
4.	02.04.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
5.	13.04.2024	श्री प्रदीप कुमार शर्मा, ए–447, सैक्टर–47, नोएडा
6.	21.04.2024	श्री अशोक अवाना, ए–5, सैक्टर–100, नोएडा
7.	27.04.2024	श्री अनिलकुमार शर्मा, सी–503, द्वितीय फ्लोर, स्वर्णजयंतीपुरम, गाजियाबाद–201013
8.	05.05.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
9.	08.05.2024	श्रीराम कुमार शर्मा, बी–348ए, सैक्टर–19, नोएडा।
10.	02.06.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
11.	07.07.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
12.	04.08.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
13.	01.09.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
14.	06.10.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
15.	03.11.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
16.	01.12.2024	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा

श्रीरामकथा ज्ञान–यज्ञ कार्यक्रम

क्र.सं.	दिनांक	कार्यक्रम	स्थान	कथा व्यास
1.	17.04.2024	श्रीराम जन्ममहोत्सव	अग्रसेन भवन, सै0–33, नोएडा	पं. दीनानाथ शुक्ला
2.	11.08.2024	तुलसी जयंती	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा	अरविन्द तिवारी
3.	27.10.2024	श्रीरामकथा ज्ञान–यज्ञ	शुक्रताल, मुजफ्फरनगर	श्याम मनावत

विषय सूची

क्रमांक	विषय	लेखक	पृष्ठ
01.	अध्यक्ष की ओर से		03
02.	समिति द्वारा आयोजित मानस पाठ		04
03.	समिति के सदस्यों की सूची		07
04.	रामलला की प्राण–प्रतिष्ठा		10
05.	पाठकों के विचार		11
06.	श्रीराम जन्ममहोत्सव की झलकियाँ	कथा व्यास : पं. दीनानाथ शुक्ला	13
07.	तुलसी जयंती समारोह	कथा व्यास : पं अरविन्द तिवारी	16
08.	भगवद्गुण की स्मृति में...	पं. दिनेश्वर मिश्र	19
09.	महा अजय संसार रिपु...	श्री हेमन्त कुमार तिवारी	22
10.	राष्ट्र भक्ति ही श्रेष्ठ भक्ति है	डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त	27
11.	एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा	डॉ. शंकर शरण त्रिपाठी	32
12.	चौथि भगति मम गुन गन...	श्री कैलाश त्रिपाठी	38
13.	शूर्पणखा ने कहाँ सुनी नीति–कथा	श्री अवध किशोर दूबे	41
14.	गएँ सरन प्रभु राखिहैं	श्री देवेन्द्र शर्मा	42
15.	राम–वन–गमन में निर्दोष थीं कैकेयी	श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'	52
16.	राम का अनन्य भक्त था रावण	श्री सचिन शर्मा	62
17.	बचा हुआ जीवन बचेगा	पं. राधाकृष्ण पाठक 'अतीत'	69
18.	सीता–हरण की आध्यात्मिक पृष्ठभूमि	डॉ. सहृदय नारायण उपाध्याय	70
19.	विघ्नहर्ता-मंगलकर्ता गणेशजी	पं. दिनेश चन्द्र शर्मा	76
20.	श्री हनुमान चालीसा के सिद्ध मंत्र	डॉ. भगवान दास पटैरया	82
21.	मागी नाव न केवटु आना	श्री रामजन्म सिंह	86
22.	मेरे राम	श्रीराम किंकर सिंह	90
23.	राम राज्य	सरल शास्त्री	91
24.	विकलांगता (दिव्यांगता) ईश्वरीय...	पं. राधाकृष्ण पाठक 'अतीत'	95
25.	सत्यासत्य विवेचिका : ब्रह्मसत्यं...	पं. रामनरेश तिवारी 'पिंडीवासा'	100
26.	श्रीराम कथा आयोजन	कथा व्यास : पं. श्यामजी मनावत	104
27.	निषाद से निकटता	कथा व्यास : पं. श्यामजी मनावत	108
28.	राम सदा सेवक रुचि राखी	श्रीमती कुसुम पटैरया	111

29.	श्रीरामजन्म से अयोध्या में परमानंद	श्रीमती ज्योत्सना प्रसाद	115
30.	मूदें आँखि कतहुँ कोउ नाहीं	पं. डॉ. रामगोपाल तिवारी	119
31.	रामचरितमानस राष्ट्रीय समिति का वार्षिक 2023–24 का आय–व्यय विवरण		124
32.	श्रीरामचरितमानस की प्रेरणाप्रद चौपाइयाँ		125
33.	श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र		129
34.	श्रीरामशलाका प्रश्नावली		137
35	संवत् 2082 के व्रत, पर्व त्योहारों की सूची एक दृष्टि में		140
36.	विक्रम संवत् 2082 के व्रत, पर्व त्योहारों की सूची		141
37.	आरती एवं वंदना		153
38.	मानस पाठ हेतु आवश्यक सामग्री		160

सूचना

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति एवं गीता रामायण समिति, नोएडा के संयुक्त तत्वावधान में श्रीराम संदिर, सी ब्लॉक, सैक्टर–36, नोएडा में प्रत्येक माह के प्रथम रविवार को सायंकाल वेला में (ग्रीष्म ऋतु में सायं 6 से 7 बजे तथा शरद/शिशिर ऋतु में सायं 5 से 6 बजे तक श्रीरामचरितमानस की भक्ति पूर्ण प्रेरणाप्रद चौपाइयों का गायन एवं 'श्रीराम जय राम जय जय राम' संकीर्तन होता है। निवेदन है कि सभी सुधीजन इष्ट मित्रों सहित सम्मिलित होकर धर्म लाभ प्राप्त करें।

जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।

जिन्हें स्मरण करने से सब कार्य सिद्ध होते हैं, जो गणों के स्वामी, सुन्दर हाथी के मुख वाले हैं, वे ही बुद्धि के राशि और शुभ गुणों के धाम (श्रीगणेशजी) मुझ पर कृपा करें।

राम बाम दिसि जानकी लखन दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानमय सुरतरु तुलसी तोर।।

जिनके वामांग श्रीजानकीजी और श्रीलक्ष्मणजी दाहिनी ओर विराजित हैं, ऐसे श्रीरामजी का ध्यान कल्पवृक्ष के समान सभी प्रकार से कल्याणकारी है।

विशेषः स्मारिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं।

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति पंजीकृत
सदस्यों की सूची

क्र.सं.	नाम सदस्य	पता	दूरभाष	पद
1.	पं0 दिनेशचन्द्र शर्मा	ए–447, सै0–47, नोएडा–201303	9811056467	अध्यक्ष
2.	श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'	216, जी0जी0 हॉस्टल वाली गली होशियारपुर, सै0–51, नोएडा	9310555665	उपाध्यक्ष
3.	डॉ0 भगवानदास पटैरया	डी–11, सै0–36, नोएडा	9899004263	महासचिव
4.	डॉ0 रविन्द्रकुमार शर्मा	593, ग्राम बिजवासन, नई दिल्ली–110061	9911307799	सचिव
5.	श्री लीलू राम वर्मा	डी–144 सै0 108, नोएडा	9312280743	संयुक्त सचिव
6.	श्री जे0 के0 गुप्ता	ए–87, सै0–49, नोएडा	9810997834	कोषाध्यक्ष
7.	श्री भिक्कीलाल शर्मा	ए–105, सै0–20, नोएडा	9810836348	कार्यकारी सदस्य
8.	श्री हुकमचन्द्र शर्मा	ए–136, एल्फा–1, ग्रेटर नोएडा–201310	9213999744	कार्यकारी सदस्य
9.	श्रीमती नीलम श्रीवास्तव	एम–126, सै0–25, नोएडा	8800439949	कार्यकारी सदस्य
10.	श्री सी0 एस0 भोगल	सी–2/103, सै0–36, नोएडा	9811026745	कार्यकारी सदस्य
11.	श्री मांगेराम भारद्वाज	ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा	9999232019	कार्यकारी सदस्य
12.	डॉ0 अंकित अवाना	ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा	9871775563	कार्यकारी सदस्य
13.	श्री अजय कुमार शर्मा	ए–447, सै0–47, नोएडा	9911220088	कार्यकारी सदस्य
14.	श्री देवेन्द्र सिंह अवाना	सामने C-4/106, सैक्टर–31, नोएडा	9811602397	आजीवन सदस्य
15.	श्री सूरज भान शर्मा	ए–141, सै0–20, नोएडा	8527132634	आजीवन सदस्य
16.	श्री विनोद शर्मा	ए–19, सै0–22, नोएडा	9891117721	आजीवन सदस्य
17.	श्री अश्विनी कुमार भारद्वाज	बी–365, सै0–92, नोएडा–201305	9999533891	आजीवन सदस्य
18.	डॉ0 मनोज कुमार पटैरया	D–59 भूमितल(G.F.), साकेत, नई दिल्ली 110077	9868114548	आजीवन सदस्य
19.	श्री राजेन्द्र प्रसाद गुप्ता	सी–154, सै0–100, नोएडा	9810464009	आजीवन सदस्य
20.	श्री राधेश्याम शर्मा	ए–55, सै0–27, नोएडा	9999930102	आजीवन सदस्य
21.	श्री भीम सिंह	मोती मैमोरियल, दुर्गा पार्क, पो0–वसुन्धरा ग्राम–दल्लूपुरा, दिल्ली–110096	9810181724	आजीवन सदस्य
22.	श्रीमती कुसुम पटैरया	डी–11, सै0–36, नोएडा	9811201847	आजीवन सदस्य
23.	श्री ए.के. सक्सेना	एच–329, बीटा–2 ग्रेटर नोएडा	9540274589	आजीवन सदस्य

24.	श्री देवीचरन शर्मा	बी–109, सै0–22, नोएडा	9350859122	आजीवन सदस्य
25.	वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी	एच-129, सै0–41, नोएडा	9868943638	आजीवन सदस्य
26.	श्री वेदप्रकाश बंसल	ए-33, सै0–19, नोएडा	9350732724	आजीवन सदस्य
27.	श्री रघुनाथ प्रसाद शर्मा	जी–63, सै0–27, नोएडा	9899797090	आजीवन सदस्य
28.	श्री सुरेन्द्र कुमार ठक्कर	बी–69, सै0–52, नोएडा	9891445905	आजीवन सदस्य
29.	श्री लाल मोहन चौधरी	ए–390, सै0–47, नोएडा	9868851639	आजीवन सदस्य
30.	श्री अमर सिंह सेंगर	ए–162, सै0–20, नोएडा	9971885030	आजीवन सदस्य
31.	श्रीपाल अवाना	ए–286, सै0–47, नोएडा	9210638386	आजीवन सदस्य
32.	श्री यशपाल सिंह	बी–19, सै0–49, नोएडा	9810339398	आजीवन सदस्य
33.	श्रीमती मधु मालती	बी–69, सै0–52, नोएडा	9891707373	आजीवन सदस्य
34.	श्री विद्याराम अवाना	एच–7, सै0–27, नोएडा	9891960087	आजीवन सदस्य
35.	श्रीमती भारती चतुर्वेदी	बी–2/721, कैलाश धाम, ब्लाक नं0–14, सै0–50, नोएडा	9650990257	आजीवन सदस्य
36.	श्री शिवकुमार शर्मा	ए–100, सै0–33, नोएडा	9871636341	आजीवन सदस्य
37.	आचार्य योगेन्द्र पाण्डे	श्रीराम मन्दिर, सै0–36, नोएडा	9810479542	आजीवन सदस्य
38.	श्रीमती अर्चना शर्मा	कैलाश धाम अपार्टमेंट, ब्लॉक नं. 14, बी–1/520, सैक्टर–50, नोएडा	9968422229	आजीवन सदस्य
39.	श्रीपरमात्मा शरण बंसल	ए–83, सै.49, नोएडा	9810169329	आजीवन सदस्य
40.	श्रीमती सीमा चौबे	एफ–13, सै0–20, नोएडा	9811323076	आजीवन सदस्य
41.	श्री विपन कुमार	सी–3/149, सै0–36, नोएडा	9868139393	आजीवन सदस्य
42.	श्री नरेश चौहान	एफ–18, सै0–39, नोएडा	9555955599	आजीवन सदस्य
43.	श्री मामचंद	ए–406, सै0–47, नोएडा	8368890732	आजीवन सदस्य
44.	श्रीमती बबीता भारद्वाज	बी–365, सै0–92, नोएडा–201305	9999533891	आजीवन सदस्य
45.	श्री वेदप्रकाश शर्मा	ए–36, सै0–47, नोएडा	9821213055	आजीवन सदस्य
46.	श्री देवेन्द्र सिंह तोमर	ए–67, सै0–48, नोएडा	9891944556	आजीवन सदस्य
47.	श्री रणवीर सिंह	ग्राम–हजरतपुर वाजिदपुर, सैक्टर–63, नोएडा	9810634772	आजीवन सदस्य
48.	श्री ओमबीर सिंह राणा	बी–28, सैक्टर 44, नोएडा	8178413463	आजीवन सदस्य

49.	श्री जगतसिंह अम्बावत	ए–279, सैक्टर–31, नोएडा	9810260171	आजीवन सदस्य
50.	श्रीमती नीलम सिंह	ए–26, सैक्टर–53, नोएडा	**9891113613**	आजीवन सदस्य
51.	श्री लव कुमार बंसल	299, सैक्टर–28, नोएडा	9871949140	आजीवन सदस्य
52.	श्रीमती उत्तरा गुप्ता	402, टॉवर 22, लोटस **Bouluard,** सै0–100, नोएडा	8826804422	आजीवन सदस्य

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली से बाहर के सदस्य

52.	पं0 डॉ0 लक्ष्मी नारायण	60, मातेश्वरी वार्ड नं0 11, नौगाँव, (छतरपुर) म0प्र0	9893772149	उपाध्यक्ष
53.	श्री कृष्ण कुमार मिश्र	12/250, कोटेश्वरनगर पो0 रविशंकर यूनिवर्सिटी, **(R.S.U.)** जिला–रायपुर–492010	9406379229	कार्यकारी सदस्य
54.	डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद चतुर्वेदी	1इ, लक्ष्मी रोड, डालनवाला, देहरादून	09411714660	आजीवन सदस्य
55.	श्री देवेन्द्र कुमार रावत	266, वार्ड नं0 7, स्नेहलनगर, वर्धा (महाराष्ट्र)	9423645351	आजीवन सदस्य
56.	श्री भगवान दास पाठक	फ्लैट नं0 302,तीसरी माला बी–बिल्डिंग, सुमन सूरज सोसाइटी, मोटा बराछा, सूरत (गुजरात)–394001	6352673969	आजीवन सदस्य
57.	श्री रविशंकर चतुर्वेदी	**904, D-13, AWHO Sandeep Vihar, Seegehalli Kadugodi,** बंगलौर–560067	9945169080	आजीवन सदस्य
58.	श्री वी0 जे0 चौधरी	बालीभगत रोड, बक्सीबाजार, कटक (उड़ीसा) 753001	9090438678	आजीवन सदस्य
59.	श्रीनरेन्द्र कुमार चाचान	65–ए, लखीमीपाथ, गुवाहाटी–781028	9435553023	आजीवन सदस्य
60.	श्री सतीश कुमार त्रिपाठी	5/40, कृष्ण इन्क्लेव, नंदनपुरा झाँसी – 284001	9450311243	आजीवन सदस्य

रामलला की प्राण–प्रतिष्ठा

अयोध्या में नव निर्मित भव्य मंदिर में रामलला की प्राण–प्रतिष्ठा 22 जनवरी, 2024 को हुई तो सदियों का संघर्ष भी फलीभूत हुआ। राम मंदिर का सपना यूँ ही साकार नहीं हुआ है, इसके पीछे एक सुदीर्घ संघर्ष यात्रा है। रामलला के दरबार में हाजिरी लगाने वाले दर्शनार्थी भी इस संघर्ष की दास्तां से रूबरू हो रहे हैं, क्योंकि ट्रस्ट ने राम मंदिर की दीवारों पर इस पूरी यात्रा को दर्शाया है। इन पर वर्ष 1528 से लेकर 22 जनवरी, 2024 तक की पूरी यात्रा को अंकित किया गया है।

वंशी पहाड़पुर के लाल पत्थरों पर अंग्रेजी व हिंदी भाषा में पूरी कहानी अंकित की गई है। शुरुआत में बताया गया है कि प्राचीन काल में इस स्थान पर सबसे पहले मंदिर का निर्माण महाराजा विक्रमादित्य ने ऋषि लोमश के निर्देश के तहत और कामधेनु की उपस्थिति में करवाया था। इसके बाद वर्ष 1528 की कहानी शुरू होती है। इसमें लिखा है कि 1528 ई0 में एक विदेशी आक्रमणकारी की सेना ने इस मंदिर को ध्वस्त कर दिया और इस स्थान पर तीन गुंबदों वाली एक संरचना का निर्माण किया, जो बाबरी मस्जिद के नाम से प्रसिद्ध हुई। इसके बाद उन इतिहासकारों का जिक्र है, जिन्होंने अयोध्या व राम मंदिर के अस्तित्व को माना है। इनमें ब्रिटिश अधिकारी पी. कार्नेगी व भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के महानिदेशक अलेक्जेंडर कनिंघम का भी जिक्र है। इसके बाद निर्मोही अखाड़ा के महंत रघुबर दास की ओर से मंदिर को लेकर वर्ष 1853 में किए गए पहले मुकदमे का जिक्र है। यहाँ 22 दिसंबर 1949 को रामलला के प्राकट्य की भी कहानी अंकित की गई है। इसके बाद के माहौल को भी बताया गया है। सितंबर वर्ष 1990 में अयोध्या में श्रीराम मंदिर के निर्माण के आह्वान के लिए समर्थन जुटाने के लिए भाजपा के वरिष्ठ नेता लालकृष्ण आडवाणी ने गुजरात के सोमनाथ मंदिर से अयोध्या तक रथयात्रा निकाली थी, इसकी भी पूरी कहानी लिखी है।

- दीवारों पर वकील गोपाल सिंह विशारद, परमहंस रामचंद्र दास व निर्मोही अखाड़ा की ओर से किए गए मुकदमे की लंबी कहानी है। देवकी नंदन अग्रवाल ने रामलला के सखा के रूप में जो मुकदमा दायर किया था, वह भी लिखा है।
- 6 दिसंबर वर्ष 1992 की घटना, वर्ष 2003 में हुई खोदाई व सर्वेक्षण में दसवीं शताब्दी के उत्तर भारतीय शैली के विष्णु मंदिर के अवशेष मिलने की भी कहानी है।
- 20 सितंबर, 2010 को अयोध्या मामले में आए अदालत के निर्णय के बारे में बताया गया है। इसके बाद 9 नवंबर 2019 को मंदिर के हक में आए निर्णय को भी बताया गया है। निर्णय के बाद मंदिर के भूमि–पूजन से लेकर प्राण–प्रतिष्ठा तक की कहानी अंकित की गई है।

पाठकों के विचार

सराहनीय है स्मारिका का अनवरत प्रकाशन

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका का वार्षिक अंक 31 प्राप्त हुआ। यह समिति विगत 30 वर्षों से भी अधिक समय से श्रीरामचरितमानस का अखिल भारतीय स्तर पर प्रचार–प्रसार कर रही है। स्मारिका में अत्यंत सारगर्भित एवं भक्तिभाव से परिपूर्ण लेखों का संग्रह है। इसका प्रति वर्ष प्रकाशन सराहनीय है। इस वर्ष प्रभु श्रीराम का प्रथम जन्ममहोत्सव अयोध्या में नवनिर्मित भव्य मंदिर में आयोजित हुआ और नोएडा में इस समिति ने पूर्व वर्षों की भाँति हर्षोल्लास के साथ श्रीराम जन्ममहोत्सव आयोजित किया। स्मारिका के प्रकाशन में संलग्न सभी महानुभावों को मेरा करबद्ध प्रणाम स्वीकार हो। हम आपके आभारी हैं कि आप हमें प्रति वर्ष स्मारिका भेज रहे हैं।

श्री सोमदत्त गुप्ता, दिल्ली, फोनः 9313787428

मानस–दर्पण स्वरूप है स्मारिका

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका का वार्षिक अंक 31 प्राप्त हुआ। पहली बार मैंने स्मारिका का अवलोकन किया। मेरे विचार से यह श्रीरामचरितमानस के दर्पण के स्वरूप में है, जिसमें भक्ति–ज्ञान–वैराग्य से परिपूर्ण लेख प्रकाशित हैं। इसके साथ ही कुछ लोगों के मन में कुछ प्रसंगों के संदर्भ में भ्रम व्याप्त है, उसे भी दूर करने हेतु इसमें लेख प्रकाशित होते रहते हैं। इस संदर्भ में जो 'ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी' लेख में सटीक व्याख्या प्रस्तुत की गई है। भगवत्कृपा से ही ऐसे प्रकाशन संभव हैं। मैं स्मारिका के सम्पादक मंडल को हार्दिक बधाई देते हुए ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि यह सत्संग सरिता अनवरत प्रवाहित होती रहे।

पं0 श्रवण कुमार पाण्डेय, झाँसी (उ0प्र0),
फोनः 9450073660

अमूल्य सत्संग है स्मारिका

मानव–जीवन में सत्संग का महत्वपूर्ण योगदान है। श्रीरामचरितमानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदासजी ने सत्संग की अपरमित महिमा का गान किया है, यथा –

मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।
सो जानब सतसंग प्रभाऊ। लोकहुँ बेद न आन उपाऊ।।(1/3/5–6)

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति–स्मारिका, 'वर्ष 31' उक्त सत्संग– चिन्तन –सरणि की शोभा से समुपेत है। स्मारिका का मुख्य पृष्ठ श्रीराम परमानन्द के दिव्य विग्रह से पाठक को भाव विभोर कर देता है। स्मारिका में सुचिन्तनपूर्ण 38 लेख अपने विचारोन्मेष से ज्ञान प्रकाश प्रदान में पूर्णतः सक्षम हैं। 'गुरु वसिष्ठ का निषादराज से भाव विभोरित मिलन' लेख कृति में उल्लिखित 'सब मम प्रिय सब मम उपजाए' (7/86/4) की सार्थकता को सम्पुष्ट करता है। 'मानस में जीवन मूल्यों की प्रासंगिकता' लेख महत्वपूर्ण एवं नित्यप्रति आचरणीय है। 'भरत सरिस को राम सनेही' लेख मानव मन को आत्मीयता प्रदान करता है एवं विश्वबन्धुत्व के लिए उत्प्रेरक है। 'ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी' (5/59/6) शीर्षक से लिखा गया लेख व्यर्थ के भ्रम निवारण को पर्याप्त है। मानस में नारी का कल्याण रूप, मानस में मर्यादा आदि लेख मानव जीवन को सुचारुता

से जीने के शोभन संविधान के परिचायक हैं। निष्कर्ष यह है कि यह स्मारिका वर्तमान समय की उथल–पुथल की विभीषिकाओं से मुक्त करने का जो सुचिन्तन प्रस्तुत करती है, वह शोभन चिन्तन समाज में समरसता, सौहार्द, शान्ति, सत्कर्म के प्रति निष्ठा, राष्ट्रभक्ति और शान्ति को संजोने में अपना श्रेष्ठ सत्संग रूप अमूल्य योगदान प्रदान करने में सक्षम है। यह पत्रिका एक ऐसा सत्संग है, जो मानव समाज का सर्वदृष्ट्या कल्याण करने में समर्थ है। इसके लिए प्रस्तुत स्मारिका के सम्पादक मण्डल एवं सभी सहयोगियों को हार्दिक साधुवाद एवं शुभकामनाएँ।

डॉ0 रामेश्वर प्रसाद गुप्त, सेवानिवृत्त प्राध्यापक (संस्कृत),
दतिया (म.प्र.), फोनः 9826249448

स्मारिका में प्रकाशित सभी लेख सारगर्भित

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका का वार्षिक अंक 31 सराहनीय है। इसमें 'ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी' पर लेख सारगर्भित है। मानस की कई चौपाइयों पर अविवेक पूर्ण टिप्पणी की जाती है, जैसे **''अधम जाति में बिद्या पाए। भयहुं यथा अहि दूध पिलाए।''** इस पर भी स्पष्टीकरण आए तो उत्तम होगा।

श्री राम जन्म सिंह, ग्राम/पोस्ट–दामा,
जिला–आजमगढ़ (उ.प्र.), फोनः 9839453851

सम्पादक मंडल को आत्मिक बधाई

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका के अगले अंक के अवलोकन की आकुलता वर्ष भर रहती है कि कब पाऊँ, कब पढ़ूँ। स्मारिका के अनवरत प्रकाशन हेतु सम्पादक मंडल को आत्मिक बधाई। इस लोकहित पुनीत कार्य के लिए 'मानस प्रेमी समुदाय' आपका सदा ऋणी रहेगा।

डॉ. राजेश तिवारी 'मक्खन'
झाँसी, फोनः 9451131195

सहयोग राशि भेजने वालों को साधुवाद

स्मारिका प्रकाशनार्थ हमें, इस समिति के सदस्यों के अतिरिक्त (बिलासपुर, छत्तीसगढ़) से श्री के.पी. गुप्ता, उत्तर प्रदेश से श्रीमती माया उपाध्याय (झाँसी) एवं श्री द्वारका प्रसाद वैद्य (झाँसी), दिल्ली से श्री अशोक कुमार वर्मा, गुवाहाटी (आसाम) से श्री नरेन्द्र कुमार चाचान एवं झारखण्ड से श्री अवध किशोर दूबे से सहयोग राशि प्राप्त हुई है। कुछ पाठकों से सहयोग राशि प्राप्त हुई है, किंतु उनसे सूचना प्राप्त न होने के कारण रसीद 'गुप्त दान' लिखकर जारी की गई है। हम सहयोग राशि भेजने वाले पाठकों को साधुवाद ज्ञापित करते हैं तथा आशान्वित हैं कि भविष्य में भी वे इस पुनीत कार्य हेतु आर्थिक सहयोग प्रदान करके हमारा उत्साहवर्धन करते रहेंगे।

उल्लेखनीय है कि समिति के पेटीएम का आईकान स्मारिका (वर्ष 32) के पृष्ठ 09 पर प्रकाशित किया गया है। सहयोग राशि भेजने वालों से निवेदन है कि वे इसका उपयोग करते हुए सहयोग राशि भेजकर 9899004263 पर एस.एम.एस करने का अनुग्रह करें, ताकि उनके नाम से रसीद जारी की जा सके।

श्रीराम जन्ममहोत्सव की झलकियाँ

कथा व्यासः पं. दीनानाथ शुक्ला

भौतिक प्रगति के इस युग में दिन–प्रतिदिन नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। नई पीढ़ी में सुसंस्कार जाग्रत करने के उद्देश्य से भगवान के अवतारों एवं महापुरुषों के जन्म दिन पर महोत्सव आयोजित करना तथा उनसे शिक्षा ग्रहण करके अपना आचरण सुधारना परम आवश्यक है। इसी उद्देश्य से श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति विगत 31 वर्षों से श्रीराम जन्ममहोत्सव आयोजित करती आ रही है। इसी शृंखला में 32वाँ महोत्सव बुधवार दिनांक 17 अप्रैल 2024 को महाराजा अग्रसेन भवन, सैक्टर–33, नोएडा में आयोजित हुआ। इसका शुभारंभ समिति के अध्यक्ष पं0 दिनेशचंद्र शर्मा द्वारा प्रातः 09:30 बजे श्रीगणेश–पूजन से हुआ। तत्पश्चात् श्रीहनुमान चालीसा पाठ एवं संकीर्तन से आरंभ हुआ। इस पावन वेला में समिति की वार्षिक स्मारिका के 31वें अंक का विमोचन नोएडा के पूर्व सी.ई.ओ. श्री विश्वनाथनजी एवं पूर्व आई.ए.एस. अधिकारी श्री गणेश शंकर त्रिपाठीजी द्वारा सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर प्रयागराज से पधारे कथा व्यास पं0 दीनानाथ शुक्ला ने श्रोताओं को श्रीरामकथामृत पान कराके भाव विभोर कर दिया।

श्रीरामकथा के कुछ रस बिंदु इस प्रकार से हैंः–

अखिल ब्रह्माण्ड नायक भगवान श्रीराम के अवतार (जन्म) का मुख्य कारण उनके भक्त हैं। राक्षसों का संहार तो उनकी इच्छा मात्र से संभव है। इस धराधाम पर आकर उन्होंने अपने भक्तों को परमानंद दिया और धर्मनिष्ठ होकर अपने स्वयं के आदर्श प्रस्तुत करते हुए एक ऐसे समाज का निर्माण किया, जिसमें सभी सुखी थे। इस हेतु उन्होंने समाज की बिखरी हुई शक्तियों को संगठित कर अजेय रावण पर विजय प्राप्त करके समाज के लिए उदाहरण प्रस्तुत किया कि धर्मनिष्ठ होकर असंभव को भी संभव किया जा सकता है।

श्रीराम जन्म की कथा सुनाते हुए कथा व्यास ने मध्याह्न वेला में **'भए प्रगट कृपाला दीन दयाला कौसल्या हितकारी' (1/192/छंद)** का गायन किया। तत्पश्चात् बधाई गीत गाए गए, जिस पर कई श्रोताओं ने भावविभोर होकर नृत्य किया और पुष्प वर्षा करते हुए श्रीराम जन्ममहोत्सव का आनंद लिया।

भगवान का अवतार मुख्य रूप से भक्तों को अपने सान्निध्य से सुख प्रदान करता है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार भक्त चार प्रकार के होते हैं–आर्त, अर्थार्थी, जिज्ञासु एवं

ज्ञानी, इनमें ज्ञानी प्रभु को विशेष प्रिय हैं, यथा–

राम भगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारिउ अनघ उदारा।।
चहू चतुर कहुँ नाम अधारा। ग्यानी प्रभुहि बिसेषि पिआरा।।
(1/22/6–7)

गीताजी में भी यही भाव व्यक्त किया गया है, यथा–

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ।।
तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते ।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः।। (7/16–17)

श्रीरामचरितमानस में ऐसे चार भक्तों का वर्णन आया है, जो सभी समान रूप से श्रीरामजी को प्रिय हैं और श्रीरामजी उन्हें प्रिय हैं। वे चारों भक्त हैं–(1) जिन्हें श्रीरामजी प्राणप्रिय समझते हैं, जैसे भरतजी (2) जिनको श्रीरामजी प्राणप्रिय हैं, जैसे निषादराज (3) जो रामजी को अतिशय प्रिय हैं–जानकीजी और (4) जो श्रीरामजी को परमप्रिय हैं–श्रीहनुमानजी। मानस में इन चारों भक्तों के संदर्भ में विवरण इस प्रकार से मिलता है–

(1) माता कैकेयी से 14 वर्षों के वनवास की बात सुनकर प्रसन्नता पूर्वक श्रीरामजी उनसे कहते हैं कि आज विधाता मुझ पर सब प्रकार से सम्मुख हैं अर्थात् प्रसन्न हैं, क्योंकि मेरे प्राणप्रिय भरत को राज्य मिलेगा, यथा–

भरतु प्रानप्रिय पावहिं राजू। बिधि सब बिधि मोहि सनमुख आजू।। (2/42/1)

(2) भरतजी श्रीरामजी को मनाने चित्रकूट जाते हैं। उनके साथ में रथ, हाथी, घोड़े और सेना की एक टुकड़ी को देखकर निषादराज को संदेह हो जाता है कि भरत श्रीरामजी को वन में अकेला समझकर उन्हें मारकर अकंटक राज करना चाहते हैं, अतः उन्होंने अपने प्राणप्रिय श्रीरामजी के लिए अपने प्राणों की बाजी लगाकर अपने सैनिक तैयार कर लिए और भरतजी से युद्ध के लिए तैयार होकर कहता है–

स्वामि काज करिहउँ रन रारी। जस धवलिहउँ भुवन दस चारी।।
तजउँ प्रान रघुनाथ निहोरें । दुहूँ हाथ मुद मोदक मोरें।।
(2/190/5–6)

(3) श्रीराम–नाम वंदना प्रकरण के प्रथम दोहे के पूर्व सीताजी को श्रीरामजी को अतिशय प्रिय शब्द से संबोधित किया है, यथा–

जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की।। (1/18/7)

(4) राज्याभिषेक के पश्चात् एक बार श्रीरामजी सभी भाइयों एवं श्रीहनुमानजी के साथ उपवन जाते हैं। उस समय श्रीहनुमानजी को श्रीराम के परम प्रिय शब्द से संबोधित किया है,

यथा–

भ्रातन्ह सहित रामु एक बारा। संग परम प्रिय पवनकुमारा।।
सुंदर उपबन देखन गए। सब तरु कुसुमित पल्लव नए।। (7/32/1–2)

इस अवसर पर पूर्व आई.ए.एस. अधिकारी श्री गणेश शंकर त्रिपाठी ने बताया कि यदि हम **'रामराज्य'** जैसा सुशासन चाहते हैं तो हमें उनके पद चिह्नों पर चलना होगा। शासक एवं प्रजा दोनों को ही अपने–अपने कर्तव्यों का पालन करना होगा। श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति द्वारा इस पावनवेला में विमोचित स्मारिका में उच्चस्तरीय शोध लेख हैं जो हमें सन्मार्ग की ओर प्रेरित करते हैं। समिति के महासचिव डॉ. भगवान दास पटैरया ने **'स्मारिका'** का संक्षिप्त विवरण देते हुए श्रोताओं से उसकी प्रतियाँ लेने का अनुरोध किया।

श्रीराम जन्ममहोत्सव के कार्यक्रम का संचालन पत्रकार श्री राजेश बैरागी ने किया। समिति उन्हें हार्दिक साधुवाद ज्ञापित करती है। इस कार्यक्रम के सफल आयोजन में अग्रवाल मित्र मंडल (पंजीकृत), नोएडा का हमें भरपूर सहयोग प्राप्त हुआ। समिति हार्दिक साधुवाद ज्ञापित करती है। श्रीरामायणजी तथा भगवत् विग्रह की आरती के पश्चात् भोजन प्रसाद के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

शोक समाचार

हमें अत्यंत दुख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि इस समिति के शासी निकाय (Governing Body) के कार्यकारी सदस्य श्री सुभाष मित्तल गुरुवार आश्विन शुक्ल सप्तमी संवत् 2081 तदनुसार 10 अक्तूबर 2024 को चिर निद्रा में लीन हो गए, वे 79 वर्ष के थे। इस समिति की ओर से हम उनकी आत्मा की शांति के लिए तथा उनके परिजनों, संबंधियों, मित्रों आदि सभी को इस दुख की घड़ी में धैर्य प्रदान करने हेतु परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं।

सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।। (1/8/2)

सभी प्रकार (चौरासी लाख और चार प्रकार–स्वेदज अर्थात् पसीने (नमी) से उत्पन्न होने वाले, अण्डज अर्थात् जिनका जन्म अण्डे से होता है, उद्भिज अर्थात् जो जमीन फाड़कर निकलते हैं जैसे पेड़–पौधे तथा जरायुज जैसे मनुष्य और पशु) के जीवों से भरे हुए इस जगत् को सीताराममय जानकर मैं (तुलसीदास) दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ।

तुलसी जयन्ती समारोह

कथा व्यासः पं. अरविन्द तिवारी

मानव जीवन का परम उद्देश्य सनातन धर्म के सभी शास्त्रों में वर्णित है। युग विशेष के अनुसार साधनों में भिन्नता होती है। कलियुग में तो केवल ईश्वर के नाम का ही सहारा है। ईश्वर के नाम की महिमा तथा कल्याणकारी मार्ग का दिग्दर्शन पूज्यपाद गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा रचित महाकाव्य श्रीरामचरितमानस में सभी के लिए उपलब्ध है। ऐसे महान रचनाकार, भक्त कवि, समाज सुधारक, लोकनायक कवि और भविष्य दृष्टा गोस्वामी तुलसीदास की स्मृति में तुलसी जयंती समारोह आयोजित करने की परंपरा पूरे देश में है। कई संस्थाएँ इसे प्रति वर्ष आयोजित करती हैं। श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति और गीता रामायण समिति के संयुक्त तत्वावधान में नवाँ तुलसी जयंती समारोह श्रावण शुक्ला सप्तमी, विक्रमी संवत् 2081 तदनुसार रविवार 11 अगस्त 2024 को श्रीराम मंदिर, सी–ब्लॉक, सैक्टर–36, नोएडा में आयोजित हुआ। इस अवसर पर कथा व्यास पं. अरविन्द तिवारी ने गोस्वामी तुलसीदासजी के जीवन पर विस्तार से बताते हुए श्रीरामचरितमानस के कुछ प्रसंगों का श्रवण कराया। उनकी ओजस्वी मधुर वाणी से श्रोताओं ने मंत्रमुग्ध होकर कथा श्रवण की। इस कथा के कुछ संक्षिप्त अंश पाठकों को लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत हैं–

परमात्मा जिस जीव से जनकल्याण करवाना चाहते हैं, उसका बाल्यकाल अत्यंत कठिनाई भरा होता है, ऐसा सामान्यतया देखने में आया है। बड़े–बड़े समाजसेवियों और जन कल्याण करने वाले महापुरुषों को अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ा, इतिहास इसका साक्षी है। गोस्वामी तुलसीदासजी को भी अनेक संकटों का सामना करना पड़ा। इनका जन्म बुंदेलखण्ड क्षेत्र में बाँदा जिले के राजापुर ग्राम में विक्रमी संवत 1554 की श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन हुआ था।

अभुक्त मूल नक्षत्र में पैदा होने के कारण अनिष्ट की अशंका से इनके पिता आत्माराम दूबे इनको यमुना नदी में प्रवाहित करना चाहते थे, पर इनकी माता हुलसी ने विरोध किया। माँ का हृदय बड़ा कोमल होता है। वह कभी भी अपने बच्चे का अनिष्ट नहीं कर सकती है, भले ही उसका अनिष्ट हो जाए। यह विचार करके माता हुलसी ने अपनी सेविका चुनियाँ को बच्चे को सौंप दिया और इसके तत्काल बाद ही उनका देहान्त हो गया। चुनियाँ का भी 4 साल में ही देहान्त हो गया। अब बालक रामबोला (जन्म लेते ही उन्होंने **'राम'** शब्द का

उच्चारण किया था, इसलिए उनका नाम रामबोला हो गया था) अनाथ हो गया। जिस घर वे भूख शान्त करने के लिए जाते, लोग किवाड़ बंद कर लेते, क्योंकि इसके कारण उन्हें अनिष्ट की चिन्ता रहती थी। दर–दर भटकते 'रामबोला' को अब माता पार्वती ने सहारा दिया और फिर कुछ समय कष्ट भोगने के पश्चात् ईश्वरीय प्रेरणा से स्वामी नरहरिदास (श्री नरहर्यानंदजी) ने इन्हें खोज लिया और काशी लाकर उनका उपनयन संस्कार कराया तथा सनातन धर्म के शास्त्रों की शिक्षा दी। इनका 'तुलसीदास' के रूप में नामकरण हुआ। इन्हें सूकर क्षेत्र में श्रीरामचरितमानस श्रवण कराया। इसका प्रमाण श्रीरामचरितमानस में इस प्रकार मिलता है–

मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकरखेत।
समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेउँ अचेत।। (1/30क)

गुरु आज्ञा ले काशी से अपनी जन्मभूमि राजापुर आए, जहाँ उनका विवाह रत्नावली से हुआ और जब वे एक दिन बिना बताए अपने भाई के साथ माइके चली गईं, तब तुलसीदास रात्रि के समय ही विभिन्न बाधाओं को पार करते हुए अपनी ससुराल में रत्नावली के कक्ष में पहुँच गए। यह देखकर रत्नावली ने कहा–

'मेरे हाड़–मांस के शरीर में जितनी तुम्हारी आसक्ति है, यदि उससे आधी भी भगवान में होती तो तुम्हारा बेड़ा पार हो गया होता'।

तुलसीदासजी को ये वचन लग गए और वे सीधे प्रयागराज पहुँचे और साधुवेश धारण किया। उन्होंने तीर्थाटन किया और चित्रकूट में श्रीहनुमानजी की कृपा से श्रीराम के दर्शन हुए। तत्पश्चात् वे अयोध्या गए और वहाँ पर शिवजी की प्रेरणा से श्रीरामचरितमानस का लेखन प्रारंभ किया। इसका उल्लेख मानस में इस प्रकार किया गया है–

संबत सोरह सै एकतीसा। करउँ कथा हरि पद धरि सीसा।।
नौमी भौम बार मधुमासा। अवधपुरीं यह चरित प्रकासा।। (1/34/4–5)

दो वर्ष 7 माह और 26 दिन में संवत् 1633 के मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष पंचमी (राम विवाह के दिन) यह रचना पूर्ण हुई।

श्रीरामचरितमानस से **'श्रीरामजन्म'** की कथा श्रवण कराके, बधाई गीत गायन किए, जिस पर श्रोता मंत्रमुग्ध होकर नृत्य करने लगे। भक्ति गीत गायन के साथ ही कथा व्यास ने कथा से विश्राम लिया।

इस कार्यक्रम में 'मदर टेरेसा सीनियर सैकेण्ड्री स्कूल, गिझौड़ तथा सर्वहितकारी शिक्षा निकेतन, निठारी के छात्रों ने गोस्वामी तुलसीदासजी के जीवन चरित्र पर प्रकाश डाला और श्रीरामचरितमानस की चौपाइयों का सस्वर गान किया। छात्रों को तथा उनके प्रधानाचार्यों

को श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष पं0 दिनेशचंद्र शर्मा तथा गीता रामायण समिति के महासचिव श्री सी0 एस0 भोगल द्वारा पुरस्कार प्रदान किए गए। इस कार्य का संचालन श्री लीलूराम वर्मा संयुक्त सचिव ने किया। तत्पश्चात् महासचिव डॉ0 भगवान दास पटैरया ने कथा व्यास एवं श्रोताओं का आभार व्यक्त किया। श्रीरामायणजी तथा भगवत् विग्रह की आरती के बाद भोजन प्रसाद के बाद कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

बिनु सतसंग बिबेक न होई । राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।। (1/3/7)

सत्संग के बिना विवेक नहीं होता और श्रीरामजी की कृपा के बिना वह सत्संग सहज में मिलता नहीं।

बिधि बस सुजन कुसंगत परहीं। फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।। (1/3/9)

दैवयोग से यदि कभी सज्जन कुसंगति में पड़ जाते हैं, तो वे वहाँ भी साँप की मणि के समान अपने गुणों का ही अनुसरण करते हैं (अर्थात् जिस प्रकार साँप का संसर्ग पाकर भी मणि उसके विष को ग्रहण नहीं करती तथा अपने सहज गुण प्रकाश को नहीं छोड़ती, उसी प्रकार साधु पुरुष दुष्टों के संग में रहकर भी दूसरों को प्रकाश (सद्गुण) ही देते हैं, दुष्टों का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता)।

राम भगति भूषित जियँ जानी। सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी।। (1/9/7)

सज्जनगण इस कथा (रामचरितमानस) को अपने जी में श्रीरामजी की भक्ति से भूषित जानकर सुन्दर वाणी से सराहना करते हुए सुनेंगे।

महाबीर बिनवउँ हनुमाना। राम जासु जस आप बखाना।। (1/17/10)

मैं (तुलसीदास) महावीर श्रीहनुमानजी की विनती करता हूँ, जिनके यश का श्रीरामचन्द्रजी ने स्वयं (अपने श्रीमुख से) वर्णन किया है।

जपहिं नामु जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी।। (1/22/5)

आर्त भक्त (संकट से घबराए हुए) नाम जप (श्रीरामजी के नाम का जप) करते हैं तो उनके बड़े भारी बुरे–बुरे संकट मिट जाते हैं और वे सुखी हो जाते हैं।

राजा रामु अवध रजधानी। गावत गुन सुर मुनि बर बानी।। (1/25/6)

राम राजा हुए, अवध उनकी राजधानी हुई, देवता और मुनि सुन्दर वाणी से उनके गुण गाते हैं।

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।। (1/26/6)

श्री हनुमानजी ने पवित्र नाम (श्रीराम का नाम) का स्मरण करके श्रीरामजी को अपने वश में कर रखा है।

भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ। नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ।। (1/28/1)

अच्छे भाव (प्रेम) से, बुरे भाव (वैर) से, क्रोध या आलस्य से, किसी तरह से भी नाम (श्रीराम का नाम) जपने से दसों दिशाओं में कल्याण होता है।

भगवद्गुण की स्मृति में डूबे हुए दो संत

पं. दिनेश्वर मिश्र, कानपुर (उ.प्र.), फोनः 7881102951

लंका में सीतान्वेषण में संलग्न जब आंजनेय ने विभीषण को भगवान राम की सारी कथा सुनाकर अपना नाम बताया, तो सुनते ही दोनों के शरीर पुलकित हो गए और श्रीराम के गुणों का स्मरण कर दोनों के मन मग्न हो गए। इसके पूर्व आंजनेय सारी रात लंका के प्रत्येक भवन में प्रविष्ट होकर मैथिली का अन्वेषण करते रहे, किन्तु वे इसमें असफल रहे। सबसे अन्त में वे लंकेश्वर के महल में प्रविष्ट हुए, पर वहाँ भी उन्हें निराशा ही हाथ लगी, यथा–

सयन किएँ देखा कपि तेही। मंदिर महुँ न दीखि बैदेही।। (5/5/7)

रावण के भवन से निकलते ही उन्हें एक ऐसा धाम दिखाई दिया, जिसके पास हरिमंदिर भी बना हुआ था। मंदिर के ऊपर प्रभु के आयुधों के चिह्न बने हुए थे। मंदिर के आसपास की भूमि में रामप्रिया तुलसी के पौधे भी लगे हुए थे। भक्तराज, लंका में इस अद्भुत विरोधाभास को देखकर चकित रह गए। वे यह कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि इस भोग भूमि में किसी सन्त अथवा भक्त का निवास हो सकता है। मायावी राक्षसों की वेश बदलने की कला से परिचित होने के नाते वे सहज ही विश्वास करने की मुद्रा में नहीं थे। जो लंकाधिपति सारे विश्व से हरिभक्ति और धर्म को निर्मूल कर देना चाहता हो, वह अपने ही महल के बगल में हरि मंदिर का निर्माण होने दे सकता है, इसकी स्वप्न में भी आशा नहीं की जा सकती थी। महामोह के इस विशाल नगर में विचारहीन होकर कोई कार्य नहीं किया जाना चाहिए। इसीलिए सारी स्थिति पर वह गंभीरता पूर्वक विचार करते हैं, किन्तु किसी भी निष्कर्ष पर पहुँच पाना उनके लिए संभव नहीं हो पा रहा था। वे विचार कर रहे थे–

लंका निसिचर निकर निवासा। इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा।।
मन महुँ तरक करैं कपि लागा। तेहीं समय बिभीषनु जागा।। (5/6/1–2)

तर्क और विचार किसी निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए उचित माध्यम हो सकते हैं, किन्तु उनकी अपनी सीमाएँ हैं। ज्ञान की उपलब्धि में विचार का स्थान सर्वोत्कृष्ट है, किन्तु भक्ति की उपलब्धि में तर्क और विचार मुख्य साधन नहीं हैं। भक्ति की प्राप्ति का मुख्य साधन सन्त अथवा भगवान की कृपा है। नारदभक्तिसूत्र और श्रीरामचरितमानस में इस विषय पर सर्वथा एक ही प्रकार के विचार प्रकट किए गए हैं। भक्तिसूत्र में मुख्यता सन्त कृपा को ही भक्ति प्राप्ति का साधन बताया है और यह कहा गया है कि यह भक्ति संत कृपा के साथ–साथ लेशमात्र भगवत्कृपा से भी प्राप्त हो सकती है, यथा–

मुख्तस्तु महत्कृप्यैव भगवत्कृपा लेशाद्वा।

रामचरितमानस में भी स्वयं प्रभु, श्रीलक्ष्मण को उपदेश देते हुए संत कृपा को ही भक्ति की उपलब्धि का हेतु बताते हैं–

भगति तात अनुपम सुखमूला। मिलइ जो संत होइँ अनुकूला।। (3/16/4)

भक्त इसे प्रभु कृपा का परिणाम मानते हैं। काकभुशुण्डिजी प्रभु से अविरल भक्ति की याचना करते हुए यही कहते हैं–

अबिरल भगति बिसुद्ध तव श्रुति पुरान जो गाव।
जेहि खोजत जोगीस मुनि प्रभु प्रसाद कोउ पाव।। (7/84क)

श्रीकाकभुशुण्डिजी–गरुड़ संवाद में भी भगवत्कृपा से संत–मिलन का उल्लेख है। सम्पूर्ण श्रीरामकथा श्रवण करने के पश्चात् और मोह जनित अज्ञान नष्ट हो जाने पर श्रीगरुड़जी कहते हैं कि जिस पर प्रभु श्रीराम की कृपादृष्टि हो जाती है, उसे ही विशुद्ध संत से साक्षात्कार हो पाता है, यथा–

निगमागम पुरान मत एहा। कहहिं सिद्ध मुनि नहिं संदेहा।।
संत बिशुद्ध मिलहिं परि तेही। चितवहिं राम कृपा करि जेही।।
(7/69/6–7)

मोहनिशा में सोये हुए राक्षसों के मध्य सारी रात्रि जागरण करने वाले आंजनेय भी साधना, तर्क और विचार के माध्यम से भक्ति को भले ही नहीं खोज पाए, लेकिन इनके गंभीर सार्थक प्रयास से वे भगवत्कृपा के अधिकारी तो बन ही गए और अन्त में **'मिलइ जो संत होइ अनुकूला।'** का सिद्धान्त काम आया। जिस समय आंजनेय के अन्तःकरण में इस प्रकार के तर्क–वितर्क उठ रहे थे, उसी समय विभीषण जाग उठे। उठते ही उन्होंने प्रभु के मंगलमय राम नाम का स्मरण किया। उस नाम–स्मरण में प्रेम का ऐसा प्रवाह था कि आंजनेय को तत्काल यह विश्वास हो गया कि ये कोई महान संत हैं। तुरन्त वे तब इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यदि यह संत मुझसे परिचय न करना चाहें तो भी मैं इनसे हठपूर्वक परिचय प्राप्त करूँगा, क्योंकि संत से कभी कार्य में हानि नहीं होती–

राम राम तेहि सुमिरन कीन्हा। हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा।।
एहि सन हठ करिहउँ पहिचानी। साधु ते होइ न कारज हानी।।
(5/6/3–4)

पवननंदन और विभीषण का संबंध सर्वथा अनोखा है। दोनों ही एक–दूसरे को परम–संत मानकर प्रगाढ़ श्रद्धा का भाव रखते हैं। हनुमानजी को लगता है, अनुकूल देश और काल में धर्म का निर्वाह सरल है। जिस देश और काल में मैं संत की कल्पना भी नहीं कर पा रहा था, वहाँ रहकर जिसने भगवत्प्रेम का निर्वाह किया है, उससे बढ़कर और महान संत कौन होगा? मैं इन्हीं का आश्रय लेकर भक्तिदेवी सीता का साक्षात्कार कर पाऊँगा। दूसरी ओर विभीषण का जिस समय आंजनेय से मिलन हुआ, उन्हें ऐसा लगा कि आज सच्चे भगवद्भक्त का साक्षात्कार हुआ। जो महान संत अनेक विघ्न–बाधाओं को पार करता हुआ विशाल समुद्र को लाँघकर माँ मैथिली तक प्रभु का संदेश पहुँचाने के लिए आया हुआ है, उससे बढ़कर संत हो ही कौन सकता है? एक क्षण के लिए तो उन्हें ऐसा भी प्रतीत हुआ कि कहीं साक्षात् प्रभु ही तो स्वयं को छिपाकर कृपा करने के लिए नहीं आ गए हैं।

श्रीरामचरितमानस के अनुसार विभीषणजी इस प्रकार के प्रश्न करते हैं विप्ररूपधारी श्रीहनुमानजी से–

की तुम्ह हरि दासन्ह महँ कोई। मोरें हृदय प्रीति अति होई।।
की तुम्ह रामु दीन अनुरागी। आयहु मोहि करन बड़भागी।।

(5/6/7–8)

यह साम्य और भी अधिक घनीभूत रूप में तब सामने आता है, जब विभीषण और आंजनेय दोनों के मुख से **'राम'** शब्द का उच्चारण होता है। दोनों नामाश्रयी हैं। एक में दैन्यभाव है तो दूसरे में विश्वास। विभीषण का दैन्य उनके शब्दों में फूट पड़ता है तो आंजनेय की आस्था उनकी वाणी से विनिःसृत होती है। दैन्य और विश्वास के इस मिलन से एक ऐसे अनुपम रस की सृष्टि हुई, जिसमें दोनों आनन्दित हो गए। आंजनेय की वाणी ने विभीषण के अन्तःकरण में यह भरोसा उत्पन्न कर दिया कि वे प्रभु को पा सकते हैं। विभीषण के द्वारा यह पूछे जाने पर कि क्या प्रभु मुझ पर कृपा करेंगे, आंजनेय ने गद्‌गद कंठ से कहा, मुझ जैसा चंचल और हीन बन्दर, जिसका प्रातःकाल नाम ले लेने मात्र से भोजन प्राप्त नहीं होता, यदि वह प्रभु कृपा का अधिकारी हो सकता है, तब फिर आपके मन में संशय होना ही नहीं चाहिए। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

कहहु कवन मैं परम कुलीना। कपि चंचल सबहीं बिधि हीना।।
प्रात लेइ जो नाम हमारा। तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा।।

(5/7/7–8)

अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर।। (5/7)

हनुमतलालजी, विभीषण से भक्तिदेवी सीताजी का पता और उन तक पहुँचने की सारी युक्ति का ज्ञान प्राप्त कर आनंदमग्न हो गए। विभीषण से उन्होंने माँ के मिलन का उपाय पूछा और तब भक्त ने युक्ति बताई–

तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता। देखी चहउँ जानकी माता।।
जुगुति बिभीषन सकल सुनाई । चलेउ पवनसुत बिदा कराई।।

(5/8/4–5)

इस प्रकार प्रथम मिलन काल में ही एक–दूसरे को क्रमशः भगवान और भक्ति का पता बताने वाले, भगवद्‌गुण की स्मृति में डूबे हुए दोनों संत वंदनीय हैं।

मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती।। (1/28/3)
वे (श्रीरामजी) मेरी (बिगड़ी) सब तरह से सुधार लेंगे, जिनकी कृपा, कृपा करने से नहीं अघाती।

महा अजय संसार रिपु...

श्री हेमन्त कुमार तिवारी, नोएडा, फोनः 9931137672

आचार्य पंडित रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है– 'साहित्य अपने समय की जनता की चित्तवृत्ति का प्रतिबिम्ब होता है', पर महाकवि तुलसीदास की प्रसिद्ध रचना श्रीरामचरितमानस के स्वरूप को देखा जाए तो यह अपने समय का ही नहीं, अपितु सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक काव्य के स्वरूप में दिखाई पड़ता है। कथा का आधार भले ही त्रेता युग का हो, पर चरित्र व व्यवहार के साथ कर्तव्यपरायणता को लेकर जो मानवीय मूल्य स्थापित किए गए हैं, वे निश्चित रूप से युग युगांतर के लिए आदर्श हैं। श्रीरामचरितमानस के लंकाकाण्ड के अंतर्गत बाबा तुलसीदास ने राम–रावण युद्ध के समय यह पंक्ति लिखी है–

महा अजय संसार रिपु जीति सकइ सो बीर।
जाकें अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर।। (6/80)

इस दोहे पर यदि विचार किया जाए तो चार तथ्य विचारणीय दिखाई पड़ते हैं–

1. विभीषण को आत्मीय रूप से उद्‌बोधित किया गया है।
2. सांसारिक जीवन को अजेय शत्रु माना गया है।
3. अजेय शत्रु पर विजय प्राप्त की जा सकती है।
4. उच्च मानवीय–मूल्यों को अस्त्र–शस्त्र के रूप में प्रतिपादित किया गया है।

अब सबसे पहले विभीषण के प्रसंग पर विचार किया जाए तो दिखाई पड़ता है कि रावण के विशाल एवं सुसज्जित रथ, अस्त्र–शस्त्र एवं कवच से परिपूर्ण स्वरूप के सामने श्रीराम का नंगे पाँव, साधनहीन, कोमल शरीर देखकर विभीषण को शंका हो जाती है, इसलिए उनके हृदय से निकल आता है।

नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना। केहि बिधि जितब बीर बलवाना। (6/80/3)

यह उक्ति एक ओर भयातुर विभीषण की आंतरिक शंका को प्रकट करती है तो दूसरी ओर युद्ध क्षेत्र में खड़े साहसी वीर योद्धा श्रीराम की आलोचना भी करती है। विचारणीय तथ्य यह है कि जिस विभीषण ने रावण को स्वयं यह कहा था –

तात राम नहिं नर भूपाला। भुवनेस्वर कालहु कर काला।
ब्रह्म अनामय अज भगवंता। ब्यापक अजित अनादि अनंता।। (5/39/1–2)

अर्थात् उन्होंने श्रीराम को अजेय परात्पर ब्रह्म का स्वरूप स्वीकार किया, वही विभीषण

श्रीराम को साधनहीन देखकर उनकी वीरता पर शंका करता है। वस्तुतः विभीषण की शंका भौतिकवादी मानसिकता का परिचायक है। भले ही तपस्या के फलस्वरूप उन्हें ब्रह्माजी से अविचल भक्ति का वरदान प्राप्त हुआ, परंतु उनकी जीवनशैली तामसी वातावरण से घिरी हुई थी। उनके चारों ओर अनैतिक आचरण, दोषपूर्ण भोग विलास का साम्राज्य फैला हुआ था। फलतः न चाहते हुए भी भौतिकता का आधिपत्य उनके जीवन का एक अंग बन चुका था। यह तथ्य उन्होंने श्रीराम की शरण में आने पर स्वयं ही स्वीकार किया, यथा–

नाथ दसानन कर मैं भ्राता। निसिचर बंस जनम सुरत्राता।।
सहज पापप्रिय तामस देहा। जथा उलूकहि तम पर नेहा।। (5/45/7–8)

उनका हृदय प्रभुसत्ता को स्वीकार कर लेने के बावजूद रावण की अपरिमित शक्ति को चुनौती देने में भयातुर हो जाता है। साधन संपन्नता व्यक्ति के आत्मिक बल को कमजोर बना देती है। आस्था, विश्वास, धैर्य, त्याग, विवेक, दम, शम, नियम आदि पुरुषार्थ ठिगने हो जाते हैं। यही मानसिकता महाबली बालीकुमार अंगद में भी दिखाई पड़ी थी। पंपापुर राज्य भोग विलासिता का केन्द्र रहा। बाली के बाद सुग्रीव राजा बने। राजा बनने के बाद भूल गए कि मेरी कोई (श्रीराम) प्रतीक्षा कर रहे होंगे। उन्हें जगाना पड़ा। तब उन्हें अपने कर्तव्य का ज्ञान हुआ। उसी वातावरण में अंगद थे, इसलिए समुद्र पार करने की बात आई तो उन्होंने कहा–

अंगद कहइ जाउँ मैं पारा। जियँ संसय कछु फिरती बारा।। (4/30/1)

ऐसा कहकर असमर्थता प्रकट की। पंपापुर से लंका का भोग विलास साम्राज्य अधिक आकर्षक था। अंगद जानते थे कि उनमें रामभक्ति की प्रखरता में कुछ शेष है। जब लंका में प्रवेश करूँ तो हो सकता है कि यौवन अंधकार के बंधन मुझे आविष्ट कर लें और प्रभु भक्ति के बंधन ढीले पड़ जाएँ। आगे चलकर हनुमान का पौरुष उनके पराक्रम का आधार बन जाता है और अपने कर्तव्य–पालन में वे पूर्ण समर्पण के साथ खरे उतरते हैं।

आज के परिवेश में भी धर्म–अधर्म, सत्य–असत्य, न्याय–अन्याय, त्याग–स्वार्थ आदि की चुनौतियाँ सहृदय को दुःख के सागर में ढकेलने का काम कर रही हैं। एक ओर रावण की असुर सेना स्वार्थ, दुराचार, भ्रष्टाचार आदि अस्त्र–शस्त्र से सुसज्जित है, तो दूसरी ओर राम की सेना धर्म एवं नैतिकता को लेकर विजय प्राप्ति की आशा में धीरता के साथ खड़ी है।

वास्तव में अपने समय और ऐतिहासिकता से परे राम–रावण युद्ध हम सभी के भीतर छिड़ा हुआ है। किसी राष्ट्र, राज्य या समाज की कौन कहे? हर एक व्यक्ति के अंदर राम–रावण युद्ध निरंतर चलता रहता है। इस युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए भगवान राम ने उच्च स्तरीय मानवीय मूल्यों से सुसज्जित ऐसे अद्‌भुत रथ का वर्णन किया है, जो पूरी मानव जाति के लिए ग्रहणीय है। उस रथ का वर्णन श्रीरामजी ने इस प्रकार से किया है–

सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका।।
बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे।।
ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना।।
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा।।
अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना।।
कवच अभेद बिप्र गुर पूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा।।
सखा धर्ममय अस रथ जाकें। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें।।

(6/80/5–11)

इस महासंग्राम के विजय–रथ को गतिशील बनाए रखने के लिए शौर्य एवं धैर्य के पहिये होने चाहिए। इसी के द्वारा रथी युद्ध का सामना करता है। रथी की पहचान के लिए रथ पर ध्वज और पताका होती है। जब तक ध्वज और पताका दिखती रहती है, तब तक रथी को सकुशल तो माना ही जाता है, साथ ही सेना में भी उत्साह का संचार होता रहता है। संग्राम में रथ की ध्वजा और पताका सत्य और शील है। सत्य और शील (स्वभाव) ही मानव का वास्तविक व्यक्तित्व है। जिसके पास सत्य और शील होता है, उसी की बातों को लोग गंभीरता से लेते हैं और उस पर विश्वास करते हैं। जो लोग समय व काल के अनुसार अपनी सुविधा से असत्य को सत्य की चादर ओढ़ा कर दुष्प्रवृत्ति को शील से सजाना चाहते हैं, उनको पहचानना भले ही कठिन हो, लेकिन एक न एक दिन जीवन रण में उन्हें मुँह की खानी पड़ती है अर्थात् जब उनकी पोल खुलती है, तब उनका असली चेहरा सामने आ जाता है, जैसे राहु और कालनेमि राक्षस तथा रावण का हाल हुआ था। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

उघरहिं अंत न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू।। (1/7/6)

जीवन रण में विजय दिलाने वाले रथ के चार घोड़े हैं–बल, विवेक, दम और परहित। बल केवल शारीरिक ही नहीं, अपितु मानसिक भी होना चाहिए। विज्ञान की भाषा में जो गति, दिशा या स्थिति को परिवर्तित कर दे, उसे बल कहते हैं। हमारे जीवन–संग्राम में ऐसे ही बल की आवश्यकता है, जो अंधविश्वास और जड़ता को उखाड़ने में सामर्थ्यवान हो। यदि समाज की गतिशीलता कहीं रुकी हो, तो उसे सार्थक गति प्रदान करें। आज मानव के पास बल है–भौतिकता का, अहंकार का, मद का और ईर्ष्या का। यही कारण है कि मानव की आंतरिक शक्ति कमजोर होती जा रही है। आत्मविश्वास, धैर्य, संयम खोखले साबित हो रहे हैं। फिर जीवन–रण में सफलता कैसे मिलेगी?

रथ का दूसरा घोड़ा विवेक है। विवेक का अर्थ है–सोच समझकर निर्णय करना। आजकल सोशल मीडिया द्वारा फैलाया गया प्रोपगंडा मनुष्य को विवेक शून्य बना रहा है।

सच्चाई यह है कि विवेक की नुकीली सुई से सूक्ष्म विवेचना के द्वारा ही व्यक्ति व समाज के चरित्र के शिल्प को सुंदरता से गढ़ा जा सकता है। इतिहास साक्षी है कि जब लोग विवेक की बजाय भावनाओं से काम लेने लगते हैं, तब विनाश के सिवा कुछ हाथ नहीं आता। द्वितीय विश्व युद्ध में हिटलर के हाथों हुआ नरसंहार विवेक के घोड़े न रहने के कारण रथ की दिशा भटकने का ही परिणाम था।

तीसरा घोड़ा दम है। दम किसी भी परिस्थिति में दृढ़तापूर्वक खड़े रहने का गुण है। बलवान होने पर भी व्यक्ति के अंदर अगर दम न हो तो विकट परिस्थिति आने पर वह भाग खड़ा होगा। यदि योद्धा के सामने महान और दृढ़ लक्ष्य न हो तो ये तीनों घोड़े (बल, विवेक, दम) उसे कहीं भी ले जाएँगे, इसलिए चौथा घोड़ा परहित अधिक महत्वपूर्ण है। साथ ही यह प्रेरणास्रोत भी है। परहित से न केवल तीनों घोड़े पुष्ट होते हैं, बल्कि स्वयं के सामर्थ्य में भी वृद्धि होती है। परहित के संदर्भ में गीधराज को सद्गति देते हुए स्वयं श्रीरामजी कहते हैं–

जल भरि नयन कहहिं रघुराई। तात कर्म निज तें गति पाई।।
परहित बस जिन्ह के मन माहीं। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं।।

(3/31/8–9)

इतना ही नहीं परहित का घोड़ा मानव को खुद की शंकाओं एवं चिंताओं की झाड़ियों से भी तेजी से बाहर ले जा सकता है।

अब इन चारों घोड़ों को नियंत्रित रखने के लिए रस्सी अर्थात् लगाम की आवश्यकता होगी, क्योंकि बिना नियंत्रण के ये घोड़े स्वार्थ, अहंकार और द्वेष की ओर ले जाएँगे। इसलिए भगवान राम ने इन घोड़ों को नियंत्रित करने के लिए क्षमा, दया और समता नामक रस्सी का उपयोग सुझाया है। रावण जैसे अत्याचारी को भी भगवान राम ने बार–बार दया–क्षमा का अवसर प्रदान किया। इस रथ को चलाने वाला सारथी ईश–भजन है। ईश का अर्थ ईस्ट अर्थात् इच्छित। अच्छे या आदर्श गुण सभी के लिए इच्छित होते हैं। इसलिए आदर्श की पराकाष्ठा को ईश्वर कहा जाता है। जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए उच्च आदर्शों को दिमाग में स्मरण करते रहना विजय के लिए आवश्यक है।

वैराग्य (विरति) की ढाल (चर्म) मोह से हमारी रक्षा करती है। मोह के कारण ही संदेह एवं डर का भाव पैदा होता है। मानव–जीवन की सारी चिंताएँ मोह के कारण ही पैदा होती हैं। सांसारिक मोह से छुटकारा पाने के लिए वैराग्य की ढाल आवश्यक है। मोह के संदर्भ में गरुड़जी से मानस रोगों का वर्णन करते हुए काकभुशुंडिजी कहते हैं–

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला।। (7/121/28)

संतोष कृपाण है, जो अत्यधिक महत्वाकांक्षा को काटती है। अत्यधिक महत्वाकांक्षा बड़े से बड़े लोगों को भी घुटनों पर ला देती है और भ्रष्टाचार का शिकार बना देती है। इसलिए

इसे काटने के लिए संतोष रूपी तलवार आवश्यक है। कंजूसी का शत्रु दान रूपी फरसा है। कंजूसी भी मोह और आकर्षण से जन्म लेती है, इसलिए दान रूपी फरसे से ही धन सम्पत्ति के मोह से छुटकारा मिल सकता है।

भगवान राम बुद्धि को दिव्यास्त्र बताते हैं और इस दिव्यास्त्र का संधान करने के लिए विज्ञान रूपी कठोर धनुष की आवश्यकता है। मौलिक एवं तार्किक विचार को विज्ञान मानना चाहिए अर्थात् जो ज्ञान समाज को समयानुकूल आगे बढ़ाने में सहायक है, भविष्य के नवनिर्माण का आधार हो, उसे ही विज्ञान मानना चाहिए। समाज की कुरीतियाँ और अंधविश्वास का पालन विज्ञान नहीं होने दे सकता, अतः विज्ञान और तर्क के धनुष पर सवार होकर बुद्धि का दिव्यास्त्र दूसरों द्वारा फैलाए अज्ञान–अंधकार को दूर–दूर तक सफाया करने की क्षमता रखता है।

अमल और अचल मन तरकश के समान है। जीवन रूपी युद्ध में बने रहने के लिए अमल–अचल मस्तिष्क चाहिए। विचारों में स्पष्टता और ईर्ष्या, क्रोध, घृणा आदि से मुक्त मस्तिष्क ही अमल–अचल होता है। इस तरकश के अंदर सम, यम, नियम आदि विविध प्रकार के बाण हैं। सम का तात्पर्य है–सुख–दुख में समान भावना रखना। यम का अर्थ है–अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का पालन करना। इसके साथ ही साथ शरीर व मन को साफ रखना। संतोष, तप, स्वाध्याय का विस्तार करना। ईश्वर प्रणिधान करना नियम के अंतर्गत आता है। यम और नियम दैनिक जीवन के रण में विजय प्राप्त करने के लिए आवश्यक हैं। गुरुजनों और विप्र (ज्ञानी) लोगों का सान्निध्य ही कवच के समान है, क्योंकि हर समस्या का समाधान एक ही व्यक्ति के पास नहीं होता। इसके लिए दूसरों के अनुभव और ज्ञान जीवन–रण के पथ प्रदर्शक होते हैं तथा विजय प्राप्ति में सहायक होते हैं। इस प्रकार भगवान राम मानव–मूल्य आधारित नैतिक एवं आध्यात्मिक रूप से सुसज्जित रथ का वर्णन करके यह स्पष्ट करते हैं कि इसके समान जीवन में विजय प्राप्त करने के लिए अन्य कोई उपाय नहीं है। कोई भी मनुष्य यदि ऐसे रथ पर सवार होता है, तो उसको जीतने के लिए कहीं भी कोई शत्रु बचता ही नहीं है। ऐसा ही जीवन धन्य होगा।

जन्म महोत्सव रचहिं सुजाना। करहिं राम कल कीरति गाना।। (1/34/8)
बुद्धिमान लोग जन्म (श्रीरामजी के) का महोत्सव मनाते हैं और श्रीरामजी की सुन्दर कीर्ति का गान करते हैं।

आवत एहिं सर अति कठिनाई। राम कृपा बिनु आइ न जाई।। (1/38/6)
इस सरोवर (रामचरितमानस) तक आने में कठिनाइयाँ बहुत हैं। श्रीरामजी की कृपा के बिना यहाँ नहीं आया जाता।

'राष्ट्रभक्ति' ही श्रेष्ठ भक्ति है

डॉ0 रामेश्वर प्रसाद गुप्त, सेवानिवृत्त प्राध्यापक (संस्कृत), दतिया (म.प्र.), फोनः 9826249448

'राष्ट्रभक्ति' विश्व के समस्त देवी–देवताओं और महात्माओं की भक्ति से भी श्रेष्ठ भक्ति है, इसीलिए सनातन संस्कृति के उद्‌गाता हमारे वेद यह उद्‌घोष करते हैं कि –

यतेमहि स्वराज्ये – **ऋग्वेद (5/66/6)**

अर्थात् राष्ट्र के समुन्नयन के लिए सदैव सुयत्न करना चाहिए।

वयं राष्ट्रेजागृयाम् – **यजुर्वेद (9/23)**

अर्थात् राष्ट्र के हित के लिए हमें सदैव जाग्रत रहना चाहिए।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः **अथर्ववेद (12/1/12)**

पृथ्वी मेरी माता है अर्थात् मैं भूमि पुत्र हूँ।

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी – वाल्मीकीय रामायण

अर्थात् जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर श्रेष्ठ हैं।

गायन्ति देवाः किल गीतिकानि, धन्यास्तु ते भारतभूमिभागे–विष्णु पुराण (3/24)

अर्थात् भारत भूमि या भारत राष्ट्र की महानता के गीत देवता भी गाते हैं।

हमारे अवतार पुरुष मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की राष्ट्रभक्ति तो अनूठी है। वे राष्ट्र के कल्याण एवं उन्नयन हेतु अपना सर्वस्व न्योछावर कर देने को तत्पर हैं। यथोल्लेख है कि–

स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मुन्चतोनाहित मे व्यथा।। (उत्तररामचरितम् 1/12)

अर्थात् स्नेह, दया, सुख और अपनी पत्नी सीता को भी लोक अर्थात् राष्ट्र के हित में उत्सर्ग करने में मुझे कोई पीड़ा नहीं होगी।

महाकवि भवभूति ने तो स्पष्ट कर दिया है कि **'लोकस्याराधनं परम'** अर्थात् लोक या राष्ट्र का आराधन अर्थात् राष्ट्रभक्ति श्रेष्ठ भक्ति है।

महाकवि गोस्वामी तुलसीदासजी ने अपने महाकाव्य श्रीरामचरितमानस में राष्ट्रभक्ति को श्रेष्ठ मान्यता प्रदान की है। महाकाव्य के प्रारम्भ में ही उन्होंने अवध–भूपाल राजा दशरथ की पावन नगरी अवधपुरी का सादर सुयश बखान किया है। साथ ही कौसल राज्य के प्रति अत्यन्त प्रेम और भक्ति के कारण कौसलपति राजा दशरथ को अपनी सुकृति में सदा सुकीर्तित किया है, यथा–

बंदउँ अवध पुरी अति पावन। सरजू सरि कलि कलुष नसावनि।।
प्रनवउँ पुर नर नारि बहोरी। ममता जिन्ह पर प्रभुहि न थोरी ।। (1/16/1–2)

कौसल राज्य के प्रति भक्ति एवं अकथनीय समर्पण से राजा दशरथ का श्रीरामचरितमानस में अतुल सम्मान वर्णित है, यथा–

कोसलपति कर देखि समाजू। अति लघु लाग तिन्हहि सुरराजू।। (1/313/6)

राजा एवं प्रजा द्वारा अपने कर्तव्यों का सुचारु परिपालन ही देशभक्ति है। अयोध्या नरेश राजा दशरथ तो सुकृत की मूर्ति कहे गए हैं, यथोल्लेख है कि–

सकल सुकृत मूरति नरनाहू। राम सुजसु सुनि अतिहि उछाहू।।
नृप सब रहहिं कृपा अभिलाषें। लोकप करहिं प्रीति रुख राखें।।
(2/2/2– 3)

सत्कर्म के प्रति निष्ठा श्रेष्ठ देशभक्ति है, इसीलिए **'श्रीरामचरितमानस'** महाकाव्य में गोस्वामी तुलसीदासजी ने कर्म को सर्वोपरि कहा है। उन्होंने कर्म की महत्ता के विषय में व्यापक रूप से उल्लेख किया है, यथा–

करम प्रधान सत्य कह लोगू।। (2/91/8)
निज कृत करम भोग सबु भ्राता।। (2/92/4)
करम प्रधान बिस्व करि राखा।। (2/219/4)
निज कृत कर्म जनित फल पायउँ। (3/2/13)

श्रीरामचरितमानस में राजा और प्रजा दोनों को कर्म करने के लिए उत्प्रेरणा और चेतावनी प्रदत्त है, यथा –

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृप अवसि नरक अधिकारी।। (2/71/6)

श्रीरामचरितमानस में निगमनीति या राजनीति के वे ही अधिकारी कहे गए हैं, जो श्रेष्ठ या चरित्रवान, धैर्यवान एवं धर्म या सत्कर्म के प्रति निष्ठावान हों, यथोल्लेख है कि –

नरबर धीर धरम धुरि धारी। निगम नीति कहुँ ते अधिकारी।। (2/72/2)

अपने कर्तव्य के प्रति निष्ठा देशभक्ति है। इसमें संलग्नता तभी होती है, जब जीव सांसारिक भोगासक्ति से विरक्त हो, यथोक्त है कि –

जानिअ तबहि जीव जग जागा। जब सब विषय बिलास बिरागा।। (2/93/4)

सदाचरण और राष्ट्र के प्रति अहर्निशि चेतना राजधर्म और देशभक्ति के रूप में सम्मान्य है, अतः राजाओं तक के लिए चेतावनी दी गई है कि –

कहब सँदेसु भरत के आएँ। नीति न तजिअ राजपदु पाएँ।।
पालेहु प्रजहि करम मन बानी। सेएहु मातु सकल सम जानी।। (2/152/3–4)

और भी दृष्टव्य है कि –

मुखिआ मुखु सो चाहिऐ खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सकल अँग तुलसी सहित बिबेक।। (2/315)

देशभक्ति की श्रेष्ठता राजनीति की पवित्रता से प्रायोजित होती है। श्रीरामचरितमानस

में राजा वर्ग या प्रशासक वर्ग को निर्विकारी, निरालस्य, कर्तव्यनिष्ठ और सुनीतियों का आश्रय लेकर राजकाज में दत्तचित्त रहने के लिए गहन चिन्तन निर्दिष्ट है, यथा–

राज नीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा।।
बिद्या बिनु बिबेक उपजाएँ। श्रम फल पढ़ें किएँ अरु पाएँ।।
संग तें जती कुमंत्र ते राजा। मान ते ग्यान पान तें लाजा।।
प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी। नासहिं बेगि नीति अस सुनी।।

(3/21/8–11)

शबरी ने भगवान के दर्शन प्राप्ति हेतु कोई विशेष मंत्र–अनुष्ठान या भजन नहीं किया था। उसने तो ऋषियों के आश्रमों की स्वच्छता बनाए रखने के लिए वर्षों तक स्वयं सफाई अभियान चलाया था, तभी उसे सच्चिदानन्द परमेश्वर श्रीराम के सहज दर्शन प्राप्त हुए। 'व्यक्ति' वचन, कर्म और मन से निष्काम भाव से लोक की या प्राणिमात्र की भक्ति या सेवा में तल्लीन रहता है, तो परमात्मा उनके हृदय में विराजते हैं, यथोल्लेख है कि –

बचन कर्म मन मोरि गति भजनु करहिं निःकाम।
तिन्ह के हृदय कमल महुँ करउँ सदा बिश्राम।। (3/16)

श्रीरामजी में अपने देश के प्रति अटूट श्रद्धा भक्ति और अपरमित प्रेम की भावना थी। रावण और उसकी लंका पर विजय प्राप्ति के पश्चात् श्रीराम ने अविलम्ब ही अवधपुरी की ओर प्रस्थान किया। उन्होंने अपने देश को त्रिविध ताप हारक कहकर अपने देश के प्रति अनुपमेय एवं अगाध प्रेम प्रदर्शित किया, यथोल्लेख है कि –

पुनि देखु अवधपुरी अति पावनि। त्रिबिध ताप भव रोग नसावनि।। (6/120/9)

सुकृत एवं सेवा, भक्ति के पर्याय कहे जा सकते हैं, जिनके करने से प्रजा एवं राजाओं की संतति अनुकरणीय आदर्श के रूप में सर्वमान्य तथा गौरव प्राप्त होती है, यथा–

जनक सुकृत मूरति बैदेही। दसरथ सुकृत राम धरें देही।।
हम सब सकल सुकृत कै रासी। भए जग जनमि जनकपुर बासी।।

(1/310/1,4)

श्रीरामचरितमानस में राष्ट्रभक्ति की श्रेष्ठता का निरूपण इस कृति के उत्तरकाण्ड में सहज ही देखा जा सकता है। 'राजा राम' प्रजावत्सल महामानव हैं। उनकी प्रजा के प्रति निश्छल सेवा भावना से आज भी रामराज्य अनुकरणीय आदर्श है। यह समस्त प्रकार की भक्तियों में उत्कृष्ट एवं श्रेष्ठ है। 'भक्ति' सेवाभावना का पर्याय है। राजा या प्रशासन अपने को पूज्य या अधिकारी के रूप में प्रस्तुत न करें, अपितु सेवक के रूप में प्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत हों तथा सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रति समर्पित हों, यही राष्ट्रभक्ति श्रेष्ठ भक्ति है। राजा राम ने अपने को लोक सेवक या प्रजा के सेवक के रूप में प्रत्यक्ष प्रस्तुत कर अपनी देशभक्ति को प्रदर्शित किया।

राष्ट्रभक्ति अर्थात् राष्ट्र के कण–कण से प्रेम एवं राष्ट्र की तन–मन–धन से सेवा करना है। राष्ट्र के पंच तत्वों के योग और क्षेम के प्रति मन, वाणी और कर्म से सेवाभावी होना

ही राष्ट्र–भक्ति है। जब राष्ट्ररूपी देवता की भक्ति या सेवा होगी, तभी सभी देवी देवताओं की सेवा या भक्ति सार्थक सिद्ध होगी, अन्यथा साम्प्रदायिक उलझनों, मन–मुटावों और बिखरेपन का भय स्वाभाविक रूप से बना रहेगा। किसी भी धर्म, किसी भी सम्प्रदाय अथवा किसी भी देवी शक्ति की भक्ति राष्ट्रभक्ति से बढ़कर नहीं है।

राजा राम ने राष्ट्र की भक्ति या राष्ट्र की सेवा का बीड़ा उठाया। उनकी सम–दृष्टि से उनका राष्ट्र अवधपुर सकल शोभा का स्थान बन गया। श्रीराम की सेवा भक्ति की शक्ति तो देखिये कि अपने राज्य में निस्पृह, निर्लोभ, निरासक्त भाव से उनके आगमन मात्र से उनके सम्पूर्ण राज्य में सुहावन त्रिविध शीतल, मन्द सुगन्धित वायु का सुचारु संचार होने लगा और सरयू निर्मल नीरा हो गई, श्रीरामचरितमानस में यथोक्त है कि –

अवधपुरी प्रभु आवत जानी। भई सकल सोभा कै खानी ।।
बहइ सुहावन त्रिबिध समीरा। भइ सरजू अति निर्मल नीरा।।

(7/3/9–10)

अपने राष्ट्र के प्रति राजा राम का अतुल प्रेम, आत्मीयता और सेवारूपिणी भक्ति उसके समुन्नत विकास एवं उसके उत्कृष्ट ऐश्वर्य के बखान से प्रदृष्ट है, यथा –

राका ससि रघुपति पुर सिंधु देखि हरषान।
बढ़यो कोलाहल करत जनु नारि तरंग समान।। (7/3ग)

श्रीराम का राष्ट्रप्रेम या राष्ट्रभक्ति एवं उनकी जनता के प्रति आत्मीय भावना उनकी अपरमित, आदृत एवं अनुकरणीय राष्ट्र सेवा से परमादर्श को प्राप्त है, यथा –

इहाँ भानुकुल कमल दिवाकर। कपिन्ह देखावत नगर मनोहर।।
सुनु कपीस अंगद लंकेसा। पावन पुरी रुचिर यह देसा।।
जद्यपि सब बैकुंठ बखाना। बेद पुरान बिदित जगु जाना।।
अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ। यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ।।

(7/4/1–4)

प्रजानुरंजक राजा का अपने देश के प्रति और अपनी प्रजा के प्रति हार्दिक प्रेम एवं सेवा भाव उसकी श्रेष्ठ देशभक्ति है। एक श्रेष्ठ राजा अपने राष्ट्र को ही श्रेष्ठ मान्यता देता हुआ उसी की सेवा–भक्ति में ही निरत रहना चाहता है। वाल्मीकीय रामायण में उल्लेख है कि अपने राष्ट्र कौसल राज्य के समक्ष स्वर्णमयी लंका को श्रीराम ने नकार दिया था, यथा–

यद्यपि स्वर्णमयी लंका न मे रोचते लक्ष्मण।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।।

श्रीराम ने अपने राष्ट्र की प्राणपन से सेवा और भक्ति में मन लगाया, जिससे उनका समस्त राष्ट्र सब प्रकार से सुखी, सम्पन्न, समृद्ध और सदाचारमय समत्वभाव से युक्त तथा सम्यक् सौहार्द की सुस्थली बन गया। श्रीरामचरितमानस में यथोल्लेख है कि –

राम राज बैठें त्रैलोका। हरषित भए गए सब सोका।।
बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप बिषमता खोई।।(7/20/7–8)

और भी दृष्टव्य है कि –

बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग ।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग।। (7/20)

अन्यत्र भी अवलोकनीय है कि –

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।।(7/21/1)
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।(7/21/2)
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना।। (7/21/6)

'राजा' जब ईमानदार, सदाचारी, देशभक्ति की शक्ति से युक्त और राज्य के हित में सतत् संलग्न रहता है, तब सम्पूर्ण प्रकृति प्रफुल्लित होकर प्रजा सहित राज्य के समुत्कर्ष में अपनी समस्त प्रकार की सेवा से संलग्न रहती है। रामराज्य की सम्पूर्ण रूप से समुन्नयन की सुस्थिति इसका प्रमाण है, यथा –

फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन। रहहिं एक सँग गज पंचानन।। (7/23/1)
सीतल सुरभि पवन बह मंदा। गुंजत अलि लै चलि मकरंदा।। (7/23/4)
सरिता सकल बहहिं बर बारी। सीतल अमल स्वाद सुखकारी।। (7/23/8)

अन्य भी दृष्टव्य है कि –

बिधु महि पूर मयूखन्हि रबि तप जेतनेहि काज।
मागें बारिद देहिं जल रामचंद्र कें राज।। (7/23)

निष्कर्ष यह है कि राजा राम की अपने राज्य के प्रति सेवारूपी भक्ति अनासक्त भाव एवं सेवा की कामना से ही थी। इसीलिए रामराज्य के आदर्श को अपनाना लोकहित और विश्वहित में समीचीन तथा पूर्णतः प्रासंगिक है। राजा राम की राष्ट्रसेवा रूपी यह भक्ति अनन्य एवं अद्वितीय है और सभी प्रकार की अन्यान्य भक्तियों के प्रश्रय एवं सम्बर्धन का आधार भी है। आज हमारे राष्ट्र को बुदबुदाते हुए होंठों की नहीं, अपितु, काम करने वाले हाथों की आवश्यकता है। राजनेताओं को संयम, अनुशासन एवं सत्कर्मनिष्ठा की आवश्यकता है। राजा राम को राजा बनने से पूर्व उनके गुरु वसिष्ठजी ने उन्हें यही शिक्षा दी थी कि **''राम करहु सब संजम आजू''। (2/10/3)।** स्पष्ट है कि राष्ट्रभक्ति या राष्ट्रसेवा, परम अनुशासन एवं संयम की अपेक्षा करती है।

श्रीरामचरितमानस कृति राष्ट्रभक्ति की औदार्यपूर्ण पावन शिक्षा की निर्देशिका है।

जो नहाइ चह एहिं सर भाई। सो सतसंग करउ मन लाई।। (1/39/8)
हे भाई! जो इस सरोवर (रामचरितमानस) में स्नान करना चाहे वह मन लगाकर सत्संग करे।

राम राज सुख बिनय बड़ाई। बिसद सुखद सोइ सरद सुहाई।। (1/42/6)
रामचन्द्रजी के राज्यकाल का जो सुख, विनम्रता और बड़ाई है, वही निर्मल सुख देने वाली सुहावनी शरद ऋतु है।

बंदउँ बालरूप सोइ रामू। सब सिधि सुलभ जपत जिसु नामू।। (1/112/3)
मैं उन्हीं रामचन्द्रजी के बालरूप की वंदना करता हूँ, जिनका नाम जपने से सब सिद्धियाँ सहज ही प्राप्त हो जाती हैं।

एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा

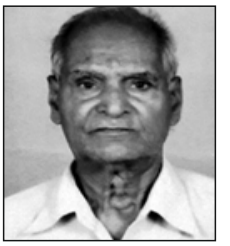

डॉ0 शंकर शरण तिवारी, झाँसी, फोन–9795127788

श्रीरामचरितमानस के तृतीय सोपान के अन्तर्गत प्रभु श्रीराम जीवमात्र के प्रतीक अपने अनुज परम भागवत लक्ष्मणजी के प्रति अपनी माया की विचित्रता के संदर्भ में उपदेश करते हैं–

एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा।। (3/15/4)

उनके अनुसार माया के दो रूप हैं, विद्या और अविद्या। विद्या माया का वर्णन **'एक रचइ जग गुन बस जाकें।'** लेख के अन्तर्गत वर्णन किया जा चुका है (स्मारिका अंक 30, पृष्ठ 20 से 22 तक)। अविद्या माया का वर्णन यहाँ किया जा रहा है। यह माया दुःख रूप वाली है और इसके प्रभाव के परिणामस्वरूप जीव जन्म–जन्मान्तर से बंधन में पड़ा हुआ है–

जिव जबतें हरितें बिलगान्यो। तबतें देह गेह निज जान्यो ।।
मायाबस स्वरूप बिसरायो। तेहि भ्रमतें दारुन दुख पायो।।
(विनय पत्रिका–136)

यहाँ जिस **'माया'** की बात कही गयी है, वह **'अविद्या'** से भिन्न नहीं है–जहाँ **'महामाया'** का प्रयोग किया जाता है, वहाँ उसका अर्थ **'विद्यामाया'** होता है, जो सामान्य रूप से कथित 'माया' का प्रथम रूप है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि मूलतः 'माया' एक ही है, जो भक्त, साधक या सामान्य जन के प्रति भिन्न–भिन्न रूप धारण करती है। भक्त के लिए वह 'विद्या' है, जबकि सांसारिक जीव के लिए 'अविद्या'। यही कारण है कि 'विद्या' माया 'अविद्या' से भिन्न स्वरूपा होकर साधक को शाश्वत सुख की उपलब्धि कराती है। त्रिगुणमयता दोनों ही रूपों में अवस्थित है–एक में वह ऊर्ध्वमुखी है तो दूसरे में वह अधोमुखी। माया के नाम–सर्वाधिक प्राचीन सांख्यदर्शन में उक्त माया के दो नाम हैं–(1) मूल (2) प्रकृति।

प्रधान वेदान्त में इसके अभिधान हैं (1) माया (2) प्रकृति (3) विद्या (4) अविद्या एवं (5) अज्ञान। तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस में यथास्थान इन नामों को ग्रहण किया है–

अति प्रचंड रघुपति कै माया। (1/128/8)
हरि सेवकहि न ब्याप अबिद्या। (7/79/2)
प्रभु प्रेरित ब्यापइ तेहि बिद्या।। (7/79/2)
प्रबल अबिद्या तम मिटि जाई। (7/120क/5)
तौ प्रभु हरहु मोर अग्याना। (1/108/2)

गोस्वामीजी ने **'माया'** शब्द का प्रयोग विभिन्न **'विद्या' 'अविद्या'** तथा विद्या–अविद्या

अर्थों में इस प्रकार किया है –

जनु जीवहि माया लपटानी। अविद्या सूचक (4/14/6)
जब हरि माया दूरि निवारी। विद्याबोधक (1/138/1)
ग्यानी भगत सिरोमनि त्रिभुवनपति कर जान।
ताहि मोह माया नर पावँर करहीं गुमान।। (विद्या–अविद्या (7/62क)

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने 'माया' के विषय में अर्जुन को इस प्रकार उपदेश दिया है–

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।। (7/14)

हे अर्जुन! मुझसे उत्पन्न होने वाली यह मेरी माया त्रिगुणमयी और दुस्तर है। जो केवल मेरी शरण में आ जाते हैं, वे ही इसे पार कर पाते हैं। 'दुरत्यया' शब्द को बताते हुए प्रसिद्ध सन्त स्वामी रामसुख दास कहते हैं–इस माया से प्रभावित मनुष्य अपने को कभी सुखी, कभी दुखी, कभी समझदार, कभी नासमझ, कभी निर्बल और कभी बलवान आदि मानकर इन भावों में तल्लीन रहते हैं (श्रीभगवद्गीता–सां0स0 पृ0 499)। इस प्रकार के भाव तीन गुणों के प्रभाव ही हैं। सन्त प्रवर के ऐसे व्याख्यान से यह न समझ लेना चाहिए कि माया या अविद्या माया सुख प्रदान करने वाली है। गोस्वामीजी तो स्वयं ही इसे 'दुखरूपा' कह चुके हैं। वस्तुस्थिति यह है कि माया में प्रतीत होने वाला सुख 'सुख' न होकर 'प्राप्तिभाषिक सुख' है, जिसे **'सुखाभास'** या 'दुःख' मानना ही उचित होगा। निःसंदेह 'सतोगुण' सुख से जीवधारी को बाँधता है, पर इस प्रकार के अभिमान से आबद्ध न होना साधक का श्रेय है। गोस्वामीजी इसी संदर्भ में आगाह करते हैं –

सुनहु तात माया कृत गुन अरु दोष अनेक ।
गुन यह उभय न देखिअहिं देखिअ सो अबिबेक।। (7/41)

इस विषय में एक विद्वान का कथन है–लोक सुखदायक यावत् सत्कर्म हैं, वे गुण हैं और दुःखदायक यावत् असत्कर्म हैं, वे दोष हैं। ये दोनों माया के उत्पन्न किए हुए हैं। इन दोनों को न देखने का भाव कि शुभाशुभ कर्म त्यागकर शुद्ध तथा सच्चा प्रेम ईश्वर में करना, यह साधुओं का मुख्य विवेक है (मानसपीयूष–उत्तर पृ0 225)। विषय को और स्पष्ट व्यापक रूप से समझने के लिए एक सन्त की लोकोत्तर प्रेमानुभूति प्रस्तुत है–

अहौ वा हारे वा कुसुम शयने वा दृषदि वा।
मणौ वा लोष्ठे वा बलवति रिपौ वा सुह्रति वा।।
तृणे वा स्त्रैणे वा मम समदृशो यान्ति दिवसाः।
क्वचित् पुण्यारण्ये शिव शिवेति प्रलयतः।। (काव्य प्रकाश 4/44)

साँप और मोतियों के हार में समबुद्धि रखने वाले इसी प्रकार फूलों की सेज और पत्थर की शिलाएँ, समबुद्धि मणि तथा मिट्टी के ढेले में, बलवान शत्रु तथा मित्र में, तिनके में अथवा स्त्रियों के समूह में समबुद्धि रखने वाले मेरे दिन किस पवित्र तपोवन में **'शिव',**

'शिव', 'शिव' ऐसा प्रलाप करते हुए व्यतीत होते हैं।

एक जीवन्मुक्त सन्त की उपर्युक्त स्थिति विद्या माया का प्रसाद है—यहाँ **'अविद्या'** की संभावना के लिए अवकाश नहीं है, पर ईश्वर की इच्छा के परिणामस्वरूप ऋषि, मुनि भी अविद्या से आक्रान्त देखे गए हैं। गोस्वामीजी के 'मानस' में सर्वप्रथम निष्काम कर्मयोगी राजा प्रतापभानु की मनःस्थिति का अवगाहन किया जा सकता है, जो कपटी मुनि से इस प्रकार की वर याचना करता है—

जरा मरन दुख रहित तनु समर जितै जनि कोउ।
एकछत्र रिपुहीन महि राज कलप सत होउ ।। (1/164)

उपर्युक्त प्रकार की इच्छा ऐसे ज्ञानी की नहीं हो सकती, जो अपने प्रयोजन की उच्चतम स्थिति को प्राप्त कर चुका हो, पर यहाँ तो उसे अज्ञान ने घेर लिया और वह सत्यकेतु के कुल का विनाशकर्ता बना। उसे यह विदित नहीं था कि निकट भविष्य में उसे रावण के रूप में अवतरित होकर अपना श्रेय पथ प्रशस्त करना होगा। इस प्रकार 'अविद्या' से उसे 'विद्या' की सिद्धि हो गयी —

सुनत बचन दससीस रिसाना। मन महुँ चरन बंदि सुख माना। (3/28/16)

परमेश्वर के विशिष्ट अंश देवर्षि नारद के मोह का प्रसंग उक्त 'अविद्या' की ही प्रसूति है। ब्रह्मचर्य व्रत और धीरमति वाले नारदजी कामदेव की उत्तेजक क्रियाओं से किंचित् भी विचलित नहीं होते। पराजित कामदेव के नतमस्तक हो जाने पर वे प्रिय वचनों से उसे आश्वस्त करते हैं, पर उनका यह 'सहज' या 'प्रशान्त' भाव अविद्या के प्रभाव से विकृत होकर 'अहंकार' के रूप में अवतरित हो जाता है और वे अपने को 'कामविजयी' मान लेते हैं। इस विजय कथा को वे भगवान शंकर को सुना देते हैं, जो उन्हें वर्जित करते हैं कि यह प्रसंग श्रीहरि को न सुनाया जाए। अविद्या के पाश में आबद्ध नारद आशुतोष भूतभावन के उद्‌बोधन को न मानकर श्रीहरि के सम्मुख सम्पूर्ण कामचरित का वर्णन कर देते हैं। रोग असाध्य समझकर भगवान विष्णु अपनी माया को विश्वमोहिनी के रूप में अवतरित करते हैं, जिसके हस्तलेख को देखकर उन्हें 'विद्या माया' द्वारा अर्जित सभी उपलब्धियाँ फीकी प्रतीत होने लगती हैं। उन्हें लगा कि ऐसे अवसर पर प्रभु जैसा सुन्दर रूप राजकुमारी के वरण में सहायक हो सकता है। प्रभु से ऐसी याचना करने पर उन्हें 'वानर वदन' प्राप्त होता है, जिससे क्षुब्ध और असफल होकर वे उन्हें शाप दे देते हैं। शाप प्राप्ति के पश्चात् परिणीता विश्वमोहिनी तथा लक्ष्मीजी को अंतर्हित करके भगवान अपनी माया के प्रभाव का बोध नारदजी को करा देते हैं। इस प्रकार नारद के 'अविद्या' रूप अहंकार के विनाश से श्रीहरि अपने विष्णु अवतार का हेतु निर्मित कर देते हैं और अब नारद अपने पूर्व के 'विद्या' रूप में

अविस्थत हो जाते हैं–

बहुबिधि मुनिहि प्रबोधि प्रभु तब भए अंतरधान।
सत्यलोक नारद चले करत राम गुन गान ।। (1/138)

त्रेतायुग में प्रत्येक बार बालरूप श्रीराम के जन्म के अवसर पर उनकी लीलाओं को प्रत्यक्ष देखकर आह्लादित होने वाले काकभुशुण्डिजी एक बार प्रभु की वैविध्यमयी अदृष्टपूर्व, विशेष लीलाओं को देखकर चकित हो गए। उनके मानस में प्रभु का बाल्य रूप, अन्तर्हित हो गया और चिदानन्द स्वरूप ऐश्वर्यभाव उद्भासित हो गया, जो माधुर्यभावा का विरोधी था। अनुरंजक चरित्र कैसे कर सकता है? जो व्यापक है, वह यहाँ व्याप्य कैसे हो गया? अपनी ऐसी अनुभूति को लक्षित कर वे कहते हैं –

रूप रासि नृप अजिर बिहारी। नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।।
मोहि सन करहिं बिबिधि बिधि क्रीड़ा। बरनत मोहि होति अति ब्रीड़ा।।
किलकत मोहिं धरन जब धावहिं। चलउँ भागि तब पूप देखावहिं।।
(7/77क/8–10)

आवत निकट हँसहिं प्रभु भाजत रुदन कराहिं।
जाउँ समीप गहन पद फिरि फिरि चितइ पराहिं ।। (7/77क)

काकभुशुण्डिजी को लगा कि सर्वसुलभ ऐश्वर्य मंडित परब्रह्म इस प्रकार की माधुर्यमयी बाल लीलाएँ कैसे कर सकता है? उनकी सीमाओं को भी कैसे पार कर सकता है? इसी भ्रम को दूर करने के लिए भुशुण्डिजी को सर्वभक्तजन दुर्लभ विराट् तत्त्व का दर्शन प्रभु ने अपने उदर में कराया। करुणभाव संवलित प्रेमभाव से आपूरित हृदय वाले भुशुण्डिजी की देह दशा को देखकर प्रभु की ओर से आश्वासन प्राप्त हुआ कि उन्हें ज्ञान, वैराग्य, मुनि दुर्लभ विज्ञान की प्राप्ति होगी। अन्ततः चतुर भुशुण्डिजी ने 'अविरल भक्ति' का दुर्लभ वरदान प्राप्त कर लिया। वह 'माया' या 'अविद्या' जो उनके लिए पूर्व में ही दुःखद नहीं थी–**सो माया न दुखद मोहि काहीं। (7/78/2)**, अब भविष्य में उन्हें 'माया' से मुक्ति मिल गयी। माया की विभिन्न विशेषताओं का संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत है :–

1.0 अविद्या (अज्ञान) की विशेषताएँ–वेदान्तसार के अनुसार–'अज्ञानं तु सदसद्भ्यां अनिर्वचनीयं त्रिगुणात्मकं ज्ञानविरोधि भावरूपम्' (वेदान्तसार–पृ0 63–डॉ0 त्रिपाठी) अर्थात् अज्ञान सत् और असत् दोनों से अनिर्वचनीय है, त्रिगुणात्मक (सत्त्व, रजस्, तमस् रूप) ज्ञानविरोधी है और भावरूप है। अन्य शब्दों में–अज्ञान सत् नहीं है, क्योंकि यह स्वतंत्र नहीं है–तस्य (आत्मनः) भासा सर्वमिदं विभाति (आत्मा या ब्रह्म से यह सब प्रकाशित होता है)। 'असत्य' भी नहीं है, रस्सी में सर्प की प्रतीति होती ही है। यह त्रिगुणात्मक अर्थात् सुख–दुख, मोह स्वभाव वाला है, यह ज्ञान विरोधी है 'रस्सी' में

'सर्प' की भ्रान्ति इसी की सामर्थ्य से हुई है, यह भाव रूप भी है, क्योंकि 'रस्सी' में 'सर्प' रूप वस्तु की प्रतीति होती ही है।

2.0 अविद्या पँचपर्वा–अविद्या के पाँच वर्ग हैं। प्रथम है–तम अथवा अंधकार–इससे व्यक्ति की अपनी वास्तविकता (आत्मा) पर परदा पड़ जाता है। दूसरा वर्ग है–मोह अर्थात् अपनी देह को अपना समझ बैठना–अहंबुद्धि। तीसरा है–महामोह अर्थात् विषय–भोग से देह की वासनाओं को तृप्त करने की इच्छा। चौथा वर्ग है तामिस्र। इसका अर्थ है–भोगेच्छा के प्रतिघात से अपने क्रोधादि विकार। पाँचवीं गाँठ है–अंधतामिस्र–अर्थात् मृत्युभय जिसे अभिनिवेश भी कहते हैं। मानस में इन्हें विभिन्न स्थलों पर देखा जा सकता है–

जीव हृदयँ तम मोह बिसेषी। (7/117क/7)
मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला। (7/121क/29)
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर। (1/वंदना प्रकरण 5)
केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा। (7/70क/8)
अब भा मरन सत्य हम जाना।। (4/27/5)

3.0 माया की शक्तियाँ–वेदान्तदर्शन में माया की दो शक्तियों को मान्यता प्राप्त है। इनके नाम हैं–आवरण तथा विक्षेप। इन्हीं दोनों की सहायता से ब्रह्म या परमात्मा का वास्तविक स्वरूप छिप जाता है और अवस्तु भूत जगत् की प्रतीति होती है।

3.1 आवरण शक्ति–यह शक्ति जीव के सामने परदा डालकर परमात्मा के सत् चित् आनन्दस्वरूप को आवृत्त कर देती है, जिससे वह जन्ममरणादि के बंधनों से युक्त प्रतीत होता है। इस संदर्भ में वेदान्त में स्वीकृत दृष्टान्त है–

घनच्छन्न दृष्टिर्घनच्छन्नमर्कं यथा मन्यते निष्प्रभंचातिमूढः।

अर्थात् जिस प्रकार लघु मेघ का खण्ड अनेक योजन वाले सूर्य को दर्शक के नेत्रों से ढककर उसकी दृष्टि को सीमित कर देता है, जिससे उसे सूर्य के निष्प्रभ होने की भ्रान्ति होती है। इसी प्रकार मूढ़ व्यक्ति को आत्मा जन्ममरणादि के बंधनों से बंधा हुआ प्रतीत होता है।

3.2 विक्षेप शक्ति–वि उपसर्गपूर्वक क्षिप् धातु से घञ प्रत्यय की योजना करने पर 'विक्षेप' शब्द की व्युत्पत्ति होती है। इसका अर्थ है–इधर–उधर फेंकना, बिखेरना आदि। 'अविद्या' माया अपनी इस शक्ति को विकीर्ण करके सूक्ष्म शरीर से लेकर ब्रह्माण्डपर्यन्त संसार की रचना कर देती है। पंच महाभूत आकाशादि से जो चराचर सृष्टि उत्पन्न होती है, वह इसी का प्रभाव है। गोस्वामीजी ने इसी की व्याख्या संक्षेप में इस प्रकार की है–

गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई।। (3/15/3)

निष्कर्षतः

1. अविद्या के अन्य नाम 'माया' तथा 'प्रकृति' है, जिसे ईश्वर या महेश्वर से 'सत्त्व' या प्राण शक्ति प्राप्त होती है। मानस के बालकाण्ड के वंदना प्रकरण में छठवाँ श्लोक इसका प्रमाण है–**'यत्सत्त्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाहेर्भ्रमः'।**
2. यह शक्ति आत्मा को ढककर उस पर नश्वर शरीर आदि की नित्य उद्भावना कर देती है।
3. इसके द्वारा आत्मा बंधती है और यह क्रम जन्म–जन्मान्तर तक चलता रहता है।
4. अविद्या से भक्त आक्रान्त नहीं होते। यदि ईश्वरेच्छा से ऐसा आरोपण होता है तो भी यह उन्हें संसारी नहीं होने देती।
5. भक्ति की प्राप्ति होने पर अविद्या भक्त को मुक्त कर देती है, जो ईश्वर की कृपा का ही परिणाम है।
6. शंकराचार्य 'माया' तथा 'अविद्या' में भेद नहीं करते, पर पंचदशीकार विद्यारण्य स्वामीजी के अनुसार इन दोनों में 'सत्त्वकी शुद्धि' तथा 'अशुद्धि' की विशेषता है। गोस्वामीजी का भी यह मत है।
7. 'विद्या' तथा 'अविद्या' में कभी टकराव नहीं होता, दोनों साधक की मनोदशा के अनुसार संग्रह–त्याग करती रहती हैं। अविद्या के द्वारा मुक्त हो जाने पर ही गोस्वामीजी अपने निज स्वरूप (चेतन अमल सहज सुखरासी) में अवस्थित होकर परम विश्राम को प्राप्त कर सके थे, यथा –

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।। (7/130क/छंद 3)

यहाँ पर 'राम' का अर्थ है–विद्या माया सहित 'महामाया' के पति अखिल ब्रह्माण्डनायक प्रभु श्रीराम। 'अविद्या' यहाँ 'बेचारी' हो गयी–सांख्यदर्शन की 'नर्तकी' मूल प्रकृति' की तरह। प्रमाण दृष्टव्य है–

रंगस्य दर्शयित्वा निवर्तते नर्तकी यथा नृत्यात्।
पुरुषस्य तथात्मानं प्रकाश्य निवर्तते प्रकृतिः।। (कार्किका 59)

जिन्ह हरिकथा सुनी नहिं काना। श्रवन रंध्र अहिभवन समाना।। (1/113/2)
जिन्होंने अपने कानों से भगवान की कथा नहीं सुनी, उनके कानों के छिद्र साँप के बिल के समान हैं।

जिन्ह हरिभगति हृदयँ नहिं आनी। जीवत सव समान तेइ प्रानी।। 1/113/5)
जिन्होंने भगवान की भक्ति को अपने हृदय में स्थान नहीं दिया, वे प्राणी जीते हुए ही मुर्दे के समान हैं।

चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तजि गान

श्री कैलाश त्रिपाठी, औरैया (उ.प्र.), फोनः 9897939095

श्रद्धा समन्वित विश्वासयुक्त भगवान के प्रति प्रेम भाव का उच्च सोपान भक्ति है। श्रीरामचरितमानस में भक्ति की पराकाष्ठा है। गोस्वामी तुलसीदास ने ''मानस'' में विभिन्न पात्रों–भरत, हनुमान, विभीषण, जटायु एवं शबरी आदि के माध्यम से भक्ति के विभिन्न रूपों के शिखर को स्पर्श किया है। नवधा भक्ति में भक्ति के नौ आधारभूत तत्वों का समावेश है। भक्ति के सर्वोच्च ग्रंथ श्रीमद्भागवत के सातवें स्कन्ध में भक्त शिरोमणि प्रह्लाद ने जिन नौ रूपों का उल्लेख किया है, उसमें कीर्तन का दूसरी भक्ति के रूप में प्रतिपादन हुआ है। उसी कीर्तन भक्ति का यहाँ मानस की नवधा भक्ति में चौथी भक्ति के रूप में प्रतिष्ठापन किया गया है।

भक्ति का स्वरूप अतिशय व्यापक और गहन होने से उसके नाना रूप दृष्टिगत होते हैं। उसकी कोई एक सुनिश्चित सीमा रेखा नहीं हो सकती। भक्ति अन्तर्मन के भाव, रुचि और मनोवृत्तियों के अनुसार अपना रूप ले लेती है। भक्त की रुचि भिन्नता के अनुसार भक्ति के अनेक रूप हो सकते हैं। मानक हिन्दी कोश के अनुसार 'कीर्तन' शब्द की व्युत्पत्ति कृत+ल्युट–अन् करते हुए कीर्तन का अर्थ– किसी के गुण, यश आदि का बार–बार या बराबर किये जाने वाला कथन या बखान तथा ईश्वर या देवता के नाम और यश का बार–बार विशेषतः गाते–बजाते हुए किया जाने वाला कथन बताया है। भक्ति के रूप में आराध्य के नाम, रूप, लीला, धाम, गुण, यश, प्रभाव आदि का वाणी के द्वारा किए जाने वाला व्यक्तिगत या सामूहिक गायन ही कीर्तन है। कीर्तन वाद्य यंत्रों के साथ संगीतमय भी हो सकता है और बिना वाद्य यंत्रों के वाणी द्वारा भी।

नारद कीर्तन भक्ति के आचार्य हैं। वे भगवान के नाम, रूप, लीला एवं प्रभाव आदि का निरन्तर गान करते हुए अबाध गति से सर्वत्र विचरण करते हैं। इसी कीर्तन भक्ति का श्रीरामचरितमानस में शबरी के प्रति प्रभु श्रीराम नवधा भक्ति का उपदेश करते हुए चौथी भक्ति के रूप में इस प्रकार निर्देश करते हैं –

चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तजि गान।। (3/35)

अर्थात्–भगवान के नाम, रूप, गुण प्रभाव, चरित्र, तत्व और रहस्य आदि का श्रद्धा, प्रेम और विश्वास पूर्वक निर्मल मन से छलछिद्र व आडम्बर रहित होकर गान करना चौथी भक्ति

है।

चैतन्य महाप्रभु ने कीर्तन भक्ति की पराकाष्ठा और प्रभाव को जनमानस के सामने लाकर उसका व्यापक प्रचार–प्रसार किया और प्रतिष्ठा की। उन्हें भगवान का प्रेमावतार माना गया है। चैतन्य महाप्रभु के लीला चरित्र कीर्तन भक्ति के स्वरूप का दिग्दर्शन कराते हैं। उन्होंने 'शिक्षाष्टक' के रूप में आठ श्लोकों में कीर्तन भक्ति को प्रकाशित किया है। यहाँ संकेत रूप में उनमें अनुस्थूल भाव दृष्टव्य है –

चेतोदर्पणमार्जनं भव–महादावाग्नि–निर्वापणम्,
श्रैयःकैरव चन्द्रिका वितरणं विद्यावधू–जीवनम्।
आनंदाम्बुधिवर्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनम्,
सर्वात्मस्नपनं परं विजयते श्रीकृष्ण–संकीर्तनम्।।

अर्थात्–श्रीकृष्ण–संकीर्तन की परम विजय हो, जो हृदय में वर्षों से संचित मल का मार्जन करने वाला तथा बारम्बार जन्म–मृत्यु रूपी दावानल को शांत करने वाला है। यह संकीर्तन यज्ञ मानवता के लिए परम कल्याणकारी है, क्योंकि चन्द्र किरणों की तरह शीतलता प्रदान करता है। समस्त अप्राकृत विद्यारूपी वधू का यही जीवन है। यह आनंद के सागर की वृद्धि करने वाला और नित्य अमृत का आस्वादन कराने वाला है।

नाम्नाकारि बहुधा निज सर्व शक्तिः,
तत्रार्पिता नियमितः स्मरणे न कालः।
एतादृशी तव कृपा भगवन्ममापि,
दुर्दैवमीदृश मिहाजनि नानुरागः।।

अर्थात्–हे प्रभु! आपने अपने अनेक नामों में अपनी शक्ति भर दी है, जिनका किसी समय भी स्मरण किया जा सकता है। हे भगवन् आपकी इतनी कृपा है, परन्तु मेरा इतना दुर्भाग्य है कि मुझे उन नामों से प्रेम नहीं है।

तृणादपि सुनीचेन तरोरवि सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः।।

अर्थात्–स्वयं को तृण से भी छोटा समझते हुए, वृक्ष जैसे सहिष्णु रहते हुए, कोई अभिमान न करते हुए और दूसरों का सम्मान करते हुए सदा श्रीहरि का कीर्तन करना चाहिये।

नयनं गलदश्रुधारया वदनं गद्गदरुद्धया गिरा।
पुलकैर्निचितं वपुः कदा तव नाम ग्रहणे भविष्यति।।

अर्थात्–हे प्रभु, कब आपका नाम लेने पर मेरी आँखों के आँसुओं से मेरा चेहरा भर जाएगा, कब मेरी वाणी हर्ष से अवरुद्ध हो जाएगी, कब मेरे शरीर के रोम खड़े हो जाएँगे। इसी के सदृश्य कीर्तन भक्ति की परिपक्वावस्था की स्थिति का वर्णन इस प्रकार भी मिलता

है –

वाग् गद्गदा द्रवते यस्य चित्तं रुदति भीक्ष्णं हससिक्वचिच्च।
विलज्ज उद्गायति नृत्यते च मद्भक्ति युक्तो भुवनं पुनाति।।

अर्थात्–भगवान का चिन्तन करते हुए वाणी गद्गद हो जाये, चित्त द्रवित हो जाए। वह कभी प्रेम के वशीभूत होकर रोने लगे, हँसने लगे, बिना लज्जा किए गाने और नाचने लगे, वह व्यक्ति भगवान की भक्ति से युक्त होता है।

श्रीरामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में काकभुशुण्डिजी द्वारा कलियुग में भगवान के गुणानुवादों का गायन करके भवसागर से पार पाने का संकेत इस प्रकार किया गया है –

कलियुग केवल हरि गुन गाहा। गावत नर पावहिं भव थाहा।। (7/103/4)

'मानस' के अरण्यकाण्ड में श्रीराम ने लक्ष्मण के प्रति कीर्तन भक्ति का संकेत इस प्रकार किया है –

मम गुन गावत पुलक सरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा।। (3/16/11)

श्रीमद्भागवत में सर्वशुद्धि के लिए कीर्तन का ही संकेत किया गया है–

नैकान्तिकं तद्धिकृतेऽपि निष्कृते, मनः पुनर्धावति चेदसत्पथे।
तत्कर्म निर्हारमभीप्सतां हरे, गुणानुवादः खलु सत्व भावनः।।

अर्थात्–यदि प्रायश्चित करने के बाद भी मन पुनः कुमार्ग में पाप की ओर दौड़े तो वह चरम सीमा का पूर्ण प्रायश्चित नहीं है। इसलिए जो ऐसा प्रायश्चित करना चाहें, जिससे पाप कर्मों और वासनाओं की जड़ ही उखड़ जाये, उन्हें भगवान के गुणों का ही गान करना चाहिए, क्योंकि उससे चित्त सर्वथा शुद्ध हो जाता है।

तुलसीदासजी ने कीर्तन में कपट को त्यागने पर अतिरिक्त बल दिया है। कीर्तन में कपट कैसा? कपट का आशय क्या है? वस्तुतः यहाँ मन, वचन और कर्म में वैषम्य होना ही कपट है। मन में कुछ है, वाणी से कुछ और कहते हैं तथा करते कुछ और हैं, यही कपट है। यह स्थिति कीर्तन भक्ति के अनुकूल नहीं है। कीर्तन केवल वाणी का विषय न होकर प्रेम समन्वित मन से हो और तदनुरूप आचरण हो, तभी वह भक्ति है। वर्तमान में प्रायः कीर्तन केवल वाणी एवं श्रवण का विषय होकर मनोरंजन और आय के साधन का रूप लेता जा रहा है, उसमें न भाव है और न प्रेम। यहाँ एक अन्य यह भाव भी निहित है कि कीर्तन दिखावटी या बनावटी न होकर आडम्बर रहित भक्ति भाव के साथ प्रभु प्रेम के निमित्त होना चाहिए।

वस्तुतः निर्मल मन के बिना उपर्युक्त श्रीरामचरितमानस में वर्णित गद–गद गिरा नयन बह नीरा और पुलक सरीरा की उच्च भावात्मक स्थिति नहीं बन सकती। यही तो साध्य है। भक्ति साधन और साध्य दोनों है। वाणी से भगवान के नाम, रूप, गुण, प्रभाव एवं लीला आदि का गायन करते–करते प्रेम की उच्च भाव दशा में पहुँचना कीर्तन भक्ति है।

शूर्पणखा ने कहाँ सुनी नीति-कथा

श्री अवध किशोर दूबे, झारखण्ड, फोनः 8409925271

जिस रावण को विद्वत्ता का इतना अभिमान कि उसने ब्रह्माजी की नहीं सुनी, शंकरजी की नहीं सुनी और हनुमानजी का यह कहकर उपहास उड़ाया कि मिला हमहि कपि गुर बड़ ग्यानी। (5/24/3), उसने शूर्पणखा की नीति की यह बात कैसे सुन ली कि–

राज नीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा ।।
बिद्या बिनु बिबेक उपजाएँ। श्रम फल पढ़ें किएँ अरु पाएँ ।।
संग तें जती कुमंत्र ते राजा। मान ते ग्यान पान तें लाजा ।।
प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी। नासहिं बेगि नीति अस सुनी।। (3/21/8–11)
रिपु रुज पावक पाप प्रभु अहि गनिअ न छोट करि । (3/21क)

शूर्पणखा के मुख से ये नीति की बात बहुत गहरी है और रावण को लगा कि अवश्य ही इसे यह किसी विशिष्टतम महापुरुष से प्राप्त हुई है। इस कारण उसने नीति बात बिना किसी प्रतिक्रिया के सुन ली। विचारणीय है कि ये नीति का श्रेष्ठ उपदेश शूर्पणखा को कहाँ से प्राप्त हुआ, क्योंकि उसकी तुलना हरहाई गाय से की गई है, जो कपिला गाय को मार देती है। उसे सीताजी का रहना अच्छा नहीं लगा, इसलिए उन्हें समाप्त करना चाहती थी।

अब प्रश्न है कि नीति की बात उसने कहाँ से प्राप्त की?

इससे पूर्व के प्रसंग का अवलोकन करने पर इस प्रश्न का उत्तर मिल जाता है। पंचवटी में भैया लक्ष्मणजी ने रामजी से ज्ञान, भक्ति, वैराग्य, माया और नीति के बारे में पूछा और रामजी उन्हें उपदेश दे रहे थे। उन्होंने पहले भक्ति योग की कथा कही, उस समय शूर्पणखा नहीं धमकी (पहुँची), उन्होंने जब वैराग्य की कथा कही तो उस समय भी नहीं धमकी, उन्होंने ज्ञान की कथा कही, उस समय भी नहीं धमकी, उन्होंने गुण की कथा कही उस समय भी नहीं आई, किन्तु जब नीति की कथा चल रही थी कि शूर्पणखा आ गई। इसका प्रमाण है तुलसी की लेखन कला में इस प्रकार से मिलता है–

भगति जोग सुनि अति सुख पावा। लछिमन प्रभु चरनन्हि सिरु नावा।।
एहि बिधि गए कछुक दिन बीती। कहत बिराग ग्यान गुन नीती ।। (3/17/1–2)

बस नीति की कथा चल रही थी तभी,

सूपनखा रावन कै बहिनी। दुष्ट हृदय दारुन जस अहिनी।।
पंचबटी सो गइ एक बारा। देखि बिकल भइ जुगल कुमारा।।(3/17/3–4)

नीति पर ऐसा यथार्थ और संक्षिप्त ज्ञान रावण ने कभी नहीं सुना था और आज शूर्पणखा से सुना तो आश्चर्यचकित हो गया। सच मानिए तो रावण का इस नीति–कथा के माध्यम से पहला आकर्षण था और वह वहाँ पहुँचना चाहता है, जहाँ से नीति कथा शूर्पणखा ने सुनी।

गएँ सरन प्रभु राखिहैं

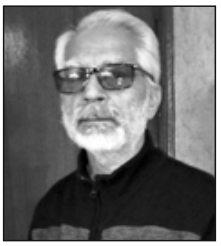

श्री देवेन्द्र शर्मा, गुरुग्राम, फोनः 9810199441

निवेदन है कि उपर्युक्त परम कल्याणकारी सूत्र श्रीरामचरितमानस के अन्तर्गत सुन्दरकाण्ड में श्रीहनुमानजी और लंकाधिराज रावण के बीच हुए संवाद का एक अंश है और श्रीहनुमानजी द्वारा परम अहंकारी रावण को दिया गया एक वचन है कि तुम कितने ही घोर अपराधी एवं पापी क्यों न हो, परन्तु यदि तुम अब भी शरणागतवत्सल प्रभु श्रीराम की शरण में चले जाओगे तो वे परमशरण्य, शरणागत का सर्वथा पालन करने वाले, करुणा के सागर और खर–दूषण का वध करने वाले श्रीभगवान तुम्हारे सारे अपराधों को बिसार कर तुम्हें अपनी परम सुखमय शरण में रख लेंगे।

अब यदि शरणागति के अर्थ और उद्देश्य पर विचार करें तो हम पाते हैं कि शरणागति का अर्थ है कि–किसी संकटग्रस्त व्यक्ति का अपनी रक्षा–सुरक्षा तथा योग–क्षेम के लिए किसी अन्य व्यक्ति के पास जाना और यह दायित्व वही संभाल सकता है जो निश्चित तौर पर शरणागत से कहीं अधिक सामर्थ्यवान और शक्तिवान हो, इसलिए शरणागत के लिए यह अति आवश्यक हो जाता है कि वह जिसकी शरण में जाना चाहता है, पहले उसकी शक्ति और सामर्थ्य के बारे में जाने और जानकर उस पर अपना विश्वास दृढ़ करे। गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी महाराज, श्रीरामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में सभी प्रकार के शरणागति–इच्छुकों को और विशेषकर भक्ति मार्गियों को पूरी सजगता बरतने की सलाह देते हैं कि शरण में जाने से पहले शरण्य के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करनी चाहिए क्योंकि–

जानें बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती।
प्रीति बिना नहिं भगति दिढ़ाई।। **(7/89/7–8)**

अतः बुद्धिमानी इसी में है कि शरण उसी की ली जाये जो यह कहने में समर्थ हो कि–

सखा सोच त्यागहु बल मोरें। सब बिधि घटब काज मैं तोरें।। (4/7/10)

और शरण्य के प्रति विश्वस्त शरणागत भी पूरी तरह से निर्भय और सुखी हो जाए। शरणागति लेने के बाद उसके मन–बुद्धि में अपने हित के प्रति किसी भी प्रकार की आशंका न रह जाए और न ही उसे अपनी किसी समस्या के समाधान के लिए कोई और विकल्प ढूँढ़ना पड़े।

निवेदन है कि प्रस्तुत विषय के संदर्भ में परमादरणीय गुरु और ग्रंथ इस बात का समुचित ज्ञान देते हैं कि ऐसा परम सामर्थ्यवान, परम शक्तिमान और परम दयालु शरण्य यदि कोई है तो वे श्रीभगवान ही हैं, अब उनका नाम–रूप चाहे जो भी हो। श्रीगोस्वामीजी, श्रीराम रूप में श्रीभगवान के सामर्थ्य और शक्ति का वर्णन करते हुए कहते हैं–श्रीभगवान और उनके नामरूप तथा गुणों की महिमा अमित है, क्योंकि वे अनन्त हैं। वे अरबों कामदेवों के समान सुन्दर, अरबों श्रीदुर्गा देवियों के समान शत्रुओं का मर्दन करने में समर्थ, अरबों इन्द्र देवों के समान ऐश्वर्यशाली, अरबों आकाशों के समान आश्रय देने वाले, अरबों पवनों (हवा) के समान बलशाली, अरबों सूर्यों के समान प्रकाशवान, अरबों चन्द्रमाओं के समान शीतल, अरबों कालों (काल) के समान दुस्तर दुर्ग और दुरन्त हैं। वे अरबों धूमकेतुओं के समान प्रबल, अरबों पातालों के समान अगाध, अरबों तीर्थों के समान पावन, करोड़ों हिमालयों के समान अचल, अरबों समुद्रों के समान गंभीर और अरबों कामधेनुओं के समान इच्छित वस्तुएँ प्रदान करने वाले हैं। वे अरबों श्रीसरस्वती देवियों के समान चतुर, अरबों श्री ब्रह्माओं के समान सृष्टि–निपुण, करोड़ों श्रीविष्णुदेवों के समान पालनकर्ता, अरबों श्रीरुद्रदेवों के समान संहारक, अरबों कुबेरों के समान धनवान, करोड़ों मायाओं के समान प्रपंच–निपुण और अरबों शेषनागों के समान भार वहन करने में समर्थ हैं (श्रीरामचरितमानस /7/91–92)। श्रीगोस्वामीजी आगे लिखते हैं–**निरुपम न उपमा आन राम समान रामु निगम कहै (7/दोहा 92 से पूर्व का छंद)**। वेदों में भी ऐसा लिखा है कि भगवान श्रीराम निरुपम हैं और श्रीराम के समान श्रीराम ही हैं। दूसरा कोई और उनके समान है ही नहीं। महाराज मनु ने जब श्रीभगवान से यह वरदान मांगा–

चाहउँ तुम्हहि समान सुत प्रभु सन कवन दुराउ।। (1/149)

तब श्रीभगवान ने प्रसन्न होकर महाराज मनु को वरदान देते हुए स्वयं भी यही कहा–

आपु सरिस खोजौं कहँ जाई। नृप तव तनय होब मैं आई।। (1/150/2)

अर्थात् हे राजन! तुम्हें अपने समान पुत्र प्रदान करने के लिए मैं अपने समान ढूँढ़ने कहाँ जाऊँ, क्योंकि मेरे समान दूसरा और कोई है ही नहीं। ऐसी स्थिति में मैं स्वयं ही तुम्हारा पुत्र बनूँगा।

अनन्त श्रीभगवान के अनन्त गुणों और महिमा के संदर्भ में उपर्युक्त जो कुछ भी वर्णन किया गया है, वह भगवान भाष्कर के सामने कुछ जुगुनुओं के प्रकाश के समान ही कहा जा सकता है। लेकिन उपर्युक्त वर्णन से निश्चित तौर पर इतना ज्ञान तो अवश्य मिलता है कि हम संसारी जीवों के समस्त मनोरथों की पूर्णता, हर समस्या का समाधान और हर संकट का मोचन श्रीभगवान की शरण में जाने से ही हो सकता है और यह सब जानने के बाद भी हम इस पर विश्वास करके यदि श्रीभगवान की शरण ग्रहण नहीं करते हैं तो फिर उत्तर में

श्रीगोस्वामीजी के उलाहने भी बड़े तीखे और स्पष्ट हैं–

जानतहूँ अस प्रभु परिहरहीं। काहे न बिपति जाल नर परहीं।। (4/12/5)
जानतहूँ अस स्वामि बिसारी। फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी।। (5/8/1)

अर्थात् ऐसे अनन्त, अमित सामर्थ्यवान, असीम शक्तिवान और करुणानिधान श्रीभगवान को भुला कर इधर–उधर भटकने पर तो दुःख और विपत्तियाँ ही मिलेंगी।

अब यहाँ पर दो पक्ष बन गए। पहला पक्ष श्रीभगवान का है, जिन्हें पूर्व में अरबों आकाशों के समान आश्रयदाता बताया गया है, जिसका सीधा सा अर्थ यह है कि वे अनन्त श्रीभगवान अनन्त शरणागतों को शरण देने में और उनका योग–क्षेम वहन करने में समर्थ हैं। दूसरा पक्ष है हम जैसे संसारी जीवों का जो श्रीभगवान की शरण में जाना चाहते हैं। परम शरण्य श्रीभगवान से भक्त का साक्षात्कार हो और उसे श्रीभगवान की परम कल्याणमयी–परम सुखमयी शरणागति प्राप्त हो जाए, यही भक्ति–मार्गीय साधक का परम लक्ष्य होता है।

निवेदन है कि श्रीभगवान से भक्त का साक्षात्कार तीन स्थितियों में होता है। पहली स्थिति तो यह है कि श्रीभगवान कृपा करके स्वयं चलकर भक्तों के पास जाएँ जैसे–**सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह (3/9)**। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–महाराज श्रीदशरथ के पुत्र रूप में श्रीभगवान स्वयं आए। तदुपरान्त अयोध्या से जनकपुर और फिर अयोध्या से लंका तक की यात्रा श्रीभगवान ने स्वयं ही की जिसका एकमात्र उद्देश्य था–

भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जग जाल।।(2/93)

उपर्युक्त दोनों यात्राओं में श्रीभगवान ने अयोध्या और जनकपुर वासियों को तथा महर्षि वसिष्ठ, महर्षि विश्वामित्र और महर्षि अगस्त्य जैसे परम ज्ञानी, तपस्वी, त्रिकालज्ञ और नाना प्रकार के तपबलों से युक्त एवं श्रेष्ठ अनेक ऋषि–मुनियों से लेकर परम दीन शबरी जैसे भक्तों को स्वयं ही उनके पास जाकर साक्षात्कार लाभ प्रदान किया। दूसरे, दीन ताड़का से लेकर परम ज्ञानी किन्तु महा अहंकारी रावण तक को मुक्ति प्रदान की। तीसरे वे जन हैं जिन्होंने सुना कि कोई परम सुन्दर एवं दर्शनीय पुरुष हमारे नगर, गाँव अथवा वन में पधारे हैं तो यह सुनकर वे अपने सारे दैनिक काम–काजों को जहाँ का तहाँ छोड़कर, श्रीभगवान के दर्शन को दौड़ पड़े–

(क) अयोध्यावासीः–

जिन्ह बीथिन्ह बिहरहिं सब भाई। थकित होहिं सब लोग लुगाई।। (1/204/8)
कौसलपुर बासी नर नारि बृद्ध अरु बाल।

प्रानहु ते प्रिय लागत सब कहुँ राम कृपाल।। (1/204)

(ख) जनकपुरवासीः–

देखन नगरु भूपसुत आए। समाचार पुरबासिन्ह पाए।।
धाए धाम काम सब त्यागी। मनहुँ रंक निधि लूटन लागी।।
निरखि सहज सुंदर दोउ भाई। होहिं सुखी लोचन फल पाई।।

(1/220/1–3)

(ग) गाँववासीः–

सीता लखन सहित रघुराई। गाँव निकट जब निकसहिं जाई।।
सुनि सब बाल बृद्ध नर नारी। चलहिं तुरत गृह काजु बिसारी।।
राम लखन सिय रूप निहारी। पाइ नयन फलु होहिं सुखारी।।

(2/114/1–3)

(ख) वनवासीः–

यह सुधि कोल किरातन्ह पाई। हरषे जनु नव निधि घर आई।।
कंद मूल फल भरि भरि दोना। चले रंक जनु लूटन सोना ।।

(2/135/1–2)

करहिं जोहारु भेंट धरि आगे। प्रभुहि बिलोकहिं अति अनुरागे।।
चित्र लिखे जनु जहँ तहँ ठाढ़े। पुलक सरीर नयन जल बाढ़े ।।

(2/135/5–6)

प्रभुहि जोहारि बहोरि बहोरी। बचन बिनीत कहहिं कर जोरी ।।

(2/135/8)

हम सब धन्य सहित परिवारा। दीख दरसु भरि नयन तुम्हारा ।।

(2/136/3)

इस श्रेणी के जन अनपढ़ और भोले–भाले थे। वे न तो श्रीभगवान के स्वभाव को जानते थे और न ही प्रभाव को, लेकिन श्रीभगवान के परम सुन्दर स्वरूप के बारे में सुनकर – **'धाए धाम काम सब त्यागी' अथवा चलहिं तुरत गृह काजु बिसारी'**– श्रीभगवान के परम सुन्दर स्वरूप के दर्शन की तीव्र लालसा ने इनके, **'गृह कारज नाना जंजाला। ते अति दुर्गम सैल बिसाला।। (1/38/8)** – घर–गृहस्थी के कामकाज रूपी विशाल पहाड़, जो भक्ति मार्ग में आगे बढ़ने ही नहीं देते, सहजता से छुड़वा दिए/पार करवा दिए और ये जन श्रीभगवान की रूपमाधुरी का रसपान करके ही धन्य हो गए।

दूसरी स्थिति में चौथी श्रेणी के जन आते हैं और इन्हें भी श्रीभगवान का साक्षात्कार और शरणागति लाभ प्राप्त हुआ। इस श्रेणी के अन्तर्गत आने वाले जन अपनी स्थिति–परिस्थितियों वश और श्रीभगवान का स्वभाव एवं प्रभाव जानने के बाद ही शरणागत

हुए, उनमें श्रीसुग्रीवजी और श्रीविभीषणजी के नाम प्रमुखता से लिए जा सकते हैं।

श्रीसुग्रीवजी के संदर्भ में ज्ञातव्य है कि वे विषम परिस्थितियों से गुजर रहे थे। उनके परम मित्र एवं सहयोगी श्रीहनुमानजी, भगवान श्रीराम और श्रीलक्ष्मणजी को श्रीभगवान के रूप में अच्छी तरह से पहचान कर, उन्हें श्रीसुग्रीवजी के पास लाते हैं और परिचय कराकर विश्वास दिलाते हैं कि ये साक्षात श्रीभगवान ही हैं और उनकी सारी समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। इस अवसर पर श्रीगोस्वामीजी जिस शब्दावली का प्रयोग करते हैं वह इस प्रकार है–

कीन्हि प्रीति कछु बीच न राखा। लछिमन राम चरित सब भाषा। (4/5/1)

भगवान श्रीराम की महिमा के बारे में शायद ही कोई ऐसी चीज बची होगी जो श्रीहनुमानजी और श्रीलक्ष्मणजी ने श्रीसुग्रीवजी को न बताई हो और जब श्रीसुग्रीवजी का दुःख सुनने के बाद श्रीभगवान ने कहा–

सुनु सुग्रीव मारिहउँ बालिहि एकहिं बान।
ब्रह्म रुद्र सरनागत गएँ न उबरिहिं प्रान।। (4/6)

फिर भी श्रीसुग्रीवजी अपने बड़े भाई, महापराक्रमी बाली से इतने भयग्रस्त थे कि श्रीभगवान की शरणागति स्वीकार करने से पूर्व उन्होंने उनकी भी परीक्षा ले ही ली–

कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा। बालि महाबल अति रनधीरा।।
दुंदुभि अस्थि ताल देखराए। बिनु प्रयास रघुनाथ ढहाए।।
देखि अमित बल बाढ़ी प्रीती। बालि बधब इन्ह भइ परतीती।। (4/7/11–13)

और तदुपरान्त ही वे कह पाए–

अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँति। सब तजि भजनु करौं दिन राती।। (4/7/21)

निःसंदेह ही श्रीविभीषणजी भक्त हृदय थे और लंका में रावणादि के द्वारा धर्म–प्रतिकूल आचरण से प्राप्त मानसिक क्लेश को छोड़कर परिस्थितियाँ उनके अनुकूल ही थीं। लेकिन दण्डकारण्य में रावण के ही समान महापराक्रमी खर–दूषण के वध और रावण द्वारा श्रीसीताजी को छल–बल पूर्वक हरण करके लंका में लाने के बाद परिस्थितियाँ बदल गईं। खर–दूषण का वध श्रीभगवान ही कर सकते हैं, इस तथ्य को रावण ने भी स्वयं स्वीकारा–

खर दूषन मोहि सम बलवंता। तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता।। (3/23/2)

इधर श्रीविभीषणजी को जगजननी श्रीसीताजी का लंका में आगमन पूरे निशिचर वंश के लिए कालरात्रि के रूप में दिखा और श्रीहनुमानजी के द्वारा सारी अभेद्य सुरक्षा–व्यवस्थाओं को भंग करके लंका–दहन की घटना ने तो उन्हें आश्वस्त ही कर दिया कि अब निशिचर वंश का अंतकाल आ गया है। तब उनके भक्त हृदय ने श्रीभगवान के परम

भक्त श्रीहनुमानजी के उन वचनों को याद किया, जो उन्होंने लंका दरबार में रावण के प्रति कहे थे कि–

प्रनतपाल रघुनायक करुना सिंधु खरारि।
गएँ सरन प्रभु राखिहैं तव अपराध बिसारि।। (5/22)

ध्यान देने योग्य बात यह है कि उपर्युक्त दोहे की शब्दावली में श्रीभगवान के प्रण, प्रतिष्ठा, पराक्रम तथा स्वभाव चारों की महिमा का वर्णन है। श्रीभगवान का प्रण है कि वे प्रणतपाल हैं–

मन पन सरनागत भयहारी। (5/43/8)

और वे प्रणतपाल श्रीभगवान शरणागत को अपने प्राणों के समान सुरक्षित रखने की घोषणा करते हैं –

जौं सभीत आवा सरनाईं। रखिहउँ ताहि प्रान की नाईं।। (5/44/8)

श्रीभगवान की प्रतिष्ठा यह है कि उन्होंने सूर्यवंश/रघुवंश में अवतार लिया है और वे ऐसे विशाल और समृद्ध अयोध्या साम्राज्य के नायक हैं कि जिसके ऐश्वर्य को देखकर स्वर्गाधिपति देवराज इन्द्र भी सिहाते हैं और धनाध्यक्ष कुबेर लजाते हैं–

भूमि सप्त सागर मेखला। एक भूप रघुपति कोसला।। (7/22/1)
राम राज कर सुख संपदा। बरनि न सकइ फनीस सारदा।। (7/22/6)
अवध राजु सुर राजु सिहाई। दसरथ धनु सुनि धनदु लजाई।। (2/324/6)

श्रीभगवान के पराक्रम (शक्ति–सामर्थ्य) के संदर्भ में तो पूर्व में चर्चा हो ही चुकी है फिर भी यहाँ पर प्रयुक्त, 'खरारि'–शब्द उनके पराक्रम अर्थात् शक्ति–सामर्थ्य का द्योतक है। भाव यह है कि खर–दूषण, रावण–कुंभकरण और मेघनाद सभी महाबलशाली तथा महापराक्रमी थे, लेकिन श्रीभगवान ने खर–दूषण का सेना सहित बड़ी सुगमता से क्षणभर में विध्वंस कर दिया–

करि उपाय रिपु मारे छन महुँ कृपानिधान।। (3/20क)

श्रीभगवान का स्वभाव है कि वे करुणा के सिन्धु हैं और श्रीभगवान के इस परम करुणामय स्वभाव के बारे में कुछ भी कहना भगवान सूर्य को दीप दिखाने और आकाश के तारे गिनने के प्रयास के बराबर होगा। लंकाकाण्ड में युद्ध की कथा सुनते हुए माता श्रीपार्वतीजी की शंका का समाधान करते हुए देवाधिदेव महादेव कहते हैं–

उमा राम मृदुचित करुनाकर। बयर भाव सुमिरत मोहि निसिचर।। (6/45/4)

अर्थात् हे देवी! भगवान श्रीराम की कृपालुता अनन्त है। वे निशाचरों को भी मरणोपरान्त अपना धाम इसलिए प्रदान करते हैं, क्योंकि वे उनका नित्य स्मरण करते थे, चाहे वे शत्रुभाव से ही क्यों न करते हों। श्रीभगवान के स्वभाव को यथार्थ में जानने वाले

जगद्गुरु भगवान श्रीशंकर, श्रीभगवान के स्वभाव के बारे में अपने मन की बात इस प्रकार प्रकट करते हैं–

उमा राम सुभाउ जेहिं जाना। ताहि भजनु तजि भाव न आना। । (5/34/3)

जगज्जननी श्रीपार्वतीजी विवाह से पूर्व जनकनन्दिनी राजकुमारी श्रीसीताजी को श्रीभगवान के स्वभाव का परिचय देती हुई वरदान स्वरूप में कहती हैं कि जिन सहज सुन्दर साँवरे को तुमने अपने मन ही मन में वरण कर लिया है वे तो–

करुनानिधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो–है। (1/236 से पूर्व का छन्द)

निवेदन है कि अपने इसी परम करुणामय स्वभाववश छल–कपट से पूर्णतया परहेज करने वाले श्रीभगवान उन जनों को भी अपनाते हैं जो भोलेपन अथवा किसी विवशता के कारण कपटरूप में शरणागत हुए जैसे–श्रीहनुमानजी महाराज (भोलेपन से) तथा अभंग प्रीतिरत राक्षस मारीच और लंकाधिराज रावण के विशेष दूत–शुक और सारण (विवशतावश)–

गएँ सरन प्रभु राखिहैं तव अपराध बिसारि। (5/22)

उपर्युक्त दोहे की इस पंक्ति में श्रीभगवान के करुणासिन्धु स्वभाव का ही विस्तार किया गया है कि श्रीभगवान अपने करुणासिन्धु स्वभाववश शरणागत के बड़े से बड़े अपराध को बिसार के उसे तुरन्त अपने संरक्षण में ले लेते हैं।

श्रीविभीषणजी, श्रीहनुमानजी के उपर्युक्त शब्दों पर गंभीरता से विचार करते हैं और जब वे अपनी तुलना लंकापति रावण से करते हैं तो पाते हैं कि 'खरारि' वाला मार्ग तो रावण ने पहले ही अपना रखा है, जिसे छोड़ने के लिए वह तैयार भी नहीं है। दूसरे, यह मार्ग तो उनको पहले ही पसंद नहीं था, लेकिन तात्कालिक परिस्थितियाँ तो विषमतम स्थिति में पहुँच चुकी थीं और उनसे उबरना अति आवश्यक था, अतः भक्त हृदय श्रीविभीषणजी ने श्रीभगवान के 'करुणासिन्धु, प्रनतपाल' और 'गएँ सरन प्रभु राखिहैं तव अपराध बिसारि' वाला मार्ग ही अपनाना पसंद किया और वे श्रीहनुमानजी के मुख से सुने हुए श्रीभगवान के प्रण, प्रतिष्ठा, पराक्रम तथा स्वभाव चारों की ही दुहाई देते हुए श्रीभगवान के शरणापन्न होते हैं, यथा–

श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर।। (5/45)

एक दृष्टिकोण से तो श्रीविभीषणजी को स्वार्थी कहा जा सकता है, क्योंकि खरारि वाला मार्ग अपनाने पर तो रावणादि अन्य राक्षसों के साथ उनकी भी मृत्यु निश्चित ही थी। इसलिए वे अपने सगे भाई–बन्धुओं को, यहाँ तक कि अपने निजी परिवार–पत्नी आदि को भी लंका में ही राम भरोसे छोड़कर श्रीभगवान की शरण में चले आए, जिसके लिए आज भी

कुछ लोग उनके लिए घर का भेदी तथा कुलद्रोही जैसे विशेषणों का प्रयोग करने से नहीं चूकते। लेकिन स्वार्थी–संज्ञक ये सभी अभिशाप भी तब वरदान में बदल जाते हैं, जब हम श्रीगोस्वामीजी के इन वचनों को जीवन में धारण कर लें, जो उन्होंने परम भक्त श्रीकाकभुशुण्डिजी के श्रीमुख से कहलवाए हैं–

स्वारथ साँच जीव कहुँ एहा। मन क्रम बचन राम पद नेहा।। (7/96/1)

क्योंकि यह स्वार्थ परमार्थ को सिद्ध करने वाला है–

सखा परम परमारथु एहू। मन क्रम बचन राम पद नेहू।। (2/93/6)

क्योंकि–

राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अबिगत अलख अनादि अनूपा।। (2/93/7)

श्रीविभीषणजी, श्रीभगवान के शरणागत होने और उनका परम कल्याणमय उपदेश सुनने के बाद ही 'मन क्रम बचन राम पद नेहा' की अवस्था को प्राप्त होते हैं, जिसका प्रमाण है, उनका श्रीभगवान से भगवान श्रीशंकर के मन–भावनी भक्ति के वरदान की याचना करना, यथा–

अब कृपाल निज भगति पावनी। देहु सदा सिव मन भावनी।। (5/49/7)

तीसरी स्थिति तो भक्ति मार्ग की परम उत्कृष्ट स्थिति है। इस स्थिति में तो भक्त–

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे।। (श्रीगीताजी 18/65)

जो सदैव ही, हर प्रकार से श्रीभगवानमय रहता है। ऐसे भक्त के संदर्भ में परम शरण्य श्रीभगवान के वचन हैं–

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः।। (श्रीगीताजी 8/14)

अर्थात् जो अनन्य भाव से सतत मेरा ही स्मरण करता है। ऐसे भक्त को मेरी शरण ग्रहण करने के लिए कहीं भी चलकर जाने की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि **'मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयः' (श्रीगीताजी 8/7)**। वह तो मन–वचन–कर्म तीनों प्रकार से सदैव ही मेरे शरणागत होता है अर्थात् वह मुझे ही प्राप्त होता है। ऐसे अनन्य भक्त के लिए मुझे भी उसके पास चलकर जाने की आवश्यकता नहीं होती है, उसे मैं वहीं सुलभ होता हूँ, उसके हृदय में प्रकट रहकर, उसे निरन्तर प्राप्त रहता हूँ–

बचन कर्म मन मोरि गति भजनु करहिं निःकाम।
तिन्ह के हृदय कमल महुँ करउँ सदा बिश्राम।। (3/16)

अब यदि शरणागति प्रदान करने के संदर्भ में परम शरण्य श्रीभगवान के पक्ष पर गंभीरता से ध्यान दिया जाए तो परमादरणीय गुरु–ग्रंथों और सत्संग से प्राप्त ज्ञान के अनुसार श्रीभगवान का द्वार शरणागत के लिए सदैव ही खुला है और शरणागत को शरणागति प्रदान करने के संदर्भ में श्रीभगवान स्वयं को सब प्रकार के बंधनों से मुक्त और स्वतंत्र घोषित करते हैं। विभिन्न प्रसंगों में श्रीभगवान कहते हैं कि शरणागत को मैं हर स्थिति–परिस्थिति में स्वीकार करता हूँ, बशर्ते कि वह अनन्यभाव से मेरी शरण में आए, अर्थात् मन–क्रम–वचन तीनों प्रकार से मुझे ही समर्पित हो, जैसे–

1. **सकृदेव देव प्रपन्नाय च याचते।।**
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम।। (श्रीवा.रा./यु.का. 18/33)
2. **सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।।**
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।। (श्रीगीताजी 18/66)
3. **अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।।**
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।। (श्रीगीताजी 9/22)
4. **सुनु मुनि तोहि कहउँ सहरोसा। भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा।।**
करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी। जिमि बालक राखइ महतारी।।
(3/43/4–5)

अर्थात् (1) जो एक बार भी शरण में आकर मैं तुम्हारा हूँ ऐसा कहकर मुझ से रक्षा की प्रार्थना करता है, उसे मैं समस्त प्राणियों से अभय कर देता हूँ, ऐसा मेरा सदा के लिए व्रत है। (2) जो सब प्रकार के सांसारिक धर्मों को त्याग कर केवल मुझ एक ही की शरण में आ जाता है, उसे मैं संपूर्ण पापों और शोक से मुक्त कर देता हूँ। (3) जो अनन्य भाव से केवल मेरा ही चिन्तन करता है, ऐसे अनन्य भाव से केवल मेरे ही चिन्तन में युक्तभक्त के योग–क्षेम को मैं स्वयं वहन करता हूँ। (4) जो संसार के समस्त भरोसों को त्याग कर केवल मेरा ही भजन करता है, ऐसे साधक/भक्त की मैं (श्रीभगवान) इस प्रकार रखवाली करता हूँ, जैसे एक माँ अपने नन्हे बालक की करती है। श्रीभगवान आगे कहते हैं–

सगुन उपासक परहित निरत नीति दृढ़ नेम।
ते नर प्रान समान मन जिन्ह के द्विज पद प्रेम।। (5/48)

और

तुम्ह सारिखे संत प्रिय मोरें। धरउँ देह नहिं आन निहोरें।। (5/48/8)

अर्थात् जो जन मेरे सगुण रूप के उपासक हैं, जो सदा नीति–रत–व्यवहार करते हैं, जो गुरु और ग्रंथों द्वारा निर्देशित नियमों पर दृढ़ रहते हैं और जो ब्राह्मणों (ब्रह्मज्ञों) के चरणों में प्रीति रखते हैं, ऐसे भक्त मुझे अपने प्राणों के समान प्रिय हैं और तो और मैं केवल ऐसे भक्तों के लिए ही शरीर धारण करता हूँ/अवतार लेता हूँ–किसी अन्य कारण से नहीं।

निवेदन है कि शरणागति प्रदान करने के प्रस्तुत संदर्भ में श्रीभगवान के पक्ष की चरम सीमा अथवा सीमित उत्कृष्टता के दर्शन के लिए आगे के वचनों पर ध्यानाकर्षण प्रार्थनीय है। प्रस्तुत लेख में निवेदित अब तक के सारे उद्धरण तो श्रीभगवान के प्रति अनुकूलता से ही सम्बन्धित हैं और अनुकूलता में अनुकूल रहना तो एक साधारण मनुष्य का स्वभाव होता है। लेकिन प्रतिकूलता में भी अनुकूल रहना तो श्रीभगवान और उनके अनन्य भक्तों का ही स्वभाव बताया गया है। तीसरा, कोई और प्रतिकूलता में अनुकूल रह ही नहीं सकता। शरणागति प्रदान करने के संदर्भ में भी प्रतिकूल स्थिति में श्रीभगवान की अनुकूलता का इससे अच्छा शायद ही कोई और उदाहरण मिलेगा। श्रीभगवान कहते हैं–

कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू ।। 5/44/1)
जौं सभीत आवा सरनाई । रखिहउँ ताहि प्रान की नाईं।। (5/44/8)

जौं नर होइ चराचर द्रोही। आवै सभय सरन तकि मोही।। (5/48/2)
तजि मद मोह कपट छल नाना। करउँ सद्य तेहि साधु समाना।। (5/48/3)

श्रीभगवान के उपर्युक्त शब्दों का भाव यह है कि जिनको मैं परमपूज्य मानता हूँ ऐसे करोड़ों ब्राह्मणों का वध करने वाले को भी शरण में आने पर मैं तुरन्त स्वीकार कर लेता हूँ। जो चराचर का द्रोही हो, लेकिन अपने विश्वद्रोह रूपी पाप से डरकर और अपने किए पर प्रायश्चित करता हुआ मद, मोह, कपट और छल त्याग कर मेरी शरण में आ जाये तो उसे मैं तुरन्त साधु के समान बना देता हूँ। इस पर किसी ने श्रीभगवान से पूछ लिया कि भगवन! करोड़ों विप्रों के वधी और चराचर द्रोही को तुरन्त साधु–समान बनाने से आपका क्या तात्पर्य है? तो करुणानिधान श्रीभगवान ने उत्तर में कहा कि विश्वद्रोही जैसा जीव यदि सच्चे मन से प्रायश्चित करे और सत्य संकल्प के द्वारा मद, मोह, कपट और छल को त्याग कर मेरी शरण में आ जाए तो उसके परम हित के लिए, उसे तुरन्त साधु बनाने के अलावा मेरे पास कोई और विकल्प है ही नहीं। क्योंकि साधु ही एक ऐसा जन होता है जो इन दोषों से कभी भी ग्रस्त नहीं होता और इन दोषों से मुक्त होने के बाद ही व्यक्ति साधु की योग्यता से युक्त होता है। तुरन्त साधु बनाने/करने का भाव यह है कि इससे पहले कि प्रायश्चित करके शरण में आया शरणागत अपने पूर्वकृत हिंसक कृत्यों का पुनः स्मरण कर पाए, मैं उसे अविलम्ब साधु बना देता हूँ जिससे कि वह दोबारा हिंसा के पथ पर कदम न रख पाए। इतना ही नहीं, मैं उसे, स्वयं से अधिक सम्मान दिलाने की शिक्षा देता हूँ–

सातवँ सम मोहि मय जग देखा। मोतें संत अधिक कर लेखा।। (3/36/3)

अब उपर्युक्त विशेष स्थिति पर विचार करें कि जो श्रीभगवान, ब्राह्मणों (ब्रह्मज्ञ जनों) को अपना परम पूज्य और स्वयं को उनका सेवक मानते हैं और अरण्यकाण्ड में कबन्ध को उपदेश करते हुए कहते हैं कि–

सुनु गंधर्ब कहउँ मैं तोही। मोहि न सोहाइ ब्रह्मकुल द्रोही।। (3/33/8)
मन क्रम बचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव।
मोहि समेत बिरंचि सिव बस ताकें सब देव।। (3/33)
सापत ताड़त परुष कहंता। बिप्र पूज्य अस गावहिं संता।। (3/33/1)

अन्य प्रसंग में परमकृपालु आशुतोष भगवान श्रीशंकर भी श्रीकाकभुशुण्डिजी को उपदेश में कहते हैं कि–

इंद्र कुलिस मम सूल बिसाला। कालदंड हरि चक्र कराला।।
जो इन्ह कर मारा नहिं मरई। बिप्र द्रोह पावक सो जरई।। (7/109/13–14)

(लेख का शेष भाग अगले अंक में)

राम-वन-गमन में निर्दोष थीं कैकेयी

श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल' साहित्याचार्य, नोएडा, फोनः 9311384212

राम–कथा में माता कैकेयी का नाम सबसे अधिक बदनाम है। जिसने समस्त प्राणियों के प्राणाधार सुखधाम श्रीराम को बिना अपराध के वनवास देने का पाप किया, उसे पापिनी न कहा जाए तो क्या कहा जाए? जिसके कारण पवित्र सूर्यकुल पर कलंक लगा, उसे कुल–कलंकिनी न कहा जाए तो क्या कहा जाए? जिसके कारण संगठित परिवार बिखर गया, उसे कुलनाशिनी न कहा जाये तो और क्या कहा जाए? जिसके कारण महाराज दशरथ का मरण हुआ, उसे पति–हत्यारिन न कहा जाए तो क्या कहा जाए? जगज्जीवों के जीवनाधार श्रीराम जिसकी आँख के काँटे बन गए, उस पर गालियों की बौछार न हो तो किस पर हो? जिसे उसके ही बेटे भरत ने पापिनी, कुलनाशिनी, कुमति, कपट–पाप और अवगुणों की खान कहकर त्याग दिया हो, उसे कौन व्यक्ति सम्मान देगा?

लाखों वर्ष बीत जाने पर आज भी नर–नारी कैकेयी का नाम सुनते ही नाक–भौं सिकोड़ लेते हैं और दो–चार गाली देने से बाज नहीं आते, परन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि माता कैकेयी अवगुणों की खान थीं। उनमें कोई गुण था ही नहीं। सत्य बात तो यह है कि कैकेयी भगवान श्रीराम की अनन्य भक्त थीं और राम–वन–गमन में निर्दोष थीं। इसी सच्चाई को उद्धृत करना इस लेख का उद्देश्य है।

महारानी कैकेयी महाराज कैकय की पुत्री और अयोध्या नरेश दशरथ की छोटी रानी थीं। वे केवल परम सुन्दरी ही नहीं, अपितु परम पतिव्रता और वीरांगना भी थीं। उनमें सरलता, दयालुता, निर्भयता आदि गुण मौजूद थे। उन्होंने प्रेम और सेवा से महाराज दशरथ के हृदय पर इतना अधिकार कर लिया था कि वे तीनों रानियों में कैकेयी को ही सबसे अधिक मानते थे। पति सेवा के लिए कैकेयी का सर्वस्व समर्पित था। वास्तव में सेवा ही वह सीमेंट है, जो पति–पत्नी को परस्पर जोड़े रखती है।

एक समय की बात है। महाराज दशरथ देवताओं की सहायता के लिए शम्बरासुर नाम के राक्षस से युद्ध कर रहे थे। उस समय उनके साथ रणांगण में वीरांगना कैकेयी भी थीं। युद्ध करते समय दशरथ का सारथी मारा गया और वे स्वयं भी घायल होकर अचेत हो गए। सारथी के मारे जाने पर महारानी कैकेयी ने एक हाथ से घोड़ों की रस्सी थामे और दूसरे हाथ से तलवार से वीरतापूर्वक शत्रुओं का सामना करते हुए महाराज दशरथ के प्राण बचाए

थे। उसी युद्ध में दूसरी बार महाराज दशरथ के रथ की धुरी टूट गयी तो वीरांगना कैकेयी ने तुरंत धुरी की जगह अपना हाथ लगा दिया। इस प्रकार धीरता और वीरता का परिचय देकर उन्होंने दूसरी बार भी महाराज को संकट से बचाया था। जब बाद में महाराज दशरथ को इस घटना का पता चला तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वीरांगना कैकेयी की वीरता से प्रसन्न होकर महाराज दशरथ ने महारानी कैकेयी से कहा था—तुमने मुझे युद्ध में दो बार संकट से बचाया है, इसलिए तुम मुझसे मनचाहे दो वर माँग लो। पति से हार्दिक प्रेम करने वाली कैकेयी ने कहा—आप मुझ पर प्रसन्न रहें, बस यही मुझे चाहिए। महाराज दशरथ ने वर माँगने का विशेष आग्रह किया तो उन्होंने सहज स्वभाव कह दिया कि फिर कभी माँग लूँगी।

महाराज दशरथ का यौवन बीत चुका था और वृद्धावस्था का पदार्पण हो चुका था, परन्तु उनके कोई संतान नहीं थी। पुत्र अभाव की चिन्ताग्नि उनके तन—मन को झुलस रही थी। उन्होंने अपने मन की वेदना गुरु वसिष्ठ को बतलायी। गुरु—कृपा से महाराज दशरथ को चार पुत्ररत्न प्राप्त हुए। उनके नाम थे—राम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न। चारों पुत्रों की शिक्षा—दीक्षा और विवाह के उपरान्त श्रीराम को सर्वगुण सम्पन्न और राजा बनने के योग्य देखकर सारी प्रजा चाह रही थी कि श्रीराम हमारे राजा बनें। स्वयं महाराज दशरथ भी अपने जीतेजी राम को राजा बनाना चाह रहे थे, इसलिए उन्होंने कुलगुरु वसिष्ठ की अनुमति और मंत्रियों का परामर्श लेकर अपने कुल की रीति के अनुसार ज्येष्ठ पुत्र राम के राज्याभिषेक की घोषणा भी करा दी।

श्रीरामचरितमानस का मुख्य आधार अध्यात्म रामायण के अनुसार श्रीराम के राज्याभिषेक की घोषणा का समाचार सुनकर सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी ने भगवान श्रीराम को उनके अवतार हेतु (रावण—वध) का स्मरण कराने के लिए अपने पुत्र देवर्षि नारद को श्रीराम के पास भेजा। देवर्षि नारद भगवान राम को प्रणाम कर बोले—हे रघुकुलमणि! मुझे मेरे पिता ब्रह्माजी ने आपके पास भेजा है। आपका अवतार तो रावण को मारने के लिए हुआ है, किन्तु आपके पिता महाराज दशरथजी आपको राज्यशासन के लिए अभिषिक्त करने वाले हैं। यदि राज्य में आसक्त होकर आप रावण को न मारेंगे तो 'पृथ्वी का भार उतारने की आपने जो प्रतिज्ञा की है, उसका क्या होगा?'

देवर्षि नारद के वचन सुनकर श्रीराम बोले—नारदजी! मैं अपनी प्रतिज्ञा को निःसंदेह पूर्ण करूँगा। मैं कल ही वनवास पर (दण्डकारण्य) जाऊँगा और वहाँ 14 वर्ष मुनिवेश में रहूँगा तथा सीता—हरण के बहाने उस दुष्ट रावण को कुटुम्ब सहित नष्ट कर दूँगा।

रावणस्य विनाशार्थं श्वो गन्ता दण्डकाननम्।
सीतामिषेण तं दुष्टं सकुलं नाशयाम्यहम्।। (2/2/38—39)

राम–वन–गमन से पूर्व राम के इस कथन से व्यक्त होता है कि रावण–वध हेतु सीता–हरण पूर्व नियोजित था। जब कुलगुरु वसिष्ठ के आदेशानुसार श्रीराम के राज्याभिषेक की तैयारियाँ हो रही थीं, तब महाराज दशरथ ने कुलगुरु वसिष्ठ को राम को उपदेश देने के लिए राम के महल में भेजा। राम ने गुरुदेव का यथोचित सम्मान किया। तब कुलगुरु वसिष्ठ ने कहा–हे राम! मैं भली–भाँति जानता हूँ कि आप साक्षात् भगवान विष्णु हैं। आपने देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिए और राक्षसराज रावण का सकुल संहार करने के लिए अवतार लिया है, लेकिन इस गुप्त रहस्य को मैं प्रकट नहीं करूँगा **'तथापि देवकार्यार्थं गुह्यं नोद्घाटयाम्यहम्। (2/2/25)'**। तुम शिष्य हो और मैं गुरु हूँ–ऐसा व्यवहार करूँगा। कहने का तात्पर्य यह है कि त्रिकालदर्शी कुलगुरु वसिष्ठ सब कुछ जानते थे।

यहाँ प्रश्न यह उठता है कि सूर्यवंश के कुलगुरु ब्रह्मर्षि वसिष्ठ तो त्रिकालदर्शी थे, इसलिए उन्हें तो यह भलीभाँति ज्ञात था कि रावण–वध करने के लिए श्रीराम को वनवास जाना है तो फिर उन्होंने श्रीराम के राज्याभिषेक की आज्ञा क्यों दी?

बेगि बिलंबु न करिअ नृप साजिअ सबुइ समाजु। (2/4)

(हे राजन! अब विलम्ब न कीजिए, श्रीराम के राज्याभिषेक की शीघ्र तैयारी कीजिए।)

कुलगुरु वसिष्ठ त्रिकालदर्शी थे, इसलिए वे भलीभाँति जानते थे कि भगवान श्रीराम का अवतार रावण–वध करने के लिए हुआ है और इस कार्य के लिए उन्हें वन जाना है। भगवान श्रीराम अपने वनगमन के रहस्य को गुप्त रखना चाहते थे। त्रिकालदर्शी कुलगुरु वसिष्ठ भगवान राम की लीला में सहयोगी थे, इसलिए उन्होंने श्रीराम के राज्याभिषेक की अनुमति दी थी।

श्रीरामचरितमानस के अनुसार श्रीराम अपने राज्याभिषेक से प्रसन्न नहीं थे। उनकी अप्रसन्नता का कारण उन्होंने स्वयं व्यक्त भी किया है–हम चारों भाई एक ही साथ जन्मे, खाना–पीना, सोना, बाल–क्रीड़ा (बचपन के खेल–कूद), कर्ण–छेदन, यज्ञोपवीत, शिक्षा और विवाह आदि संस्कार सब साथ–साथ हुए, परन्तु रघुवंश में यही एक अनुचित बात हो रही है कि सब भाइयों को छोड़कर राज्याभिषेक केवल बड़े का ही होता है यानी राज्याभिषेक केवल मेरा ही हो रहा है–

जनमे एक संग सब भाई। भोजन सयन केलि लरकाई।।
करनबेध उपबीत बिआहा। संग संग सब भए उछाहा।।
बिमल बंस यहु अनुचित एकू। बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू।।(2/10/5–7)

श्रीराम पितृभक्त थे, इसलिए पिता के आदेश का विरोध भी नहीं कर सकते थे और

अपने अवतार के हेतु को पूर्ण करने के लिए अयोध्या में भी नहीं रह सकते थे, अतः उनको वन जाना अनिवार्य था। लौकिक दृष्टि से श्रीराम के सामने यह बहुत बड़ा धर्म–संकट था, पर संकटहारी भगवान के सामने धर्म–संकट कितनी देर ठहरता। भगवान की इच्छा बड़ी बलवती है–**'हरि इच्छा भावी बलवाना'। (1/56/6)** वह अवश्य सफल होकर रहती है, इसलिए उन्होंने अपनी इच्छा पूर्ण करने के लिए यानी अपने वनगमन के मार्ग को प्रशस्त करने के लिए अपनी अनन्य भक्ता माता कैकेयी की आड़ ली। भगवान राम ने अपनी माया से दासी (आया) मंथरा के माध्यम से माता कैकेयी की बुद्धि को भ्रमित कराकर उन्हें महाराज दशरथ पर धरोहर के रूप में रखे दो वरदानों को भुनाने के लिए प्रेरित किया। भगवान राम की प्रेरणा से प्रेरित होकर ही माता कैकेयी ने राम को राज्याभिषेक की जगह वनवास दिलाया था और राम–कार्य के लिए ही उन्होंने सदा के लिए अपयश के जहर का घूँट पिया था।

श्रीराम के राज्याभिषेक के लिए अयोध्या नगरी को दुल्हन की तरह सजी देखकर दासी मंथरा ने अपनी स्वामिनी रानी कैकेयी को राम के राज्याभिषेक का समाचार सुनाया तो कैकेयी को बड़ी प्रसन्नता हुयी और हर्षातिरेक में दासी मंथरा को अपना अमूल्य हार देकर बोलीं–मंथरे! तूने मुझे यह बड़ा ही प्रिय समाचार सुनाया है। इसके बदले में तू और भी मनचाहा पुरस्कार माँग ले। मैं तुझे वही दूँगी–

दिव्यमाभरणं तस्यै कुब्जायै प्रददौ प्रियम्।
एतन्मे प्रियमाख्यातं किं वा भूयः करोमि ते।।
वरं परं ते प्रददामि तं वृणु। (वा0रा0)

मानस के अनुसार भी रानी कैकेयी अपनी दासी मंथरा से कहती हैं–हे सखि! यदि यह बात सत्य है कि कल राम का राज्याभिषेक है तो तेरे मन को जो अच्छी लगे, तू वही मनचाही वस्तु माँग ले, मैं दूँगी। मेरे प्रिय राम का स्वभाव बहुत अच्छा है। वह सब माताओं से प्रेम करता है और मुझसे तो वह कुछ विशेष ही प्रेम करता है। मैंने उसके प्रेम की परीक्षा लेकर देख ली है–

राम तिलकु जौं साँचेहुँ काली। देउँ मागु मन भावत आली।।
कौसल्या सम सब महतारी। रामहि सहज सुभायँ पिआरी।।
मो पर करहिं सनेहु बिसेषी। मैं करि प्रीति परीक्षा देखी।। (2/15/4–6)

मंथरा कैकेयी के विवाह के समय दहेज में अयोध्या आयी थी। वह कैकेयी की आया थी। कैकेयी को बचपन से उसी ने पाला था, इसलिए वह कैकेयी से बहुत प्रेम करती थी। राजा दशरथ के साथ कैकेयी का विवाह इस शर्त पर हुआ था कि कैकेयी का पुत्र ही अयोध्या का राजा बनेगा, इसलिए कौसल्या–पुत्र राम का राज्याभिषेक होना मंथरा को

अच्छा नहीं लगा। वह कैकेयी के दिए अमूल्य हार को फेंक देती है और कैकेयी को भड़काने का प्रयास करती है।

रामप्रेममग्ना कैकेयी अपनी कुटिला दासी मंथरा को समझाती हैं–मेरा राम धर्मात्मा, गुणवान, जितेन्द्रिय, न्यायप्रिय और सत्यव्रती है। वह महाराज दशरथ का ज्येष्ठ पुत्र है, इसलिए रघुकुल की प्रथा के अनुसार राम ही राज्याभिषेक का अधिकारी है, भरत नहीं।

रानी कैकेयी के समझाने पर भी जब मंथरा राम की निंदा करती हुयी कैकेयी को भड़काती है, तब कैकेयी क्रोधित होकर मंथरा को घरफोड़ी कहकर उसकी जीभ कटवाने तक की बात कहती हैं–

पुनि अस कबहुँ कहसि घरफोरी। तब धरि जीभ कढ़ावउँ तोरी।। (2/14/8)

इससे लगता है कि कैकेयी राम को अत्यधिक स्नेह करती थीं। फिर भी वे भगवान की माया से प्रभावित होकर मंथरा की कपट भरी बातों में आ जाती हैं और कोप भवन में चली जाती हैं। जब महाराज दशरथ अपनी रूठी प्राणप्रिया को मनाने के लिए कोपभवन पहुँचते हैं, तब कुटिलशिरोमणि गुरु की पढ़ायी कैकेयी अपने प्रेमी पति को त्रियाजाल में फाँसकर, उन्हें वचनबद्ध कर और उन्हें उनके प्राणप्रिय राम की सौगंध खिलाकर अपने मनचाहे वर माँगती हैं–हे प्राणप्यारे! मेरे मन को भाने वाला एक वर तो यह दीजिए कि मेरे बेटे भरत का राज्याभिषेक हो और दूसरा वर यह दीजिए कि राम तपस्वी के वेश में उदासीन भाव से विरक्त मुनियों की तरह 14 वर्ष वन में रहे–

सुनहु प्रानप्रिय भावत जी का। देहु एक बर भरतहि टीका।।
मागउँ दूसर बर कर जोरी। पुरवहु नाथ मनोरथ मोरी।।
तापस बेष बिसेषि उदासी। चौदह बरिस रामु बनबासी।। (2/29/1–3)

मंथरा की छल भरी चिकनी–चुपड़ी बातों में आकर कैकेयी अपने प्रिय निर्दोष राम को चौदह वर्ष के लिए वन में भेजने के कारण वे आज तक पापिनी और कुलकलंकिनी कहलाती हैं।

यहाँ प्रश्न यह उठता है कि जो कैकेयी राम को इतना अधिक स्नेह करती थीं तो फिर उन्होंने राम को बिना अपराध के वनवास क्यों दिया?

राम–वनवास में रहस्य है और उसके दो कारण थे–एक कारण तो यह था कि भगवान श्रीराम का अवतार साधुओं की रक्षा और राक्षसों का संहार करने के लिए हुआ था। यदि राम का राज्याभिषेक हो जाता तो साधुओं की रक्षा और राक्षसों का विनाश कैसे होता। इसके लिए तो राम को वन जाना आवश्यक था, इसलिए वनवास दिलाया।

राम–वनवास का दूसरा कारण यह था कि महाराज दशरथ की मृत्यु का समय निकट आ गया था, किन्तु उन्हें श्रवणकुमार के पिता का यह अभिशाप था कि तुम भी हमारी तरह

पुत्र–वियोग में तड़पते मरोगे। दशरथ के प्राणाधार राम थे, अतः राम के अयोध्या में रहते दशरथ की मृत्यु नहीं हो सकती थी। राम का वियोग कराकर दशरथ की मृत्यु का निमित्त भी कैकेयी को ही बनाया।

अब मैं लेख के मुख्य उद्देश्य–रामभक्ता कैकेयी राम–वनगमन में निर्दोष थीं, की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करता हूँ। मानसकार ने तो राम–वनगमन में कैकेयी को दोषी ठहराया है। उन्होंने कैकेयी पर उनके ही पुत्र भरत, अयोध्या की प्रजा, निषादराज गुह और वन–मार्ग में ग्रामीण नर–नारियों के मुख से गालियों की बौछार कराने में कोई कोर–कसर नहीं छोड़ी। केवल एक जगह जब भरत राम को लौटाने चित्रकूट जाते समय प्रयागराज में एक रात्रि भरद्वाज मुनि के आश्रम में ठहरे थे, तब भरद्वाज मुनि के मुख से कहलवाया है–हे भरत! तू अपनी माता पर दोषारोपण न कर। राम–वनगमन में तेरी माता निर्दोष है, उसकी बुद्धि तो सरस्वती ने बिगाड़ दी थी, अतः कैकेयी का कोई दोष नहीं है–**'तात कैकइहि दोसु नहिं (2/206)'।**

तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस का आधार **'अध्यात्म रामायण'** में रामानुरागिनी रामभक्ता माता कैकेयी के सच्चरित्र एवं भक्तिभाव की भूरि–भूरि प्रशंसा की गयी है और उन्हें राम–वनगमन में निर्दोष बतलाया है–स्वयं राजमाता महारानी कौसल्या ने गुरुपत्नी अरुन्धती से कहा था–गुरुमाते! कैकेयी सर्वथा निर्दोष है। यदि वह निर्दोष न होती तो भरत जैसे भक्त पुत्र को जन्म नहीं दे पाती। जिसने भगवान के परमभक्त भरत को जन्म दिया है, वह माता दोषी कैसे हो सकती है?

जब भरत चित्रकूट में श्रीराम को अयोध्या चलने के लिए हठ करते हैं और श्रीराम की कुटिया के सामने धूप में आमरण अनशन करने बैठ जाते हैं, तब भरत का हठ देखकर भगवान श्रीराम कुलगुरु वसिष्ठ को नेत्रों से संकेत करते हैं। भगवान राम का संकेत पाकर श्रीराम के वन–गमन के नाटक के रहस्य को जानने वाले ब्रह्मर्षि वसिष्ठ भरत को एकान्त में ले जाकर रहस्य से पर्दा उठाते हुए कहते हैं–भरत! श्रीराम साक्षात् नारायण हैं। पूर्व काल में सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी के प्रार्थना करने पर उन्होंने रावण को मारने के लिए महाराज दशरथ के पुत्र के रूप में अवतार लिया है। योगमाया लक्ष्मी ने जनकनन्दिनी सीता के रूप में अवतार लिया है और लक्ष्मण शेषनाग के अवतार हैं। श्रीराम को राक्षसराज रावण का वध करना है, इसलिए ये वन में रहेंगे। तुम राम को लौटाने का आग्रह न करो। तुम्हारी माता निर्दोष हैं। उन्होंने जो कुछ किया, वह सब भगवान श्रीराम की प्रेरणा से प्रेरित होकर ही राम–कार्य के लिए किया–

कैकेय्या वरदानादि यद्यन्निष्ठुर भाषणम्।
सर्वं देवकृतं नोचेदेव सा भाषयेत्कथम्।।

तस्मात्त्यजाग्रहं तात रामस्य विनिवर्तने।। (अ0रा0 2/9/45–46)

इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि माता कैकेयी निर्दोष थीं। यदि रामायण से कैकेयी के कारण 'राम–वनवास' का प्रसंग निकाल दिया जाए तो राम के अनन्य भक्तों में माता कैकेयी का सर्वोच्च स्थान है। इन्हीं भावों की एक काव्यात्मक झलक देखिए–

यदि आप न लौटेंगे भैया
तो यहीं निकट धरना दूँगा।
जल–अन्न त्याग कुटिया सम्मुख
इस नश्वर तन को त्यागूँगा।।

हठ देख भरत की रघुवर ने
संकेत किया कुलगुरुवर को।
एकान्त भरत को ले जाकर
गुरु बोले समझाते उनको।।

हे भक्त भरत तुम हठ न करो
रघुवर को पुर ले जाने की।
समझो ये कौन? अरे! इनकी
आवश्यकता वन आने की।।

श्रीराम विष्णु सीता कमला
ब्रह्मादि सुरों ने विनय किया।
रावण का वध करने को ही
नृप–पुत्र रूप अवतार लिया।।

रावण का वध करने को ही
भगवान राम वन आए हैं।
केकइ ने जो वरदान लिए
वे माया ने भुनवाए हैं।।

तेरी माता निर्दोष तात
नाहक ही दोष न दे उसको।

पुर चल कर राज करो, छोड़ो
इनको लौटाने की हठ को। —सरल

भगवान श्रीराम के कथनानुसार भी माता कैकेयी निर्दोष थीं। जब भरत श्रीराम को मनाकर अयोध्या लाने के लिए चित्रकूट गए थे, तब उनके साथ माता कैकेयी भी अपने किए कुकृत्य की क्षमा माँगने के लिए चित्रकूट गयी थीं। जब भरत चित्रकूट से अयोध्या को लौटने की तैयारी कर रहे थे, तब माता कैकेयी श्रीराम से एकान्त में मिलीं और बोलीं—हे राम! माया से मुग्धचित्त हो जाने के कारण ही मैंने तुम्हारे राज्याभिषेक में विघ्न डाला। तुम मेरी इस कुटिलता को क्षमा करना। आपकी माया से प्रेरित होकर ही मुझ पापिनी ने यह पाप किया था। अब मैंने आपको जान लिया है। आप साक्षात् भगवान विष्णु और अव्यक्त परमात्मा हैं।

कैकेयी के वचन सुनकर भगवान श्रीराम मुसकरा कर बोले—माते! तुमने जो कुछ कहा है, वह सब सत्य है। मेरी प्रेरणा से ही देवताओं की कार्य—सिद्धि के लिए तुम्हारे मुख से मुझे वनवास देने के शब्द निकले थे। इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है। जब तुम्हारा दोष ही नहीं है तो क्षमा कैसी—

यदाह मां महाभागे नानृतं सत्यमेव तत्।
मयैव प्रेरिता वाणी तव वक्त्राद्विनिर्गता।। (2/9/63)
देवकार्यार्थसिद्धयर्थमत्र दोष कुतस्तव।। (2/9/64)

राम—वनवास में माता कैकेयी के निर्दोष होने के संबंध में एक मधुर रोचक कथा विख्यात अन्तर्राष्ट्रीय कथावाचक के मुखारविन्द से सुनी थी। यहाँ वह कथा पाठकों के लिए प्रस्तुत है—

माता कैकेयी कौसल्यानन्दन राम से बहुत स्नेह करती थीं। वे अपने पुत्र भरत से भी अधिक प्रेम राम से करती थीं। वे राम के बिना तो एक दिन भी नहीं रह सकती थीं। वे अपने पुत्र भरत को तो कई—कई महीनों के लिए ननिहाल भेज देती थीं, लेकिन राम को एक दिन के लिए भी जाने नहीं देतीं। एक दिन की बात है। राम आठ वर्ष के थे। माता कैकेयी अपने लाड़ले राम को अपने हाथ से बनायी खीर खिला रही थीं और स्नेह भाव से खिलाए ही जा रही थीं कि राम ने उनका हाथ पकड़ लिया और बोले—माँ! आप मुझसे बहुत प्यार करती हैं?

माता कैकेयी बोलीं, ''हाँ, तुमसे बहुत प्यार करती हूँ।''

राम फिर बोले, ''माँ! आपने मुझसे कभी यह नहीं पूछा कि मैं क्या चाहता हूँ?''

कैकेयी बोलीं, ''मेरे प्यारे राम! बता तू क्या चाहता है?''

राम ने कहा, ''माँ! मैं जो माँगू, आप देंगी?''

कैकेयी बोलीं, ''बेटा! माँग, मैं तेरी मनचाही अवश्य पूरी करूँगी।''

राम ने कहा, ''माँ! मेरे सिर पर हाथ रखकर मेरी शपथ खाओ कि मैं जो माँगू, आप

अवश्य देंगी।''

माता कैकेयी पहले तो राम के सिर पर हाथ रखकर राम की शपथ खाने में हिचकिचायीं। फिर गंभीर होकर राम के सिर पर हाथ रखकर राम की शपथ खाकर बोलीं, ''बेटा! तू जो माँगेगा, मैं अवश्य दूँगी।''

राम बोले, ''माँ! सोच लो, मैं जो माँगूँगा, उससे आपका अपयश होगा।''

कैकेयी बोली, ''राम! मुझे यश नहीं चाहिए। भले ही मेरा अपयश हो, मुझे उसकी लेशमात्र भी चिन्ता नहीं है। बस, मेरा राम प्रसन्न रहे।''

राम इस बार गंभीर होकर बोले, ''माँ! फिर एक बार सोच लो, मेरे माँगने से आपको वैधव्य का दुख भी झेलना पड़ेगा।''

यह सुनते ही माता कैकेयी मौन हो गयीं। भारतीय नारी सब कुछ दे सकती है, परन्तु अपने जीवनधन पति परमेश्वर पर आँच नहीं आने देती। माता कैकेयी अपने प्रियपुत्र राम की शपथ खा चुकी थीं और फिर प्रियपुत्र ने पहली बार कुछ माँगने की बात कही थी, सो इनकार भी नहीं कर सकती थीं, अतः गंभीर स्वर में बोलीं, ''चल, मुझे यह भी मंजूर है, पर मेरा प्रिय राम प्रसन्न रहे।''

तब राम बोले, ''माँ! विवाह होने के बाद मैं चौदह वर्ष के लिए वन जाना चाहता हूँ। उसके लिए आपको पिताजी से आज्ञा दिलानी होगी। यह कार्य केवल आप ही कर सकती हैं। मैं उसका उपाय भी बतलाता हूँ—माते! आपके दो वर पिताजी पर धरोहर के रूप में रखे हैं। उन्हें माँग लेना। एक वर में तो मेरे प्रिय भरत को अयोध्या का राज्य और दूसरे वर में मेरे लिए 14 वर्ष का वनवास।''

जो माता कैकेयी अपने प्राणप्रिय पुत्र राम के बिना एक दिन भी नहीं रह सकती थीं, वे राम के बिना 14 वर्ष रहने की बात सुनकर धड़ाम से भूमि पर गिर गयीं। उनके होश में आने पर राम ने अपने कुल की रीति का स्मरण कराते हुए कहा—**''रघुकुल रीति सदा चलि आई। प्रान जाहुँ बरु बचनु न जाई।'' (2/28/4)** फिर आपने तो मेरे सिर पर हाथ रखकर मेरी शपथ खायी है, इसलिए आप मुकुर नहीं सकतीं।''

माता कैकेयी असमंजस में थीं। उनसे न हाँ कहते बनी और न ना। उनके खिले कमल जैसे मुख से मुसकान सदा के लिए चली गयी। फिर वे जीवन में कभी मुसकरायी नहीं। उन्होंने अपनी छाती पर कितना भारी पत्थर रखकर अपने प्रियपुत्र राम की इच्छा पूर्ण करने का वचन दिया, यह तो वही जानती होंगी।

भगवान राम को अपने अवतार का उद्देश्य देवकार्य (रावणादि असुरों का संहार करने) और अपने अनन्य भक्तों का कल्याण करने के लिए वन जाना आवश्यक था। वे वन जाने को देवर्षि नारद को वचन भी दे चुके थे। महाराज दशरथ अपने प्राणाधार राम को वन जाने का

आदेश कभी नहीं दे सकते थे, इसलिए श्रीराम ने अपने वन जाने का कार्य अपनी अनन्य भक्ता माता कैकेयी से करवाया।

अब पाठक स्वयं विचार करें कि माता कैकेयी ने महाराज दशरथ से राम को 14 वर्ष का वनवास का वर माँग कर अच्छा किया या बुरा। यदि माता कैकेयी राम के वनवास का वर न माँगतीं तो न राम वन जाते और न रावण मारा जाता। राम की परमभक्त शबरी अपने गुरु मतंग ऋषि के वचनों पर विश्वास कर हजारों वर्षों से राम के आने की प्रतीक्षा कर रही थी, क्या उसकी इच्छा पूर्ण हो पाती। शरभंग ऋषि जो भगवान राम के दर्शन की लालसा में तप करते–करते हड्डियों का ढाँचा मात्र रह गए थे, क्या उनकी कामना पूर्ण होती? माता कैकेयी ने लोककल्याण के लिए राम को वन भेजकर लोकमंगल का ही कार्य किया था, इसलिए वे सर्वथा निर्दोष थीं।

दीप–स्मृति

शाम को दीपक जलाया रात भर जलता रहा ।
भोर तक जगमग उजाला शुभ दिया करता रहा ।।
लोक–मंगल के लिये तुम स्वयं तिल–तिल कर जले ।
रोशनी करते रहे तुम तम छिपा अपने तले ।।

विश्व–हित अनमोल जीवन हा! समर्पित कर दिया ।
तुम बुझे बुझ कर जगत में नाम रोशन कर लिया ।।
जब तुम्हारी मृत्यु पर ना दुख हुआ संसार को ।
कौन रोयेगा दिये! तब हम मनुज निस्सार को ।।

'सरल'

राम का अनन्य भक्त था रावण

श्री सचिन शर्मा, नोएडा, फोनः 9310555665

रामायण में राक्षसराज रावण का चरित्र खलनायक का दर्शाया है। उसने समस्त प्राणियों के सुखधाम श्रीराम की पत्नी सीता का अपहरण कर अपराध किया था। उसे उद्दंड, दुर्धर्ष, दुष्टात्मा, क्रूर, अभिमानी, व्यभिचारी तीनों लोकों को रुलाने वाला, भयंकर, तपस्वियों को सताने वाला, गो–सुर–ब्राह्मण द्वेषी, अधर्मी आदि नामों से संबोधित किया है। लाखों वर्ष बीत जाने पर अब भी हर वर्ष आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की दशमी यानी दशहरा के दिन रावण को अधर्म का प्रतीक मानकर उसका पुतला जलाया जाता है और दशहरा के दिन को अधर्म पर धर्म की विजय का दिन माना जाता है, परन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि रावण अवगुणों की खान था।

'हर सिक्के के दो पहलू होते हैं'–इस कहावत के अनुसार लंकापति रावण के भी दो प्रकार के चरित्र हैं – एक बाह्य चरित्र और दूसरा आन्तरिक चरित्र। बाह्य चरित्र से तो वह अत्याचारी, व्यभिचारी, दंभी, अभिमानी, पापी, दुष्ट, अधर्मी और भगवान राम का शत्रु लगता है, परन्तु आन्तरिक दृष्टि से रावण श्रीराम का अनन्य भक्त था। यही सिद्ध करना इस लेख का उद्देश्य है।

अब यहाँ प्रश्न यह उठता है कि यदि रावण भगवान श्रीराम का अनन्य भक्त था तो उसने भगवान श्रीराम की प्राणप्रिया जनकनन्दिनी जगज्जननी जगदम्बा सीता का अपहरण क्यों किया था?

अध्यात्म रामायण के अनुसार सीता माता का अपहरण करने के दो कारण थे–पहला कारण तो रावण को सनत्कुमारों से पता चल गया था कि श्रीराम नारायण के अवतार हैं और सीता भगवती लक्ष्मी की अवतार हैं। जब–जब नारायण मनुष्य बनते हैं, तब–तब भगवती लक्ष्मी मानुषी बनती हैं। लक्ष्मी की महिमा निराली है। लक्ष्मी जिस व्यक्ति के पास होती है, वह सुखी, समृद्धशाली, गुणवान और पवित्र हो जाता है। समाज में उसका आदर होता है। लोक में देखा जाता है कि जिस व्यक्ति के पास लक्ष्मी (धन) है, वही समाज में कुलीन, पंडित, गुणवान, विद्वान, वक्ता और दर्शनीय कहलाता है। सभी गुण धन का ही आश्रय लेते हैं–**सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ति।**

लक्ष्मी की अपार महिमा है। रावण ने सोचा, यदि मैं लक्ष्मी स्वरूपा सीता को लंका में ले

आऊँ तो मेरी सोने की लंका और भी दिव्य बन जायेगी, मेरा वैभव और भी बढ़ जाएगा। यही विचार कर रावण ने सीता का हरण किया था।

प्रकृति का नियम है कि कुछ पाने के लिए कुछ देना पड़ता है, जैसे हम नित्य प्रकृति का उपभोग करते हैं, जैसे– सूर्य से ताप और प्रकाश लेते हैं। चन्द्रमा, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश वृक्षादि का उपयोग करते हैं तो इसका भी शुल्क देना पड़ता है, संध्यावंदनादि, देव–पूजन करना आदि शुल्क ही तो है। यदि हम शुल्क समय पर नहीं देते तो बाद में ब्याज सहित चुकाना पड़ता है। यदि हम ऋण नहीं चुका पाते तो हमें पाप लगता है और पाप का दंड नरक भोगना पड़ता है।

रावण बड़ा चतुर था। उसने चतुराई यह की कि वह लक्ष्मी को लाने के बदले में राम को देने के लिए नकली सोने का मृग ले गया। भगवान का कथन है कि जो मुझको जैसे भजता है, मैं भी उसे वैसे ही भजता हूँ –

ये यथा माम प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्। (गीता–4/11)

रावण ने नकली सोने का मृग भेजा तो अन्तर्यामी भगवान राम ने नकली मृगनयनी सीता पहले ही बना दी थी, इसलिए रावण असली सीता के भ्रम में नकली सीता को ले गया। जहाँ असली लक्ष्मी सुखी–समृद्धशाली बनाती है तो वहीं नकली लक्ष्मी विनाश करती है। नकली लक्ष्मी ने रावण का सर्वनाश कर दिया।

सीता–हरण का दूसरा कारण यह था– एक बार रावण के पूछने पर मुनिवर सनत्कुमारों ने बताया था कि अन्य साधारण देवताओं के हाथ से मरकर तो प्राणी अति उत्तम स्वर्ग को ही जाते हैं और फिर अपना भोग क्षीण होने पर वे स्वर्ग से गिरकर फिर भूलोक में उत्पन्न होते हैं और अपने पाप–पुण्य के अनुसार जन्मते–मरते रहते हैं, किन्तु जो प्राणी भगवान विष्णु के हाथ से मारे जाते हैं, वे तो विष्णु पद ही प्राप्त करते हैं।

रावण को सनत्कुमारों से यह भी पता चल चुका था कि त्रेतायुग में देव और मनुष्यों का कल्याण करने के लिए भगवान विष्णु इक्ष्वाकु वंश में महाराज दशरथ के यहाँ पुत्र रूप में अवतार लेंगे। यह सुनकर रावण मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ। उसने भली–भाँति सोचकर ही भगवान राम से युद्ध कर उनके हाथ से मरने का निश्चय किया था। विद्वान रावण भली–भाँति जानता था कि श्रीराम साधारण मनुष्य नहीं हैं, अपितु भगवान विष्णु के अवतार हैं, इसलिए राम के हाथ से मर कर मुक्ति प्राप्त करने के लिए ही रावण ने राम से विरोध किया था।

खर–दूषण वध के बाद जब बहिन शूर्पणखा से रावण को यह पता चला कि भगवान श्रीराम दंडकवन में रह रहे हैं, तो वह राम के हाथ से मर कर शीघ्र वैकुंठ को जाना चाहता था। यह विचार कर ही उसने सोचा था कि मैं कोई ऐसा कार्य करूँ, जिससे भगवान राम मुझ

पर कुपित हों। उसने भगवान श्रीराम के हाथ से मारे जाने की इच्छा से ही जनकनन्दिनी जगज्जननी जगदम्बा सीता को चुराया था और माता के समान पालन किया था–

एतदर्थं महाराज रावणोऽतीव बुद्धिमान।
हृतवान जानकीं देवीं त्वयात्मवध कांक्षया।। (अ.रा. 7/3/59)
जानन्नेव परात्मानं स जहारावनीसुताम्।
मातृवत्पालयामास त्वत्तः कांक्षन्वधं स्वकम्।। (अ.रा. 7/4/11)

दूरदर्शी रावण को उभय भाँति अपना कल्याण दिखायी दे रहा था, यदि परमात्मा द्वारा मैं मारा गया, तब तो मैं वैकुंठ का राज्य भोगूँगा, नहीं तो चिरकाल तक राक्षसों का राज्य भोगूँगा, इसलिए मैं राम के पास विरोध बुद्धि से ही जाऊँगा, क्योंकि भक्ति द्वारा भगवान शीघ्र प्रसन्न नहीं होते–

वध्यो यदि स्यां परमात्मनाहं वैकुण्ठराज्यं परिपालयेऽहम्।
नो चेदिदं राक्षसराज्यमेव भोक्ष्ये चिरं रामगतो व्रजामि।। (3/5/60)
विरोधबुद्धयैव हरिं प्रयामि। द्रुतं न भक्त्या भगवान प्रसीदेत्।।(3/5/61)

ठीक इसी प्रकार का भाव संत तुलसीदासकृत श्रीरामचरितमानस में भी दर्शाया गया है, अपनी बहिन शूर्पणखा से श्रीराम द्वारा खर–दूषण के मारे जाने का समाचार सुनकर रावण चौंक गया। उसके अंग जल उठे और चिन्ता के कारण उसकी नींद उड़ गयी। वह मन ही मन सोचने लगा–

खर–दूषन मोहि सम बलवंता। तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता।।
सुर रंजन भंजन महि भारा । जौं भगवंत लीन्ह अवतारा।।
तो मैं जाइ बैरु हठि करऊँ। प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ।।
होइहि भजन न तामस देहा। मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा।।(3/23/3–6)

अर्थात् खर–दूषण तो मेरे ही समान बलवान थे। उन्हें भगवान के सिवा और कौन मार सकता है। देवताओं को आनंद देने वाले और पृथ्वी का भार–हरण करने वाले भगवान ने यदि अवतार लिया है तो मैं जाकर उनसे हठपूर्वक वैर करूँगा और प्रभु के बाण से प्राण त्यागकर भवसागर तर जाऊँगा, क्योंकि इस तामस शरीर से भजन तो होगा नहीं, अतः मन, वचन और कर्म से मेरा यही दृढ़ निश्चय है कि मैं उनसे वैर ठानूँ।।

रावण ने यह भी विचार किया कि यदि मैं श्रीराम की पत्नी सीता का हरण कर लंका ले आऊँ, तो राम उन्हें छुड़ाने के लिए लंका अवश्य आएँगे। युद्ध होने पर कुल सहित भवसागर पार उतरने का मेरा दृढ़ निश्चय पूर्ण हो जाएगा। रावण के इस कथन से सिद्ध होता है कि उसे श्रीराम के रूप में भगवान के अवतार लेने का भली–भाँति पता था। उसने योजना के तहत अपने और अपने कुल (राक्षस जाति) के उद्धार के लिए युद्ध का कारण उपस्थित करने

के लिए जगदम्बा सीता का अपहरण किया था। पंचवटी पर सीता–हरण के समय सीता माता का स्पर्श करने से पहले रावण ने जगदम्बा सीता की चरण–वंदना की, श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

सुनत बचन दससीस रिसाना। मन महुँ चरन बंदि सुख माना।।(3/28/16)

रावण सीता माता को हर कर लंका ले गया, लेकिन उन्हें राजमहल में न रखकर अशोक वाटिका में मंदिर के निकट रखा। रावण ने अपनी योजना को गुप्त रखा। उसकी किसी को भनक तक न लगने दी। भले ही उसके हितैषी नाना माल्यवंत, मामा मारीच, पत्नी मंदोदरी, अनुज विभीषण, शुक दूत और रुद्रावतार हनुमानजी ने यह कहकर बहुत समझाया कि श्रीराम मनुष्य रूप में चराचर के ईश्वर हैं। वे बड़े शूरवीर हैं। उनसे वैर करने में भलाई नहीं है। यदि तुम अपना भला चाहते हो तो माता जानकी को उन्हें सौंप दो, किन्तु रावण अपने दृढ़ निश्चय से विचलित न हुआ। उसने जगज्जननी जगदम्बा सीता का अपहरण तो भगवान की इच्छापूर्ण करने और लंकावासियों का उद्धार कराने के लिए किया था।

वाल्मीकीय रामायण के अनुसार रावण के अन्तःपुर में सीताजी को छोड़कर कोई ऐसी स्त्री नहीं थी, जिसे रावण उसकी इच्छा के विरुद्ध बलात्कार से चुरा कर लाया हो। वे सब रावण को उसके अलौकिक गुणों के कारण ही प्राप्त हुयी थीं। सीता को छोड़कर वहाँ कोई स्त्री ऐसी नहीं थी, जो रावण को न चाहती हो अथवा जिसका पहले कोई पति रहा हो।

राजर्षियों, ब्रह्मर्षियों, दैत्यों, गन्धर्वों तथा राक्षसों की कन्यायें काम के वशीभूत होकर रावण की पत्नियाँ बन गयी थीं। कुछ मदमत्त रमणियाँ कामदेव से मोहित होकर स्वयं ही रावण की सेवा में उपस्थित हो गयी थीं। रावण के राजमहल में कोई भार्या ऐसी नहीं थी, जो उत्तम कुल में उत्पन्न न हुयी हो अथवा जो कुरूप, अनुदार, कौशलरहित, उत्तम वस्त्राभूषणों एवं माला आदि से वंचित, शक्तिहीन तथा प्रियतम को अप्रिय हो। जरा वाल्मीकीय रामायण में वर्णित कथन पर तो दृष्टि डालिए–

न तत्र काश्चित् प्रमदा प्रसह्य वीर्योपपन्नेन गुणेन लब्धाः।
न चान्यकामापि न चान्यपूर्वा विना वरार्हो जनकात्मजा तु।।
राजर्षि विप्रदैत्यानां गन्धर्वाणां च योषितः।
रक्षसां चाभवन् कन्यास्तस्य कामवशंगताः।।
युद्धकामेन ताः सर्वा रावणेन हृताः स्त्रियः।
समदा मदनेनैव मोहिताः काश्चिदामताः।। (5/9/68–70)
न चाकुलीना न च हीनरूपा ना दक्षिणा नानुपचारयुक्ता।।
भार्याभवत् तस्य न हीनसत्त्वा न चापि कान्तस्य न कामनीया।। (5/9/71)

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण का कथन है कि जो मनुष्य निष्काम (बिना फल

चाहे) भाव से कर्म करता है या अपने किए हुए कर्मों को भगवान को समर्पण कर देता है अथवा भगवान के लिए ही कर्म करता है, उसे कर्मों का पाप–पुण्य नहीं लगता। भगवान श्रीकृष्ण के कथन के अनुसार रावण पापी नहीं था, क्योंकि रावण ने जो दुष्कर्म किये थे, वे भगवान विष्णु की इच्छापूर्ण करने के लिए ही किए थे, अतः आन्तरिक दृष्टि से तो वह निर्दोष था।

भगवान की इच्छापूर्ति करने के लिए कर्म करना भी तो भगवान की सेवा है। रावण भगवान विष्णु की युद्ध करने की इच्छा पूर्ण करने के लिए ही असुर बना था। दुष्कर्म कर भगवान को अवतार लेने के लिए बाध्य किया और जगदम्बा सीता का अपहरण कर युद्ध ठान कर भगवान की इच्छापूर्ण की, अतः रावण भगवान का अनन्य भक्त था। भगवान ऐसे ही विचित्र दुष्टों का उद्धार करने के लिए अवतार लेते हैं और उन्हें युद्ध में स्वयं मारकर उनका उद्धार करते हैं। येनकेन प्रकारेण भगवान से संबंध बना लेने में कल्याण ही कल्याण है। रावण ने भी यही किया कि उसने श्रीराम से वैर ठान कर सिर्फ अपना ही कल्याण नहीं किया, बल्कि अपने कल्याण से पूर्व अपने कुल का भी उद्धार करा दिया।

माता कैकेयी भगवान राम की अनन्य भक्त थीं। वे कौसल्यानन्दन राम से बहुत प्रेम करती थीं, लेकिन उन्होंने श्रीराम को वनवास दिलाने का लोकनिन्दित कार्य कर सदा के लिए बदनामी के जहर का घूँट पिया था। भगवान राम को वनवास दिलाने का कार्य रामभक्ता कैकेयी ने भगवान राम के अवतार के प्रयोजन को पूर्ण करने के लिए भगवान राम की प्रेरणा से ही किया था। यदि माता कैकेयी राम को वन न भिजवातीं तो भगवान राम के अवतार लेने का उद्देश्य (रावण–वध) पूरा न होता। न राम वन जाते, न रावण मारा जाता। जैसे माता कैकेयी बाह्य दृष्टि से कुमाता, कुलटा, पापिनी कुलकलंकिनी लगती हैं, किन्तु आन्तरिक दृष्टि से वे भगवान राम की अनन्य भक्त थीं, वैसे ही रावण भी बाहर से अत्याचारी, दुष्टात्मा, दुराचारी, व्यभिचारी, अपराधी लगने पर भी आन्तरिक पहलू से भगवान श्रीराम का अनन्य भक्त था।

लोक में रावण के बाह्य चरित्र का ही प्रचार हुआ। उसके आन्तरिक चरित्र का प्रचार नहीं हुआ। उसका आन्तरिक चरित्र परम उज्ज्वल था। वर्तमान राजनेताओं की अपेक्षा सौ गुना अच्छा था रावण। रावण में पाखंड नहीं था। वह परम तपस्वी, चारों वेदों का ज्ञाता, वेदान्तवेत्ता, विद्वान, राजनीति में निपुण, अग्निहोत्र–यज्ञ यागादि में निष्ठा रखने वाला और भगवान का परम भक्त था। उसने जीवनभर वैदिक धर्म का पालन किया। वह त्रिकाल संध्यावंदन, अग्निहोत्र आदि नित्य कर्म श्रद्धा से करता था। 'यथा राजा तथा प्रजा' के अनुसार लंका के सभी राक्षस वेद पाठ और अग्निहोत्र करते थे। रामभक्त हनुमान ने

लंकापुरी में सीता माता का अन्वेषण करते समय रात्रि के पिछले पहर में राक्षसों को वेदपाठ करते देखा। छओं अंगों सहित सम्पूर्ण वेदों के विद्वान तथा श्रेष्ठ यज्ञों द्वारा यजन करने वाले ब्रह्मराक्षसों के घरों में वेदपाठ की ध्वनि को सुना–

षडंग वेदविदुषां क्रतु प्रवर याजिनाम्।
शुश्राव ब्रह्मघोषान् स विरात्रे ब्रह्मरक्षसाम्।।

रावण बहुत बड़ा नीतिज्ञ था। उसने अपने छोटे भाई विभीषण को बहुत अच्छी नीति बतायी थी। रावण के मरने पर विभीषण ने कहा था कि आज संसार का सबसे बड़ा नीतिज्ञ चला गया। नीतियों का सेतु टूट गया। रावण देवी का बहुत बड़ा भक्त था। उसने कुलदेवी निकुंभला देवी का भव्य मंदिर बनवाया था। वह देवी का अनुष्ठान करता था और अपनी कुलदेवी निकुंभला को प्रसन्न कर उससे मनचाहे वर प्राप्त किए थे। वह प्रलयकर्ता भगवान शिव का परम भक्त था। वह गोभक्त था। उसकी गोमाता के प्रति अटूट श्रद्धा थी। उसका कथन था कि जिस राष्ट्र में गोपालन और गोरक्षण होता है, उस राष्ट्र की सुख समृद्धि होती है। जिसको मारने के लिए स्वयं भगवान को अवतार लेना पड़ा, वह सर्वसाधारण नहीं हो सकता।

यहाँ पाठकों के मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब रावण राम का भक्त था तो रामायण से जो यह शिक्षा मिलती है–

रामात् वत वर्ततव्यं न रावणातवद्

(राम की तरह व्यवहार करना चाहिए, रावण की तरह नहीं।)

यह शिक्षा क्या मिथ्या है?

रामायण की यह शिक्षा मिथ्या नहीं है, जैसे–लीला पुरुषोत्तम भगवान श्रीकृष्ण की कुछ लीलाएँ (कालिय नाग के फणों पर नृत्य करना, गोपियों के वस्त्र हरण करना, गोपियों के साथ रास–लीला करना, गोबर्धन पर्वत को सात दिन–रात नख पर उठाए रखना आदि) अनुकरणीय नहीं है, परन्तु उन लीलाओं को पढ़ने–सुनने से पुण्य मिलता है, वैसे ही रावण का व्यवहार (उसके द्वारा किए गए दुष्कर्म) अनुकरणीय नहीं हैं।

यह संसार भगवान का लीला–मंच है और यह लीला–मंच भगवान की प्रेरणा से भगवान की माया ने बनाया–सजाया है। संसार में हम जो कुछ भी देख रहे हैं, वह सब भगवान राम की लीला है। भगवान राम जगत–नाटक के महानायक हैं और हम सब उनके सहायक पात्र हैं। वे सूत्रधार हमें जो पाठ खेलने को देते हैं, वही हमें खेलना है, चाहे वह कितना ही बुरा क्यों न हो। रावण को खलनायक का पाठ खेलने को दिया गया और रावण ने भी अपना पाठ बहुत अच्छा खेला। यदि रामायण में से खलनायक रावण का अभिनय निकाल दिया जाए तो महानायक भगवान श्रीराम के अभिनय का क्या महत्व रह जाएगा।

जैसे अंधकार न हो तो प्रकाश का महत्व कौन समझेगा, इसलिए प्रकाश का महत्व दर्शाने के लिए अंधकार का होना नितान्त आवश्यक है। वैसे ही धर्म का महत्व दर्शाने के लिए अधर्म का, ज्ञान का महत्व दर्शाने के लिए अज्ञान का और नाटक में नायक का महत्व दर्शाने के लिए खलनायक का होना आवश्यक है। संसार–मंच के सूत्रधार भगवान श्रीराम अपनी लीला में खलनायक के पाठ का अभिनय कराने के लिए अपने अनन्य भक्त को ही चुनते हैं। रावण पूर्व जन्म में भगवान विष्णु का पार्षद था, जो दिन–रात उनके समीप रहता था। एक बार भगवान विष्णु के मन में युद्ध करने की इच्छा जाग्रत हुयी। उनके जय–विजय पार्षदों ने अपने स्वामी की इच्छा पूर्ण करने के लिए संत सनत्कुमारों को भगवान के पास जाने से जानबूझ कर रोका। उन्होंने क्रोध में आकर जय–विजय पार्षदों को तीन जन्म तक राक्षस होने का शाप दे दिया। जय–विजय ने संतों के शाप को सहर्ष स्वीकार कर लिया। फलस्वरूप वे दोनों एक जन्म में हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष बने। उन्होंने भगवान से युद्ध किया और उनके हाथ से मारे गए। वही दोनों दूसरे जन्म में रावण–कुंभकर्ण बने। भगवान ने रामावतार लिया और अपने भक्त रावण को खलनायक का पाठ दिया। रावण ने भगवान श्रीराम की आज्ञा शिरोधार्य कर अपने खलनायक के पाठ का अभिनय बखूबी बड़े सुन्दर ढंग से किया। निष्कर्ष यह है कि रावण बाह्य दृष्टि से भले ही दुष्ट दुराचारी था, परन्तु आन्तरिक दृष्टि से वह परम तपस्वी वेदमार्गानुगामी, यज्ञयागादि में निष्ठा रखने वाला और भगवान श्रीराम का अनन्य भक्त था।

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मैं तोरा।। (1/132/7)
हे नाथ! जिस तरह मेरा हित हो, आप वही शीघ्र कीजिए! मैं आपका दास हूँ।

सीता राम चरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरे ।। (2/205/2)
श्रीसीताजी के चरणों में मेरा प्रेम आपकी कृपा से दिन–दिन बढ़ता ही रहे।

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।। (5/5/1)
अयोध्यापुरी के राजा श्रीरघुनाथजी को हृदय में धारण किए हुए नगर में प्रवेश करके सब काम कीजिए।

दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।। (5/27/4)
दीनों (दुखियों) पर दया करना आपका विरद है (और मैं दीन हूँ), अतः उस विरद को याद करके, हे नाथ! मेरे भारी संकट को दूर कीजिए।

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।। (7/21/1)
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।। (7/21/2)
'राम राज्य' में दैहिक, दैविक और भौतिक ताप किसी को नहीं व्यापते। सब मनुष्य आपस में प्रेम करते हैं और वेदों में बताई हुई नीति (मर्यादा) में तत्पर रहकर अपने–अपने धर्म का पालन करते हैं।

बचा हुआ जीवन बचेगा

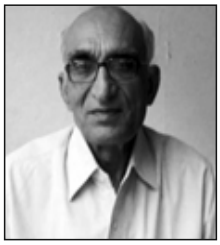

पं. राधा कृष्ण पाठक (अतीत), भांडेर, दतिया (म.प्र.), फोनः 8770436182

क्षीरज (दही) ने छिपा रखा है, घृत को जैसे,
बिना मथे दिखता नहीं है।
तप्त किये बिना, असली रूप न दिखे,
मेहनत की खेती, कोई करता नहीं है।।1।।

फल चाहे छोटा हो या हो बड़ा,
बिना श्रमसीकर के मिलता नहीं है,
आज भी बहुत दूर तक भागना पड़ता है,
बिना चले कोई मंजिल पर पहुँचता नहीं है।।2।।

भागमभाग की जिंदगी, पीड़ा भरी अँधियारी,
दीपक की रोशनी से तम जाता नहीं है।
काम करते रहो रात–दिन,
किसी को मंजिल का पता मिलता नहीं है।।3।।

निराशा के हाथों रोज पीता हूँ पानी,
फिर वही प्यास? चैन आता नहीं है।
भय ने तमाम रास्तों पर डाला है पड़ाव,
कहाँ से जायें रास्ता कोई दूसरा दिखता नहीं है।।4।।

तुम्हें लगता होगा कि रोज–रोज रोता हूँ,
आँसू जिगर के भीतर ही भीतर हैं कोई देखता नहीं है।

अहंकार से भरे हैं सभी रास्ते, जहाँ देखो उधर जाओ,
कोई घर इस कायनात में, खाली दिखता नहीं है।।5।।
सच को स्वीकारने की हिम्मत नहीं है।
जी रहे हैं लोग अंदर बाहर, अलग–अलग,
समझ कर भी समझता कोई नहीं है।।6।।

समझ कर स्वीकार कर लोगे, यदि तुम।
बचा हुआ जीवन हँसेगा, जो अभी हँसता नहीं है।

सीता-हरण की आध्यात्मिक पृष्ठभूमि

डॉ. सहृदय नारायण उपाध्याय, झाँसी (उ.प्र.), फोनः 7860039496

गोस्वामीजी का विचार है कि महामानव के रूप में श्रीरामचरित प्रस्तुत करना जितना सरल है, ईश्वर के रूप में उतना ही कठिन है, इसलिए वे लिखते हैं–

निर्गुन रूप सुलभ अति सगुन जान नहिं कोइ।
सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम होइ।। (7/73ख)

उनका मानना है कि सगुण को जानना अत्यंत कठिन है। सगुण ब्रह्म के चरित्रों को देखकर मुनियों का भी मन भ्रम में पड़ जाता है। गोस्वामीजी का भगवान राम के ईश्वरत्व के प्रति दृढ़ विश्वास है, अतः वे अपने पाठकों को ईश्वरत्व के बारे में हर प्रसंग में स्मरण कराते रहते हैं। रावण के द्वारा सीताजी (उनका प्रतिबिंब) का अपहरण कई प्रश्नों को जन्म देता है। श्रीराम का सीता–हरण के पूर्व में यह कहना है कि–

तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा। जौ लगि करौं निसाचर नासा।। (3/24/2) से प्रकट होता है कि श्रीराम ईश्वर हैं, फिर भी गोस्वामीजी **'मैं कछु करबि ललित नरलीला' (3/23/1)** के रूप में प्रस्तुत करके यह बताना चाहते हैं कि ईश्वर नर–लीला कर रहा है। उन्होंने इस लीला को आध्यात्मिक पृष्ठभूमि में प्रस्तुत किया है, जिसका विवरण इस प्रकार से है :–

दंडकवन में लखनलालजी द्वारा भगवान राम से बड़ी उत्सुकता से पूछा गया कि प्रभु **'कहहु ग्यान बिराग अरु माया। कहहु सो भगति करहु जेहिं दाया।।' (3/14/8)** भगवान राम ने अनुज को पहले माया के बारे में ही समझाया, क्योंकि ज्ञान व वैराग्य के बारे में पहले समझा दिया जाए तो माया का अस्तित्व स्वयं ही समाप्त हो जाएगा। उसी समय शूर्पणखा का आगमन दंडक वन में होता है, जिसको प्रभु अविद्या माया का रूप बताते हैं– **'एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा।।' (3/15/5)**। कुछ समय पूर्व ही भगवान राम चित्रकूट की भूमि से दंडक वन में आए हैं। चित्रकूट की ब्रह्ममय भूमि में मन, बुद्धि और अहंकार का प्रवेश नहीं है। यहाँ तक कुसंस्कारों को भी यह भूमि समाप्त कर चुकी है। मानो चित्तवृत्ति पूरी तरह निरुद्ध हो चुकी है। योग की इसी दिव्य भूमि में श्रीभरत और भगवान राम का मिलन होता है, पर यह भूमि दंडकारण्य की है, जिसे गोस्वामीजी मन की भूमि कहते हैं और जो भगवान राम के आगमन से भक्तजनों का मन पावन करती है, यथा –

दंडकबनु प्रभु कीन्ह सुहावन। जन मन अमित नाम किए पावन।। (1/24/7)

इस मन की भूमि में तो वही होगा, जो दंडकारण्य में हुआ। मानव में विकारों को माया के रूप में देखा गया है–**'मैं अरु मोर तोर तैं माया' (3/15/2)**। मंथरा कैकेयीजी को मैं और मेरापन तथा तू और तेरापन की भावना से ओत–प्रोत कर देती है। अंततः कैकेयीजी को लोभवृत्ति की दिशा में प्रेरित कर देती है, जिससे भरत और राम के बीच दूरी होते दिखायी देती है, पर भगवान के भक्त का ये माया के विकार कुछ नहीं बिगाड़ पाते हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में विचारणीय है कि –

शूर्पणखा में काम वृत्ति की प्रधानता है। इस वृत्ति की पूर्णता के लिए वह जो भी यत्न करती है, अरण्यकाण्ड की लीला इसी के परिणामस्वरूप सामने आती है। शूर्पणखा भगवान राम और सीताजी के बीच दूरी पैदा कर देती है अर्थात् उनका एक दूसरे से वियोग करा देती है। तत्वतः भगवान राम और सीता सदा ही एक है–

गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न।
बंदउँ सीता राम पद जिन्हहि परम प्रिय खिन्न।। (1/18)

रावण एवं शूर्पणखा दोनों ही देहवादी हैं, अतः वे सोचते हैं कि इनकी देह अलग है, तो हम लोग इन्हें अलग–अलग कर देंगे।

काम, क्रोध एवं लोभ वृत्तियों की निंदा इसीलिए की जाती है, क्योंकि ये विकार हमें भगवान से अलग कर देते हैं। लोभ की वृत्ति के कारण मनुष्य निरंतर कुछ न कुछ पाने के लिए प्रयत्नशील रहता है, पर यदि भगवान को पाने के प्रयत्न का लोभ हो जाए तो लोभ वृत्ति भी भगवान को पाने का माध्यम बन जाती है। काम वृत्ति से व्यक्ति मिलन सुख के लिए बेचैन रहता है, पर यदि ईश्वर से मिलन हो जाए तो फिर किसी और से मिलने की कामना कहाँ शेष रहेगी। काम वृत्ति का प्रवेश सामान्यतया सुंदर रूप दर्शन से होता है, पर जिसके मन में भगवान का रूप बस जाए तो फिर उसे और कोई दूसरा रूप कैसे लुभा सकता है। भगवान श्रीराम के सौन्दर्य के संदर्भ में गोस्वामीजी लिखते हैं –

स्याम गौर सुंदर दोउ जोरी। निरखहिं छबि जननीं तृन तोरी।।
चारिउ सील रूप गुन धामा। तदपि अधिक सुख सागर रामा।।(1/198/5–6)
रूप सकहिं नहिं कहि श्रुत सेषा। सो जानइ सपनेहुँ जेहिं देखा।।(1/199/12)

क्रोध हमेशा द्वैत के कारण होता है। श्रीरामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में क्रोध एवं द्वैत के संदर्भ में लिखा है–

क्रोध कि द्वैतबुद्धि बिनु द्वैत कि बिनु अग्यान।
मायाबस परिछिन्न जड़ जीव कि ईस समान।। (7/111ख)

ईश्वर से अभिन्नता हो जाए तो क्रोध स्वतः ही समाप्त हो जाएगा। अयोध्या में जो विकृति हुई उसका समाधान तो भरतजी ने तुरंत दे दिया, पर अरण्यकाण्ड में जिस विकृति की रचना हुई, उसका समाधान तुरंत नहीं हो पाया, अपितु उसमें लंबा समय लगा। गोस्वामीजी लिखते हैं–

सूपनखा रावण कै बहिनी। दुष्ट हृदय दारुन जस अहिनी।।
पंचवटी सो गइ एक बारा। देखि बिकल भइ जुगल कुमारा।।(3/17/3–4)

श्रीरामजी को देखकर तो समाधि लग जानी चाहिए थी, पर शूर्पणखा व्याकुल हो जाती है। वह केवल भगवान राम को ही देखकर आकर्षित नहीं हुई, वरन् 'जुगल कुमारा' मानों दोनों कुमारों को देखकर आसक्त हुई। यह व्याकुलता वासना के कारण थी। माया की एक विशेषता यह भी होती है कि वह वेश बदलने की क्रिया में अत्यन्त निपुण होती है। गोस्वामीजी ने शूर्पणखा का परिचय दुष्ट हृदय सर्पिणी की तरह स्वभाव वाली महिला तथा रावण की बहिन के रूप में दिया है, जबकि स्त्री का परिचय प्रायः पिता, पति या पुत्र से होता है। शूर्पणखा का परिचय रावण के स्वभाव से मेल खाता है। इसीलिए उसका परिचय रावण की बहिन के रूप में दिया गया। शूर्पणखा सोचती है कि ये राजकुमार तो बड़े सुंदर हैं, इसलिए इनके आगे सुंदर बनकर ही जाना चाहिए, यथा–

रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं जाई। बोली बचन बहुत मुसुकाई।। (3/17/7)

वह अपने वास्तविक रूप में न जाकर अपनी कुरूपता को छिपाने के लिए बनावटी सुंदरता से प्रभु के समक्ष जाती है। वह भगवान के स्वभाव को नहीं जानती, क्योंकि उन्हें तो–

निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।।(5/44/5)

भगवान को शूर्पणखा का यह रूप व स्वभाव बिलकुल पसंद नहीं आया। भगवान उसकी नकली सुंदरता को पहचान जाते हैं। भगवान के सामने शूर्पणखा कहती है–

मम अनुरूप पुरुष जग माहीं। देखेउँ खोजि लोक तिहु नाहीं।। (3/17/9)

मम ही माया का प्रिय शब्द है। अपने अहम को केंद्र बनाकर वह कहती है कि मैंने तीनों लोकों में अपने अनुरूप कोई पुरुष नहीं पाया, अतः मैं अभी तक कुवारी हूँ–**'मनु माना कछु तुम्हहि निहारी।। (3/17/10)**। यह माया की भाषा है कि मन कुछ तुम पर आसक्त हुआ, यदि मन पूरा ही आसक्त हो जाता तो मानो भगवान ही मिल जाते। यह तो भगवान ही हैं जो मन को पूर्ण रूप से भा जाते हैं। गोस्वामीजी उसके परिचय में भी साहित्यिक व्यंग करते हैं कि ऐसे स्वभाव वाली स्त्री किसी मुनि की बेटी कहना उसके पिता के लिए कलंक है। इसको आध्यात्मिक अर्थों में देखें तो कहा जा सकता है कि माया तो किसी की बेटी हो नहीं सकती, क्योंकि सारे दुर्गुणों की खान यह माया माँ ही है। गोस्वामीजी लिखते हैं कि यह माया ही जीव को निरंतर नचाती रहती है। प्रश्न उठता है कि दुर्गुण किसके पुत्र हैं। तब गोस्वामीजी कहते हैं कि दुर्गुणों का कोई पिता नहीं है। बस इनकी केवल माँ है।

यह सब माया कर परिवारा। प्रबल अमिति को बरनै पारा।। (7/71/7)

भगवान से शूर्पणखा विवाह का निवेदन करती है, पर प्रभु उसकी ओर देखते ही नहीं तथा अनुज लखनलाल की ओर उन्हें क्वारा बताते हुए भेज देते हैं। लक्ष्मणजी उसकी ओर नहीं देखते हैं और प्रभु की ओर देखते हुए कहते हैं – **'प्रभु बिलोकि बोले मृदु बानी' (3/17/12)**। दोनों भाइयों ने एक संकेत दिया है कि माया से बचने के लिए या तो भक्ति

की ओर देखना चाहिए या भगवान की ओर, तभी माया से बचा जा सकता है। शूर्पणखा अविद्या माया का रूप है। उसका कार्य भेद को जन्म देना है। जीव एक पथिक की भाँति प्यास के कारण भटक जाता है। यही माया तृप्ति का लोभ देकर उसे भव कूप तक ले जाती है तथा जल दिखाती है। जीव जल के लोभ से भव कूप में झाँकने लगता है, फिर माया उसी में जीव को धकेल देती है, यथा–

गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई।।
तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। बिद्या अपर अबिद्या दोऊ।।
एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा।। (3/15/3–5)

फिर कूप से तो कोई उसे निकालेगा तभी निकल पाएगा। जीव अपने से नहीं निकल पाता। शूर्पणखा वास्तव में यहाँ धोखा खा गयी। उसका जादू राम–लक्ष्मण पर नहीं चला, क्योंकि एक ज्ञान है और दूसरा वैराग्य। ज्ञान–वैराग्य ही अविद्या माया के प्रलोभन से बचा पाते हैं। श्रीरामचरितमानस में श्रीरामजी को ज्ञानस्वरूप, सीताजी को भक्तिस्वरूपा एवं लक्ष्मणजी को वैराग्यस्वरूप बताया है, यथा–

सानुज सीय समेत प्रभु राजत परन कुटीर।
भगति ग्यानु बैराग्य जनु सोहत धरे सरीर।। (2/321)

लक्ष्मणजी शूर्पणखा की नाक व कान काटकर उसका विरूपीकरण कर देते हैं, जिससे लंका के निशाचरों का विनाश सरल हो जाता है। विरूपीकरण के पश्चात् शूर्पणखा अपने भाई खर–दूषण व त्रिशिरा के पास गयी और कहा कि दो नृप बालकों ने मेरा यह हाल कर दिया है। आप लोग बदला लीजिए। पूरी सेना के साथ राक्षसों ने भगवान राम पर आक्रमण कर दिया। खर–दूषण व त्रिशिरा भगवान का अलौकिक रूप देखकर मोहित हो गए। यही भगवान का प्रभाव है कि रूप, लीला और धाम में जीव आकृष्ट हो ही जाता है, पर यह तीनों वासना युक्त हैं, इसलिए वे उस लाभ से वंचित रहे, जो जीव को ईश्वर के दर्शन से प्राप्त होता है। भक्तमती शबरी से स्वयं श्रीरामजी कहते हैं कि मेरे दर्शन का फल यह है कि जीव अपने सहज स्वरूप को पा जाता है। जीव का सहज स्वरूप चेतन, विकार रहित एवं सहज ही सुख की राशि है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

मम दरसन फल परम अनूपा। जीव पाव निज सहज सरूपा।। (3/36/9)
ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी।। (7/117/2)

इन राक्षसों की सेना को वरदान प्राप्त था कि वे आपस में ही लड़कर मरें अन्यथा न मरें। इसीलिए श्रीराम ने मोहिनी अस्त्र का प्रयोग कर दिया, जिससे सभी राक्षस एक दूसरे में 'राम' को देखने लगे और आपस में लड़कर मर गए और तब भगवान ने खर–दूषण और त्रिशिरा का वध किया।

सुर मुनि सभय प्रभु देखि मायानाथ अति कौतुक कर्‌यो।
देखहिं परसपर राम करि संग्राम रिपुदल लरि मर्‌यो।। (3/20/छंद)

प्रभु ने सारे राक्षसों को राम बना दिया। किसी ने भगवान से पूछा कि आपने अपना रूप सभी निशाचरों को क्यों दे दिया। प्रभु बोले–'ये सब मेरे रूप पर मोहित होकर प्रशंसा रूप की कर रहे थे तो मैंने अपना रूप इन्हें दे दिया। विचारणीय है कि भगवान के रूप को भी पाकर सबका नाश हो जाता है। मन के राग का यह अद्‌भुत दर्शन प्रभु के पांडित्य को ही प्रकट करता है। इसीलिए गोस्वामीजी ने **'खर दूषन बिराध बध पंडित।।' (7/51/5)** लिखा है।

खर–दूषण और त्रिशिरा के वध के बाद शूर्पणखा रावण के पास जाकर अपनी गुहार लगाती है और खासतौर पर रावण की कामान्धता जगाने के लिए अपनी घटना के साथ–साथ सीताजी की सुंदरता का वर्णन करके यह कहती है–

रूप रासि बिधि नारि सँवारी। रति सत कोटि तासु बलिहारी।। (3/22/9)

वह जानती है चाहे मेरे लिए रावण देर करे, लेकिन स्त्री प्राप्त करने के लिए तुरंत कार्य करेगा। रावण का व्यक्तित्व विरोधाभासों का पुंज है। खर–दूषण और त्रिशिरा की मृत्यु सुनकर उसे बहुत बड़ा सदमा लगा और विचार करता है –

खर दूषन मोहि सम बलवंता। तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता।। (3/23/2)

खर–दूषण व त्रिशिरा का वध सुनकर रावण आतंकित हो गया और उसके अन्तःकरण में विचार आता है कि राम भगवान हैं, पर यह ज्ञान न होकर केवल ज्ञानाभास है, क्योंकि अगले ही क्षण उसका अहंकार जाग जाता है और सोचता है–

जौं नररूप भूपसुत कोऊ। हरिहउँ नारि जीति रन दोऊ।। (3/23/6)

एक क्षण के लिए भी भगवान राम के ईश्वरत्व के बारे में उठने वाला संकल्प रावण के जीवन में फिर कभी नहीं जागा। यहाँ मारीच से उसकी तुलना की जा सकती है, जो राम के ईश्वरत्व से अन्तर्मन से परिचित हो चुका है, पर उसे बाहर प्रकट करने की स्थिति में नहीं है। रावण सीताहरण के लिए उसी की सहायता प्राप्त करने जाता है। मारीच को कपट मृग का वेश बनाकर राम के समक्ष जाना पड़ता है, किन्तु निश्चित मृत्यु का पूर्ण ज्ञान होने पर भी पूरी तरह प्रसन्न है। वह अपने आनंद को प्रकट नहीं होने देता और सोचता है–

मम पाछें धर धावत धरें सरासन बान।
फिरि फिरि प्रभुहि बिलोकिहउँ धन्य न मो सम आन।। (3/26)

रावण के जीवन में इस तरह का अंतर प्रेम भगवान के प्रति नहीं है। उसके मन में भय व व्याकुलता समाई हुई है। दूसरी ओर मारीच भगवान के पूर्ण शरणागत था। शरणागति की समग्रता के कारण ही वह समझ गया कि भगवान की लीला के लिए उसके बलिदान की आवश्यकता है और इस कारण वह अचानक अत्यन्त हर्षित हो जाता है। मानो ईश्वर ने कहा कि मेरी ललित नर–लीला के लिए तुम्हारा यह कार्य अति आवश्यक है।

रावण साधु वेश में सीताजी के हरण के लिए जाता है। भगवान की परीक्षा लेने में

रावण अनुत्तीर्ण हो गया, क्योंकि वह तो सर्वज्ञ की परीक्षा एक सोने के मृग से लेने चला था। सीताजी तो भगवान के कहने पर पहले ही अग्नि में निवास कर चुकी थीं। माया सीता प्रभु को उस माया मृग के पीछे भेज देती हैं, जिसका दुष्परिणाम उनके हरण के रूप में आता है। गोस्वामीजी सीताहरण के माध्यम से जन मानस को शिक्षा देते हैं कि जीवन में लोभ वृत्ति को कभी आने नहीं देना चाहिए, क्योंकि उससे जीवन में अशान्ति ही आती है। हम सब माया रूपी मृग के पीछे लगाए हुए हैं। ईश्वर की आराधना सांसारिक सुख–भोग प्राप्त करने के लिए ही की जा रही है। विवेक से जीवन में निरंतर विचार करना चाहिए कि कहीं सोने का मृग हुआ करता है? सीताजी ने अशोक वाटिका में जाने से पूर्व ही यह भूल सुधार की, वे कहती हैं–

हा लछिमन तुम्हार नहिं दोसा। सो फलु पायउँ कीन्हेउँ रोसा।। (3/29/3)

जब हनुमानजी ने अशोक वाटिका में सीताजी को भगवान की कथा आदि से सुनाई तो उन्होंने कहा आप कौन हैं? प्रकट क्यों नहीं होते–

तब हनुमंत निकट चलि गयऊ। फिरि बैठीं मन बिसमय भयऊ।। (5/13/8)

यह सावधानी रावण के सामने नहीं रखी गई थी, जिससे सीताजी का अपहरण हो गया। वास्तव में सीताहरण के माध्यम से प्रभु राक्षसों का संहार करना चाहते थे। सीताजी को लक्ष्मी, माता, शक्ति, भक्ति आदि माना जाता है। यही शक्ति जनकपुर में सुंदरता भर देती है, अयोध्या में शील तथा लंका का विनाश कर देती है। सीताहरण को आध्यात्मिक दृष्टि से देखें तो यह जीवन की शांति भंग होने की अवस्था है, जो भौतिक वस्तुओं के प्रलोभन से आती है।

जब साधना भौतिक वस्तुओं की प्राप्ति के लिए न होकर केवल और केवल भगवान को प्राप्त करने हेतु और उनके शरणागत होकर की जाती है, तभी परम शांति और प्रभु प्राप्ति होती है, जैसे मारीच को हुई।

राम भगति रत नर अरु नारी। सकल परम गति के अधिकारी।। (7/21/4)

'राम राज्य' में पुरुष स्त्री सभी रामभक्ति–परायण हैं और सभी परमगति (मोक्ष) के अधिकारी हैं।

बड़े भाग पाइब सतसंगा। बिनहिं प्रयास होहिं भव भंगा।। (7/33/8)

बड़े भाग्य से सत्संग की प्राप्ति होती है, जिससे बिना ही परिश्रम के जन्म–मृत्यु का चक्र नष्ट हो जाता है।

पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधभाई।। (7/41/1)

श्रीरामजी कहते हैं कि हे भाई! दूसरों की भलाई करने के समान कोई धर्म नहीं है और दूसरों को दुःख पहुँचाने के समान कोई नीचता (पाप) नहीं है।

विघ्नहर्ता-मंगलकर्ता गणेशजी

पं. दिनेश चंद्र शर्मा, अध्यक्ष, श्रीरामचरितमानस समिति, नोएडा, फोनः 9811056467

प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं
सिन्दूर पूर परिशोभित गंड युग्मम्।
उद्दंड विघ्न परिखंडनचंडदंड
माखंडलादि सुरनायक वृन्दवन्द्यम्।।

जो अनाथों के बंधु हैं। जिनके दोनों कपोल सिन्दूर से सुशोभित हैं। जो प्रबल विघ्नों का नाश करने के लिए प्रचंड दंड स्वरूप हैं एवं इन्द्रादि देवों के वन्दनीय हैं, उन श्रीगणेशजी का मैं प्रातःकाल स्मरण करता हूँ।

हिन्दू–संस्कृति वेद–शास्त्रों पर अवलम्बित है। उनमें मूलतत्व सच्चिदानंद स्वरूप द्विविध रूप माना गया है। एक रूप निर्गुण निराकार है और दूसरा सगुण साकार है। निर्गुण निराकार रूप का योगी जन योग की साधना से निर्विकल्प समाधि में साक्षात्कार करते हैं। परन्तु साधारण व्यक्ति मन–वाणी से परे अगोचर होने के कारण निराकार की भावना नहीं कर सकते, इसलिए वे तो उसके सगुण साकार रूप का ही ध्यान–स्मरण करते हैं। सनातन धर्म में नित्य पंचदेव–उपासना करने का विधान है। पंचदेवों में गणेश, शिव, शक्ति (दुर्गा), सूर्य और विष्णु आते हैं। ये पाँचों सगुण साकार भगवान के ही रूप हैं।

पंचदेवोपासना में गणेशजी का प्रथम स्थान है। गणेशजी समस्त अमंगलों और विघ्नों के नाशक हैं, इसलिए प्रत्येक कार्य का श्रीगणेश (प्रारंभ) उनके स्मरण–वंदन से ही किया जाता है। गणेशजी बुद्धि बढ़ाने वाले हैं। उनकी मूर्ति का ध्यान करने, पूजा करने और उनका मंगलमय नाम जपने से मेधा–शक्ति बढ़ती है और विघ्न नष्ट होते हैं, इसलिए कवि लोग काव्य–रचना के प्रारंभ में गणेशजी का स्मरण–वंदना करते हैं, जिससे उनकी काव्य–रचना निर्विघ्न पूर्ण हो सके। गणेशजी स्वयं भी महान लेखक हैं। यदि गणेशजी महाभारत के लेखक न बनते तो भगवान वेदव्यास के पंचम वेद महाभारत से संसार वंचित ही रह जाता।

काव्य–जगत की भी यह परम्परा रही है कि कवि अपने काव्य–ग्रंथ की निर्विघ्न पूर्णिता के लिए गणेशजी और बुद्धिदायिनी सरस्वती की वंदना करते आए हैं। संतशिरोमणि मानसकार ने भी अपने महाकाव्य श्रीरामचरितमानस की निर्विघ्न पूर्णिता के लिए प्रारम्भ में गणेश और सरस्वती की वंदना की है–

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मंगलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।। (बालकांड–वंदना)

वर्ण एवं अर्थ समूहों को रसयुक्त, छंदोबद्ध करने वाली और मंगलों को करने वाली सरस्वती और गणेशजी की मैं वंदना करता हूँ।

गणेशजी नित्य देवता है, परन्तु विभिन्न समयों में विभिन्न प्रकार से उनका लीला–प्राकट्य होता है। श्वेतकल्प में घटित पार्वती–नन्दन गणेश की जन्म–कथा इस प्रकार है– एक बार जगदम्बा पार्वती कैलास पर्वत पर अपने अन्तःपुर में विराजमान थीं। दासियाँ उनके शरीर पर उबटन लगा रही थीं। उबटन लगाते समय कुछ उबटन नीचे गिर गया। शरीर से गिरे उबटन को इकट्ठा कर आदि शक्ति पार्वती ने एक बालक की मूर्ति बनायी। चेतनामयी माँ का वह बालक अचेतन कैसे हो सकता था अर्थात् वह बालक चेतन था। उस बालक को माता पार्वती ने बनाया था, इसलिए वह बालक पार्वतीनन्दन कहलाया। वह बालक शुभ लक्षणों से युक्त और बल–पराक्रम से सम्पन्न था। उसके सभी अंग सुंदर, सुडौल और दोषरहित थे। माता पार्वती ने उसे अनेक प्रकार के वस्त्र और आभूषण प्रदान किए।

उस बालक ने माता पार्वती को प्रणाम कर सेवा करने की आज्ञा माँगी। माँ ने उसे यह आज्ञा दी कि तुम द्वार पर खड़े हो जाओ। मेरी आज्ञा के बिना कोई भी अन्दर न आ पाए। माता की आज्ञा का पालन करने के लिए बालक डंडा लेकर द्वार पर खड़ा हो गया। भगवान शिव आए और अन्तःपुर में जाने लगे तो बालक ने उन्हें अन्दर जाने से रोक दिया। शिव ने देवताओं को द्वार से बालक को हटा देने की आज्ञा दी। इन्द्र, वरुण, कुबेर, यम आदि महाशक्ति के पुत्र गणेश के डंडे से घायल होकर भाग खड़े हुए। भगवान शिव भी कम विनोदी नहीं हैं। उन्होंने देवताओं का गर्व–भंग कराने के लिए ही गणेशजी के साथ युद्ध करवाया था। फिर विचित्र लीला करने के लिए स्वयं बालक से युद्ध करने लगे। घोर युद्ध हुआ। अंत में भगवान शिव ने क्रोधित होकर त्रिशूल से बालक का शिर काट दिया।

यह समाचार सुनकर आदिशक्ति पार्वती के क्रोध का ठिकाना न रहा। उन्होंने अनेक शक्तियों को उत्पन्न कर प्रलय मचाने की आज्ञा दी। असमय प्रलय होती देखकर देवताओं ने बालक को जीवित करने के लिए भगवान शिव से प्रार्थना की, तब भगवान ने किसी जीव का सिर काट कर लाने को कहा। देवता शीघ्र गए और हाथी के शिशु का सिर काट कर ले आए। भगवान शिव ने वह सिर बालक के धड़ से जोड़ दिया, इसलिए वह बालक गजानन कहलाया। एक बार अपने बड़े भाई कार्तिकेय के साथ युद्ध करते समय गजानन का एक दाँत टूट गया था, तब से वे एकदन्त कहलाए। लम्बा उदर होने से लम्बोदर और उनका वाहन मूषक होने से वे मूषकवाहन कहलाते हैं। शिव के गणों में मुख्य और गणों के स्वामी होने से वे गणपति कहलाते हैं। उनकी दो पत्नियाँ हैं–ऋद्धि और सिद्धि।

अब प्रश्न यह उठता है कि गणेशजी प्रथम पूज्य कैसे बने?

पाठकों से मेरा नम्र निवेदन है कि कल्पभेद से कथाओं में अंतर है, अतः व्यर्थ की शंका न करें, अपितु श्रद्धा–भक्ति से पढ़–सुनकर मुद–मंगलदाता की मंगलमयी कथाओं का आनंद लेते हुए पुण्यार्जन करें।

गणेशजी के प्रथम पूज्य बनने की एक कथा इस प्रकार है–

एक बार देवताओं के मध्य जब यह प्रश्न उठा कि देवों में सर्वप्रथम किसकी पूजा की जाए? तब ब्रह्माजी ने यह निर्णय दिया कि जो पृथ्वी की परिक्रमा करके सबसे पहले आएगा, वही प्रथम पूज्य होगा। यह सुनते ही देवताओं ने अपने–अपने तीव्रगामी वाहनों से दौड़ना शुरू कर दिया। विद्यावारिधि गणेशजी ने विचार किया कि मेरी सवारी तो चूहा है, वह तेज नहीं दौड़ सकता। फिर इस प्रतियोगिता में विजयी कैसे बना जाए? गणेशजी यह विचार कर ही रहे थे कि तभी उनके मन में नारदजी ने आकर कहा कि राम का नाम तो सर्वलोक प्रतिष्ठित है। 'राम' नाम की परिक्रमा करने से सम्पूर्ण पृथ्वी की परिक्रमा मानी जाएगी। फिर क्या देवर्षि नारदजी की प्रेरणा से प्रेरित होकर गणेशजी ने पृथ्वी पर 'राम' का नाम लिखा और उसकी परिक्रमा कर ली। 'राम' नाम की परिक्रमा करने से गणेशजी देवों में प्रथम पूजे जाते हैं। संभवतः इसी कथा की ओर संकेत करते हुए रामभक्त तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस के अन्तर्गत राम नाम की महिमा के प्रसंग में लिखा है–

महिमा जासु जान गनराऊ। प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ।। (1/19/4)

(राम नाम की महिमा को गणेशजी जानते हैं। वे राम नाम के प्रभाव से ही देवों में सबसे पहले पूजे जाते हैं।)

पुराणान्तर्गत कथा–भेद से गणेशजी ने अपने माता–पिता की परिक्रमा की थी। दोनों ही प्रकार से वे परिक्रमा करने में प्रथम विजयी घोषित किए गए थे, इसलिए सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी ने उन्हें प्रथम पूज्य बनाया। तभी से प्रत्येक कर्म के प्रारंभ में गणेशजी की प्रथम पूजा होती है। गणेशजी भगवान शिव के गणों के मुख्य अधिपति हैं। यदि कार्यारंभ करने पर गणाधिपति का प्रथम पूजन न हो तो कर्म के निर्विघ्न पूर्ण होने की आशा कम ही रहती है। यदि कहीं पहले गणेश की पूजा न करके अन्य देव का पूजन किया जाए तो उस पूजन का फल नष्ट हो जाता है, इसीलिए किसी देव की पूजा करने से पूर्व गणेशजी की पूजा करनी चाहिए।

शिवपुराण के अनुसार गणेशजी के विवाह की कथा इस प्रकार है–जब दोनों कुमार विवाह के योग्य हो गए तो वे दोनों 'पहले मैं विवाह करूँगा, पहले मैं विवाह करूँगा' कहते हुए विवाद करने लगे। तब भगवान शिव ने अपने दोनों पुत्रों को बुलाकर कहा–पुत्रो! तुम दोनों में से जो समूची पृथ्वी की परिक्रमा करके पहले लौट आएगा, उसी का विवाह पहले

कर दिया जाएगा। पिता की यह बात सुनकर महाबली कार्तिकेय तुरंत पृथ्वी की परिक्रमा करने के लिए चल दिए, परन्तु बुद्धिमान गणेश वहीं खड़े रहे। उन्होंने मन में भलीभाँति विचार कर अपने माता–पिता को आसनों पर बैठाकर पहले उनकी विधि पूर्वक पूजा की और फिर उन्हें प्रणाम कर उनकी सात बार परिक्रमा की। फिर हाथ जोड़कर बोले–शास्त्रों में ऐसा लिखा है कि जो पुत्र अपने माता–पिता की पूजा करके उनकी परिक्रमा करता है, तो उसे पृथ्वी की परिक्रमा का फल प्राप्त होता है। अब आप मेरा शीघ्र ही विवाह कर दीजिए। गणेशजी की बात सुनकर माता–पिता बड़े प्रसन्न हुए और ऋद्धि–सिद्धि नाम की दो सुन्दर कन्याओं से उनका विवाह करा दिया। जब स्वामी कार्तिकेय पृथ्वी की परिक्रमा कर लौटे तब छोटे भाई गणेश के विवाह का समाचार सुनकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ और वे वहाँ से चले गए। उन्होंने जीवनभर विवाह नहीं किया।

मोदकप्रिय गणेशजी के हाथ में जो मोदक (लड्डू) है, उसकी कथा इस प्रकार है–एक बार देवताओं ने अमृत से तैयार किया हुआ मोदक भक्तिभाव से माता पार्वती को प्रदान किया। माता पार्वती ने उस दिव्य मोदक के गुणों का वर्णन अपने दोनों पुत्रों के सामने किया। इस दिव्य मोदक के सूँघने मात्र से अमरत्व की प्राप्ति होती है और वह प्राणी समस्त शास्त्र, ज्ञान–विज्ञान में प्रवीण हो जाता है। उस मोदक की महिमा सुनकर दोनों पुत्रों ने मोदक को प्राप्त करने की अभिलाषा व्यक्त की। पार्वती असमंजस में पड़ गयीं। मुझे तो दोनों ही पुत्र प्रिय हैं, फिर इस मोदक को किसको दूँ?

तब सोच–विचार कर पार्वती ने कहा, जिसका अधिक धर्माचरण होगा, उसे ही यह दिव्य मोदक दिया जाएगा। इतना सुनते ही कार्तिकेय तीर्थाटनार्थ चल पड़े। इधर धर्माचरण गणेशजी ने सोचा कि संसार में सबसे बड़े तीर्थ तो माता–पिता ही हैं। फिर क्या गणेशजी अपने माता–पिता की परिक्रमा करके उन्हीं के चरण–कमलों में बैठ गए। जब समस्त तीर्थों में स्नान कर कार्तिकेय के लौटकर आने पर शिव–पार्वती निर्णय देने लगे, तब गणेशजी ने कहा–

सर्वतीर्थमयी माता सर्वदेवमयः पिता।
मातरं पितरं तस्मात्सर्वं यत्नेन पूजयेत्।।
मातरं पितरं चैव यस्तु कुर्यात्प्रदक्षिणम्।
प्रदक्षिणा कृता तेन सप्तद्वीपावसुन्धरा।।

(पद्मपुराण सृष्टि खंड 47/11/12)

अर्थात् सर्वतीर्थमयी माता एवं समस्त देवमय पिता हैं, अतः पुत्र को माता–पिता की सेवा यत्नपूर्वक करनी चाहिए। जो पुत्र अपने माता–पिता की परिक्रमा करता है, उसने मानों सातों द्वीपों की परिक्रमा कर ली।

गणेशजी की माता–पिता के प्रति अगाध श्रद्धा–भक्ति देखकर एवं धर्माचरण की अधिकता देखकर वह दिव्य मोदक गणेशजी को दे दिया गया। उनके हाथ में वही दिव्य मोदक है। उसी दिव्य मोदक के प्रभाव से गणेशजी सकल अनर्थ–विघ्नहर्ता, मुदमंगलदाता, उत्कृष्ट कोटि के लेखक आदि बने। उन्हीं का कथन है–माता–पिता के चरण–कमल ही पुत्र के लिए महान तीर्थ है –

पुत्रस्य च महत्तीर्थं पित्रोश्चरणपंकजम्।

मानसकार ने भी राम–कैकेयी संवाद में भगवान श्रीराम के मुख से यही भाव कहलवाया है, हे माता! जो पुत्र अपने माता–पिता के वचनों का पालन कर उन्हें प्रसन्न करता है, वही बड़भागी है–

सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी। जो पितु मातु बचन अनुरागी।। (2/41/7)

शिव विवाह के प्रसंग में आता है कि विवाह के समय मंडप में शिव–पार्वती ने गणेश का पूजन किया–

मुनि अनुसासन गनपतिहि पूजेउ संभु भवानि। (1/100)

मुनियों की आज्ञा से शिवजी और पार्वती ने गणेशजी का पूजन किया।

इस प्रसंग को पढ़–सुनकर कुछ लोग यह शंका करते हैं कि गणेश तो शिव–पार्वती के पुत्र हैं और गणेश का जन्म तो शिव–पार्वती के विवाह के बाद ही हुआ था, फिर शिव–पार्वती के विवाह के समय शिव–पार्वती द्वारा गणेश का पूजन किया जाना संभव ही नहीं है। जब विवाह के समय पुत्र गणेश थे ही नहीं, तब उनका पूजन कैसे किया जा सकता है? शंका निर्मूल नहीं है।

इस शंका का समाधान इस प्रकार है– गणेशजी अनादि हैं, जैसे भगवान विष्णु का हर युग में अवतार होता है, वैसे ही भगवान गणेश का भी समय–समय पर प्राकट्य होता है। जैसे विष्णु भगवान त्रेतायुग में कौसल्या नन्दन और द्वापर युग में देवकी नन्दन के रूप में प्रकट हुए, वैसे ही भगवान गणेश पार्वती नन्दन के रूप में प्रकट हुए। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि भगवान गणेश अनादि हैं। शिव–पार्वती के विवाह के समय उन अनादि गणेश का पूजन किया गया था। वही अनादि गणेश पार्वतीनन्दन के रूप में प्रकट हुए, इसलिए अनादि गणेश और पार्वती नन्दन गणेश एक ही हैं। इसलिए शंका करना व्यर्थ है। श्रीरामचरितमानस में भी यही भाव व्यक्त किया गया है, यथा–

कोउ सुनि संसय करै जनि सुर अनादि जियँ जानि। (1/100)

इस लेख के माध्यम से आज की नई पीढ़ी से मेरा नम्र निवेदन है कि जिन माता–पिता ने अपने बच्चों के लालन–पालन, शिक्षा और उनके उज्ज्वल भविष्य के लिए अपना खून

पानी की तरह बहाया। स्वयं कष्ट सहकर भी बच्चों की सुख–सुविधा का ध्यान रखा। अपनी इच्छाओं का गला घोंटकर उनकी इच्छाएँ पूरी कीं। उनके हर सुनहरे स्वप्न को साकार करने में जुटे रहे। अपना सारा स्नेह, ममता और आशीर्वाद उन पर लुटा दिए। अपने जीवन की गाढ़ी कमाई उनका भविष्य बनाने के लिए भेंट कर दी। बूढ़े होने पर उन्हीं माँ–बाप को उन्हीं के बच्चे भार समझते हैं। उन्हें प्रेम–सम्मान देने की बजाय बात–बात पर झिड़क कर अपमानित करते हैं। उन्हें घर के टूटे–फूटे फर्नीचर की तरह कबाड़ समझकर घर के कबाड़ खाने में डाल देते हैं। माँ को नौकरानी और पिता को नौकर से ज्यादा अहमियत नहीं देते। जिन बच्चों को माता–पिता अपना समझते रहे, वे ही बच्चे उन्हें पराया समझते हैं। इतना ही नहीं, षड्यंत्र के तहत उन्हें वृद्धाश्रम छोड़ आते हैं।

गणेशजी के पावन चरित्र से हमें और नई पीढ़ी को यह शिक्षा मिलती है कि पुत्र के लिए माता–पिता ही सर्वोपरि हैं। उनके चरणों में समस्त तीर्थ विद्यमान हैं, इसलिए पुत्र का परम कर्तव्य है कि वह अपने माता–पिता की श्रद्धा–भक्ति से सेवा कर अपने कर्तव्य का पालन करे। जो व्यक्ति माता–पिता के प्रति अपने कर्तव्य को नहीं निभा सकता, वह राष्ट्र के प्रति क्या कर्तव्य निभाएगा?

अंत में विघ्न–विनाशक गणेशजी से प्रार्थना है –

जगवंद्य भवानी के प्रिय सुत
विघ्नों का नाश किया करते।
पाथेय कर्म जिनका, उनके
पथ को निर्विघ्न किया करते।।
जो विघ्न पत्रिका–पथ छाये
विकराल शुंड से चूर्ण करें।
दुख–विघ्न–विनाशक वरदायक
निर्विघ्न पत्रिका पूर्ण करें।।

समय

समय बलवान हम निर्बल, हरा पाते न हम इसको।
समय मरता न, चिर रहता, मिटा देता सकल जग को।।
समय से ही बहारें हैं, समय से ही चमन खिलता।
समय के फेर से दुर्दिन, समय से भाग्य तक खिलता।।

श्री हनुमान चालीसा के सिद्ध मंत्र

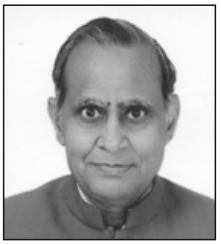

डॉ. भगवान दास पटैरया, नोएडा, फोन–9899004263

अखिल ब्रह्माण्ड नायक मर्यादा–पुरुषोत्तम भगवान श्रीरामजी की पतित पावन जन्म भूमि अयोध्यापुरी में एक संत रहते थे, जिन्हें श्रीहनुमान चालीसा सिद्ध था। वे कहा करते थे कि जिस प्रकार गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस का प्रत्येक शब्द मंत्रवत् है, उसी प्रकार श्रीहनुमान चालीसा का प्रत्येक शब्द मंत्र है। जब कोई व्यक्ति उनके पास किसी समस्या को लेकर उसके समाधान हेतु जाता था, तब वे उसे उसकी समस्या के अनुरूप श्रीहनुमान चालीसा की कोई न कोई चौपाई बताकर कहते थे कि इस मंत्र का जप करो, सब ठीक हो जाएगा। वे यह भी कहा करते थे कि श्रीहनुमान चालीसा के सौ पाठ करके एक बार उसे सिद्ध कर लो, फिर जप करो अथवा उस चौपाई का संपुट लगाकर बार–बार श्रीहनुमान चालीसा का पाठ करो, तो सोने में सुहागे की तरह मंत्र कारगर होगा। उल्लेखनीय कि यह सब श्रद्धा–विश्वास का खेल है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार बिना विश्वास के कोई भी सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती है, यथा–**'कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा।' (7/90/8)** श्रीहनुमान चालीसा के सिद्ध मंत्र भी श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्रों की तरह ही हैं। उनका भी उल्लेख इस आलेख में किया गया है। उन सिद्ध संत द्वारा बताए गए, जैसा कि मैंने किन्हीं सज्जन से सुना है, श्रीहनुमान चालीसा के कुछ सिद्ध मंत्र यहाँ प्रस्तुत हैं:–

(1) सद्बुद्धि प्राप्त करने हेतु:

महाबीर बिक्रम बजरंगी। कुमति निवार सुमति के संगी।।

श्रीहनुमानजी 'कुमति' का निवारण कर 'सुमति' (सद्बुद्धि) प्रदान करते हैं। गायत्री मंत्र में भी यही भाव है कि परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करें अर्थात् हमें 'सुमति' प्रदान करें।

सुमति–कुमति के संदर्भ में श्रीरामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड में विभीषण–रावण संवाद में इस प्रकार से वर्णन आया है, **'सुमति कुमति सब कें उर रहहीं। नाथ पुरान निगम अस कहहीं।। जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।।' (5/40/5–6)** श्रीहनुमान चालीसा के उपर्युक्त मंत्र के प्रभाव से हमारी कुमति समाप्त होकर सुमति प्रभावशाली हो जाती है और हमें परम सुख प्रदान करती है।

(2) विद्या प्राप्त करने (परीक्षा में सफल होने) हेतुः

बिद्यावान गुनी अति चातुर। राम काज करिबे को आतुर।।

अर्थात् श्रीहनुमानजी विद्यावान हैं, अतः हमें विद्या प्रदान करें, ऐसा भाव इस मंत्र का है। यही भाव श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र **'जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी। कबि उर अजिर नचावहिं बानी।। (1/105/6)** में है।

(3) मृत्यु के मुख से बचने हेतुः

लाय सजीवन लखन जियाये। श्रीरघुबीर हरषि उर लाये।।

उल्लेखनीय है कि हमारे जीवन की एक निश्चित आयु है, वह पूर्ण होने पर तो यह देह त्यागनी ही पड़ेगी, पर कभी–कभी अकाल मृत्यु अथवा बिना अवसर के मृत्यु का योग बन जाता है। ऐसे समय में यह मंत्र ठीक उसी तरह से प्रभावी होता है, जैसे महामृत्युंजय मंत्र, जिसमें हम शिवजी से मृत्यु के भय को दूर करने की प्रार्थना करते हैं। ऐसी ही भावना श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र, **'नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट। लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट (5/30)'** में है।

(4) यश प्राप्ति हेतुः

तुम्हरो मंत्र बिभीषन माना। लंकेस्वर भए सब जग जाना।।

इस मंत्र का जाप करते समय यह भाव मन में लाना चाहिए कि जिस प्रकार विभीषणजी ने श्रीहनुमानजी का मंत्र (अर्थात् श्रीरामजी की शरण में जाने की प्रेरणा) मानकर लंका का राज्य प्राप्त किया था, इसी प्रकार से हमें भी यश–कीर्ति प्राप्त होगी।

इस परिप्रेक्ष्य में श्रीरामचरितमानस का सिद्ध मंत्र निम्नांकित है–

समर बिजय रघुबीर के चरित जे सुनहिं सुजान।
बिजय बिबेक बिभूति नित तिन्हहि देहिं भगवान।। (6/121क)

(5) दुष्कर कार्य की सिद्धि हेतुः

दुर्गम काज जगत के जेते। सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते।।

इस मंत्र के प्रभाव से असंभव कार्य भी संभव हो जाते हैं। श्रीहनुमानजी रुद्रावतार हैं और श्रीरामचरितमानस के अनुसार शिवजी भावी (होनहार) को मेट सकते हैं, **'भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी।। (1/70/5)'**

(6)सर्वसुख एवं निर्भयता प्राप्ति हेतुः

सब सुख लहै तुम्हारी सरना। तुम रच्छक काहू को डरना।।

सभी प्राणि सुख चाहते हैं और सुख न चला जाए, इस बात से डरते भी हैं। इस मंत्र से सभी प्रकार का सात्विक सुख प्राप्त होता है और फिर प्राणी निर्भय भी हो जाता है। श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र **'सीम कि चाँपि सकइ कोउ तासू। बड़ रखवार**

रमापति जासू।। (1/126/8)' में यही भाव है अर्थात् जब श्रीरामजी रक्षा करने वाले हैं तब कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता है और इससे निर्भयता का आभास होता है।

(7) भूत–प्रेत बाधा निवारणार्थः

भूत पिसाच निकट नहिं आवै। महाबीर जब नाम सुनावै।।

गले में माला (कंठी) के नाप का कलावा या काला रेशम का धागा लेकर उसके मध्य में सात गाँठें डालकर इस मंत्र से अभिमंत्रित कर लें। इस हेतु इस मंत्र को 108 बार पढ़कर धागे पर (प्रत्येक मंत्र के साथ एक फूंक) फूँक लगाते जाएँ और फिर इसे गंगाजल में धोकर तथा धूप–दीप दिखाकर जिसे प्रेत बाधा है उसे पहना दें। अभिमंत्रण शनिवार या मंगलवार को ब्रह्म मुहूर्त या सूर्योदय के समय करना चाहिए। मैंने स्वयं कई बार इसका प्रयोग किया है और आशातीत लाभ प्राप्त हुआ है। श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र **'प्रनवउँ पवन कुमार खल बन पावक ग्यान घन। जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।। (1/17)'** में भी यही भाव है।

(8) रोग दूर करने हेतुः

नासै रोग हरै सब पीरा। जपत निरंतर हनुमत बीरा।।

इस हेतु श्रीरामचरितमानस का सिद्ध मंत्र **'दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा (7/21/1)** है। इन मंत्रों के जप–स्मरण से सभी रोग दूर हो जाते हैं।

(9) मनोकामना सिद्ध हेतुः

और मनोरथ जो कोइ लावै। सोइ अमित जीवन फल पावै।

श्रीरामचरितमानस का इसके समकक्ष मंत्र है, **'सो तुम्ह जानहु अंतरजामी। पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी।। (1/149/7)'**। इनसे मनोकामना सिद्ध होती है।

(10) भगवद्भक्ति प्राप्त हेतुः

राम रसायन तुम्हरे पासा। सदा रहो रघुपति के दासा।।

इस संदर्भ में श्रीरामचरितमानस का सिद्ध मंत्र, **'नाथ भगति अति सुखदायनी। देहु कृपा करि अनपायनी।। (5/34/1)** है। भगवद्भक्ति प्राप्ति हेतु ये अमोघ मंत्र है।

(11) संकट–मोचन हेतुः

संकट कटै मिटै सब पीरा। जो सुमिरै हनुमत बलबीरा।।

यही भाव श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र, **'दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।। (5/27/4)'** में है।

इस परिप्रेक्ष्य में विचारणीय है कि श्रीरामचरितमानस और श्रीहनुमान चालीसा के सिद्ध मंत्रों में क्या अंतर है। वास्तव में दोनों ही समान रूप से हितकारी हैं। दोनों में से कौन अधिक श्रेष्ठ है, यह कहना कठिन है। श्रीरामचरितमानस के प्रारंभ में 'नाम वंदना' के संदर्भ में

गोस्वामीजी लिखते हैं, **'कहउँ नामु बड़ राम तें (1/23)**। इससे प्रेरणा लेकर कह सकते हैं कि श्रीहनुमान चालीसा के सिद्ध मंत्र अधिक प्रभावशाली हैं। इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि श्रीरामजी ने श्रीहनुमान को भरत के समान कहा है, **'तुम मम प्रिय भरतहिं सम भाई।। (श्रीहनुमान चालीसा)'** और भरतजी की महिमा का वर्णन करते हुए श्रीरामचरितमानस में लिखा है, **'भरत सरिस को राम सनेही। जगु जप राम रामु जप जेही।। (2/218/7)'**। उत्तरकाण्ड में गोस्वामी तुलसीदासजी इसकी पुष्टि करते हुए लिखते हैं,, **'मोरें मन प्रभु अस बिस्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा।। (7/120/16)।'**

इस संदर्भ में मैं अपना अनुभव लिख रहा हूँ। जब–जब मेरे जीवन में कोई संकट आया तब–तब मैंने श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्रों का सहारा लिया और आशातीत लाभ प्राप्त किया। वैसे तो श्रीरामचरितमानस का प्रत्येक शब्द मंत्रवत् है, तथापि **श्रीरामचरितमानस की वार्षिक स्मारिका में 'मानस'** के कुछ सिद्ध मंत्र प्रकाशित किए गए हैं। कई पाठकों से सूचना मिली है कि उन्होंने इनसे लाभ प्राप्त किया है। जब से मुझे श्रीहनुमान चालीसा के सिद्ध मंत्रों की जानकारी मिली है, तब से इन्हीं का सहारा लिया है। उपर्युक्त वर्णित क्रम संख्या 2, 6, 7, 8 एवं 11 पर लिखित मंत्रों का मैंने कई बार जप करके आशातीत लाभ प्राप्त किया है।

- दूसरों का भला करने वालों को कष्टों का सामना करना पड़ता है, क्योंकि फल देने वाले वृक्षों को ही हमेशा पत्थरों की मार सहनी पड़ती है, पर धर्मपूर्वक परोपकार करते रहना चाहिए। श्रीरामचरितमानस के अनुसार परोपकार के समान और दूसरा कोई धर्म नहीं है, यह स्वयं भगवान श्रीरामजी का कथन है–'पर हित सरिस धर्म नहिं भाई।' (7/41/1)
- दोनों बातें विश्वास की हैं, कोई ईश्वर के लिए सब कुछ छोड़ देता है तो कोई ईश्वर पर सब कुछ छोड़ देता है।
- जब एक दिन आपके कर्म ही आपसे मिलने आएँगे, उस दिन हैरान मत होना। अभी से सत्कर्म करना प्रारंभ कर दीजिए और फिर धीरे–धीरे अभ्यास द्वारा भगवत्कृपा से निष्काम कर्म होने लगेगा, यही परलोक सुधारक है।
- एक उम्र के बाद उस उम्र की बातें उम्र भर याद आती हैं, पर वह उम्र फिर उम्र भर नहीं आती!
- अपने शब्दों में जोश डालें, आवाज में नहीं, क्योंकि फूल बारिश से खिलते हैं, बाढ़ से नहीं!
- फैसले अपनी परिस्थिति देखकर लें, दुनिया को देखकर लिए गए फैसले हमेशा दुःख देते हैं!
- मुश्किल वक्त दुनिया का सबसे बड़ा जादूगर है, जो आपके चाहने वालों के चेहरे से नकाब हटा देता है।

मागी नाव न केवटु आना

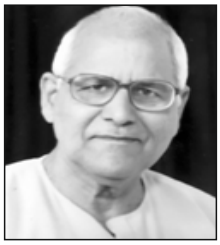

श्री राम जन्म सिंह, जिला–आजमगढ़ (उ.प्र.), फोनः 9839453851

भक्त का भगवान में अटूट विश्वास होता है, इसलिए वह भगवान के विधान को सर्वोपरि मानता है। श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय सात में भक्त चार प्रकार के बताए गए हैं। आर्ती, अर्थार्थी, जिज्ञासु और ज्ञानी। ज्ञानी भक्त होने का आशय है कि उसे यह ज्ञान हो जाता है कि सारा संसार भगवन्मय है और यह ज्ञान होने पर वह भगवान से निःस्वार्थ प्रेम करने लगता है और तब वह 'प्रेमी भक्त' बन जाता है। प्रेमी भक्त ही वास्तविक शरणागति को प्राप्त होता है। श्रीमद्भगवद्गीता में जो भक्तों की चार श्रेणियाँ वर्णित हैं, वे इस प्रकार से हैं –

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ।।
तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः।। (गीता 7/16–17)

अर्थात् भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि लोग मुझे चार प्रकार के लाभार्थ भजते हैं – दुःख निवारणार्थ, अर्थ प्राप्ति हेतु, मुझको जानने के प्रयोजन से (जिज्ञासु) और ज्ञानी। इन चारों में ज्ञानी मुझे अधिक प्रिय है, क्योंकि वह मुझे जानकर निःस्वार्थ भाव से मुझसे प्रेम करता है। श्रीरामचरितमानस में भी 'नाम वंदना' में यही भाव लक्षित होता है, यथा–

राम भगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारिउ अनघ उदारा।।
चहू चतुर कहुँ नाम अधारा। ग्यानी प्रभुहि बिसेषि पिआरा।।(1/22/6–7)

ज्ञानी भक्त का भगवान के प्रति निष्काम प्रेम होता है, इसीलिए वह भगवान को सबसे प्रिय होता है, क्योंकि भगवान को केवल प्रेम ही प्रिय है, यथा–

रामहि केवल प्रेमु पिआरा। जानि लेउ जो जाननिहारा।। (2/137/1)

केवट एक प्रेमी भक्त है, जो भगवान से कुछ नहीं माँगता है। वह तो केवल भगवान की सेवा करना चाहता है। भगवान ही भक्त से माँग रहे हैं। गंगा तट पर खड़े होकर भगवान श्रीराम ने केवट से कहा–केवट भैया! नौका लाना।

मागी नाव न केवटु आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना।। (2/100/3)

बड़ा ही अद्भुत दृश्य है कि जिन चरणों से गंगाजी का उद्गम हुआ, उसी को पार करने के लिए श्रीहरि स्वयं नाव माँग रहे हैं–

तुलसी जेहि के पद पंकज तें प्रगटीं तटिनी, जो हरै अघ गाढ़े।

ते प्रभु या सरिता तरिबे कहुं मांगत नाव करारे है ठाढ़े।।

(कवितावली/2–5)

श्रीराम ने केवट से नाव माँगी, लेकिन केवट ने मना कर दिया। उसने कहा–भगवन्! मैं आपके छिपे रहस्य को जानता हूँ। आपके पैर में कोई दिव्य जड़ी है, जो जड़ को चेतन बना देती है। गौतम मुनि की पत्नी अहिल्या, जो शिला रूप थी, आपके चरण छूते ही सुन्दर स्त्री हो गयी। हे नाथ! मेरी नाव तो काठ की है और मेरी नाव यदि स्त्री बन गयी तो न तो मैं आपको पार उतार पाऊँगा और न अपनी पत्नी को समझा पाऊँगा। मेरे परिवार में कलह उत्पन्न हो जाएगा, अतः आपके पैर धोकर ही, मैं आपको नाव में बैठाऊँगा। यदि आप पैर नहीं धुलवाना चाहते हैं तो –

एहि घाटतें थोरिक दूरि अहै, कटि लौ जलु थाह देखाइहौं जू।
परसें पग धूरि तरै तरनी, घरनी घर क्यों समुझाइहौं जू।।

(कवितावली 2–6)

हे नाथ! मेरे पास नाव के अलावा जीविकोपार्जन का कोई अन्य साधन नहीं है। मैं अत्यन्त निर्धन, तुच्छ, दीन, हीन हूँ। दूसरी नाव भी नहीं खरीद सकता। इसलिए चरण धोने का हठ कर रहा हूँ। मैं उतराई भी नहीं लूँगा।

पद कमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं।
मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साची कहौं।। (2/100/छंद)

ऐसा सुनकर लक्ष्मणजी की भौंहें टेढ़ी हो गयीं और उन्हें क्रोध आया कि लोग अपने बाप की सौगंध खाते हैं, पर केवट हमारे पिताश्री तक पहुँच गया। तब केवट ने मन ही मन लक्ष्मण (शेषनाग के अवतार) से कहा–हे नाथ! पिछले जन्म में जब मैं कच्छप था, आप शेषनाग के रूप में विराजमान थे, तब मैंने क्षीर सागर में प्रभु के चरण–स्पर्श करने की बार–बार कोशिश की, लेकिन आपने मुझे अपनी फुफकार से दूर हटा दिया। हे वीरवर! (अब वह वाणी द्वारा अपना मन्तव्य व्यक्त करता है) आप भले ही मुझे तीर मार दें, लेकिन मैं पैर पखारे बिना पार नहीं उतारूँगा। यह सुनकर श्रीरामजी मुसकुराए –

सुनि केवट के बैन प्रेम लपेटे अटपटे।
बिहसे करुनाऐन चितइ जानकी लखन तन।। (2/100)

केवट की इस प्रकार अटपटी रसमय वाणी सुनकर श्रीराम ने कहा– ''भाई धोलो पैर।'' भगवान के वचन सुनकर केवट ने अपने पूरे परिवार को बुलाया, वे सब भगवान को घेर कर बैठ गए।

केवट राम रजायसु पावा। पानि कठवता भरि लेइ आवा।।(2/101/6)

केवट की चतुराई देखें, वह जल नहीं पानी लाया, जल सतत प्रवाहित रहता है, जैसे गंगा जल, पर पानी बंधों में रुका रहता है। वह सोचता है कि जैसे पानी तालाबों में स्थिर रहता है, ऐसे ही मेरा प्रेम भगवान के चरणों में स्थिर रहे। वह पाद–प्रक्षालन करने लगा, प्रभु का एक पैर कठौते में रखकर केवट धोने लगा, तो श्रीराम को एक पैर जमीन पर रखकर

खड़ा होना पड़ा। श्रीराम ने कहा, केवट जल्दी करो, एक पैर पर कैसे खड़ा रहूँ, अन्य कोई सहारा नहीं है, तब चतुर केवट बोला प्रभो! आपको सहारा चाहिए तो अपना हाथ मेरे सिर पर रखकर खड़े हो जाइए और तब प्रभु ने अपना एक हाथ केवट के सिर पर रख दिया। यह दृश्य देख देवता पुष्प वर्षा करने लगे। साथ ही केवट के भाग्य की सराहना करने लगे।

बरषि सुमन सुर सकल सिहाहीं। एहि सम पुन्यपुंज कोउ नाहीं।। (2/101/8)

चरण धोकर केवट ने चरणोदक का परिवार सहित पान किया, फिर अपने पितरों के उद्धार की प्रार्थना की। इसके पश्चात् वह श्रीराम, लक्ष्मण, सीताजी और निषादराज को नाव पर चढ़ाकर गंगा पार ले गया। श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लेइ पार।। (2/101)

केवट ने नाव से उतरकर प्रभु के चरणों में साष्टांग प्रणाम किया। यह देख लक्ष्मणजी ने मन ही मन कहा कि केवट उधर तो तुम अकड़ रहे थे और अब पैर पकड़ रहे हो। केवट भी लक्ष्मणजी का मनोभाव समझकर मन ही मन कहता है –''हे शेषनाग! यह तो घाट–घाट का अन्तर है।''

केवट उतरि दंडवत कीन्हा। प्रभुहि सकुच एहि नहिं कछु दीन्हा। (2/102/2)

श्रीराम केवट को उतराई देना चाहते हैं, तब अपने प्रियतम का मनोभाव जानकर सीताजी ने अपनी रत्न जटित मुद्रिका, जिस पर राम नाम लिखा था, उतारकर श्रीराम की ओर बढ़ा दी। पुरुषोत्तम ने अंगूठी लेकर केवट से कहा, भैया! नाव की उतराई ले लो। तब केवट ने चरण पकड़ लिए और बोला–हे नाथ! अब मुझे कुछ नहीं चाहिए, क्योंकि जब इच्छा थी तो मिला नहीं और अब मिल रहा है तो इच्छा नहीं है। अब तो मेरा विचार ही बदल गया। अब केवट कहता है–

नाथ आजु मैं काह न पावा। मिटे दोष दुख दारिद दावा।। (2/102/5)

केवट कहता है, आपने मुझसे नाव मांगी थी तो मैंने सोचा जो मुझसे माँग रहा है, उससे क्या लेना? हे नाथ! आपने मुझसे माँगकर मुझे बड़ा बना दिया, अब बड़ा ही रहने दो, कुछ देकर मुझे अब छोटा न बनाओ। बस इच्छा है कि सदैव आप की कृपा की वर्षा मुझ पर होती रहे। आपने चरण हमारी नैया में रखकर हमारी नैया पार लगा दी। हे राघव! हे कौसलेन्द्र! वैसे भी मैं आपका जाति भाई हूँ, तो आपसे क्या लेना, क्योंकि मेरा काम पार करना है और आपका भी काम पार लगाना है।

मैं गंगा तट का केवट हूँ, तुम भवसागर के मांझी हो।।

केवट की भाषा बड़ी घुमावदार है, वह कहता है कि अब मैं भवसागर पार कराने वाले को पार कराने वाला बन गया। दोनों पार उतारने वाले हैं, पर दोनों में एक अंतर है कि जिसको आप पार उतारते हैं वह आवागमन से मुक्त हो जाता है, लेकिन मैंने आपको पार उतारा तो आप मुझे आवागमन से मुक्त कर देंगे।

केवट कहता है–हे नाथ! मुझसे पहले आपके चरण जनकजी ने धोये थे। सीता चरण धोने वाले की पुत्री हैं। मैं भी चरण धोने वाला हूँ। यदि मैं अंगूठी को लेता हूँ, तो मैं कैसा चरण धोने वाला हूँ कि उस बेटी से अंगूठी को उतराई में लूँ। श्रीराम, सीता और लक्ष्मण ने बहुत आग्रह किया, पर केवट ने कुछ लिया ही नहीं, तब भगवान ने उसे विमल भक्ति देकर विदा किया।

बहुत कीन्ह प्रभु लखन सियँ नहिं कछु केवटु लेइ।
बिदा कीन्ह करुनायतन भगति बिमल बरु देइ।। (2/102)

रामराज्य का प्रथम नागरिक केवट है। रामराज्य कहाँ है? **'पिताँ दीन्ह मोहि कानन राजू' (2/53/6)**। गंगा के उस पार राम खड़े हैं, वहाँ से शबरी आश्रम तक का क्षेत्र रामराज्य है, आगे सुग्रीव का राज्य है। रामराज्य में **'नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना।' (7/21/6)**। अभाव, जन्म दरिद्रता, मानसिक दरिद्रता, देन्यता मन की वृत्ति है। दुख के संदर्भ में काकभुशुण्डि–गरुड़ संवाद में गरुड़जी ने सात प्रश्न किए, उसमें एक है संसार में सबसे बड़ा दुख क्या है? इसे दरिद्रता को बताया गया है, **'नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं' (7/121/13)**। रामराज्य में लोभ–भय मिट जाता है, तभी तो केवट ने गद्‌गद कंठ से कहा,

'नाथ आजु मैं काह न पावा।' (2/102/5)।

सुमन्त दशरथ राज्य के प्रतिनिधि थे, अपने राज्य की सीमा तक श्रीराम को पहुँचा कर लौट गए। यहीं पर श्रीराम ने बल्कल वस्त्र एवं सिर पर जटा मुकुट धारण किए। भगवान जब चौदह वर्ष बाद वापस आए, तो केवट से मिलन हुआ। श्रीराम ने केवट से उसकी इच्छा पूछी, तो केवट ने कहा–प्रभो! मुझे अपने साथ अयोध्या ले चलो। श्रीराम ने केवट को विमान पर आरूढ़ कर लिया और अयोध्या ले गए। श्रीराम के राज्याभिषेक में केवट भी शामिल हुआ।

कुछ समय बाद जब श्रीराम केवट को विदा करने लगे, तो केवट श्रीराम की ओर देखकर बोला–प्रभु! आज तो बात उलट गयी। मैंने तो सुना था कि आपके धाम में जो आ जाता है, वह लौटता नहीं है, पर आप लौटा क्यों रहे हैं?

भक्तराज केवट का प्रसंग बड़ा अनोखा है। केवट को अहसास हो गया कि राम का नाम–रूप कल्पतरु की भाँति चारों फल देने वाला है, इसलिए केवट को प्रभु की कृपा का उत्कृष्ट प्रसाद प्राप्त हुआ।

इस प्रकार केवट सब प्रकार से धन्य हो गया। केवट अपने आप में अनोखा, विचित्र, अद्‌भुत, बेजोड़, आकर्षक, सखा व प्रेमी भक्त है। तभी तो केवट को प्रभु–कृपा का विमल भक्ति स्वरूप उत्कृष्ट प्रसाद प्राप्त हुआ।

मेरे राम

श्री राम किंकर सी–55 सैक्टर–47, नोएडा फोनः 9899460077

आनंद कंद पुरुषोत्तम है वह,
सुख–निधान सर्वोत्तम है वह।
सुमिरन से भाव उमड़ते रहते,
राम नर नहीं नरोत्तम है वह।

त्रेता में जब आप अवतार लिए थे
तीनों माताओं के रामलला थे।
दशरथ नंदन बन प्राण तुल्य प्रिय,
तीनों भ्राताओं के पूज्य सखा थे।

मर्यादा को सर्वोपरि रख कर,
त्याग तपस्या न्याय के धारक।
विनय वीरता शौर्य पराक्रमी हो,
अन्याय नष्ट, शरणागत पालक।

आचरण और व्यवहार का अन्तर
कभी नहीं था श्रीराम के अंदर।
मेरे राम हैं नित घट–घट वासी,
आधार जगत के बने युगान्तर।

राम को याद करना हमेशा मगर,
राम के आचरण सी रहे हर डगर।
अगर नाम लेकर अनुसरण से बचे,
राम के मन में कैसे कर सकोगे बसर।

रामराज्य

सरल शास्त्री, नोएडा, फोनः 9311384212

रामराज्य में सभी सुखी थे
चारों ओर परम सुख था।
सुंदर स्वस्थ सुडौल सबल सब
कहीं किसी को दुःख न था।।1।।

सभी सदाचारी नीरोगी
किसी व्यक्ति को रोग न था।
पंडित विज्ञ कृतज्ञ गुणी सब
मुदित, किसी को शोक न था।।2।।

कोई व्यक्ति न मूर्ख–दीन था
बुद्धिमान धनवान सभी।
कोई व्यक्ति न दुबला–पतला
हृष्ट–पुष्ट बलवान सभी।।3।।

रखता पद न कुपथ पर कोई
सभी सुपथ पर चलते थे।
झूठ कपट छल भाव न थे, मन
गंगाजल से रखते थे।।4।।

दैहिक दैविक भौतिक ताप न
सब सुख–सागर में रहते।
न था किसी को द्वेष किसी से
प्रेम परस्पर सब करते ।।5।।

आदर सेवा–भाव बड़ों प्रति
सब के सब उपकारी थे।
मनसा वाचा और कर्मणा
सभी सरल हितकारी थे।।6।।

कोई नहीं भटकता मृग सा
भौतिक सुख की चाह लिए।
लुभा न पाते उन्हें प्रलोभन
जगमग परहित–त्याग दिए।।7।।

गगन–सितारों को पाने को
उमड़ाता मन भाव न था।
धर्मधुरंधर पुण्यवान सब
कोई करता पाप न था।।8।।

जन–मानस में थी न विषमता
किसी व्यक्ति से वैर न था।
सकल धरा परिवार एक ही
कोई प्राणी गैर न था।।9।।

रूप रंग कद भले विषमता
पर मन समता भाव भरा।
निज वर्णाश्रम–धर्म मार्ग पर
चलने का मन चाव भरा।।10।।

कर्म–कुशल कर्तव्यनिष्ठ सब
निज कर्तव्य निभाते थे।
रामकथा पढ़ते–सुनते सब
व्यक्ति परम सुख पाते थे।।11।।

'सरल' नारियाँ पति–अनुरागिनि
सती सुशीला सुखदा थीं।
श्रद्धा ममता समता करुणा
क्षेम क्षमा की प्रतिमा थीं।।12।।

अचलमना अडिगा सत्पथिका
मधुर भाषिणी भामिनियाँ।
लाजवती कुलवंती सरला
जीवन–रसदा कामिनियाँ।।13।।
रहतीं साथ सदा विपदा में
छाया बनकर प्रियतम की।
ठुकराने पर भी मन–माला
फेरा करतीं प्रियतम की।।14।।

पशु–पक्षी तक वैर–त्याग कर
प्रेम भाव से रहते थे।
सिंह और मृग एक घाट पर
आकर पानी पीते थे।।15।।

बहती थी आकूल त्रिवेणी
ज्ञान भक्ति सद्कर्मों की।
मर्यादा में रह फहराते
धर्म–ध्वजा कर्तव्यों की।।16।।

सबके पावन मन–मन्दिर में
सीता–राम वसा करते।
आठों याम अयोध्यावासी
सीता–राम जपा करते।।17।।

राजा राम प्रजा से अपनी
सुत सम प्रेम किया करते।
स्वयं विरह–विष पीकर भी वे
प्रजा–मनोरंजन करते।।18।।

'सरल' राम सा राजा पहले
हुआ न था, होगा न कभी।
रामराज्य सा राज्य धरा पर
हुआ न था, होगा न कभी।।19।।

लाखों वर्षों बाद आज भी
रामराज्य के गुण गाते।
रामराज्य को फिर से लाने
दिन में स्वप्न सँजो पाते।।20।।

यदि तुम सुख से रहना चाहो
रामराज्य को मन लाओ।
भक्ति भाव से रामकथा पढ़
सिया–राम के गुण गाओ।।21।।

उद्‌बोधन

जन देखा करते मधुर स्वप्न हर निशि हो जगमग हारों सी।
क्षणभंगुर मानव जीवन की इच्छायें अनगिन तारों सी।।
किसके सपने साकार हुये, किसकी अभिलाषा मिट पायी।
हरि–चाहत के अतिरिक्त यहाँ किसकी मनचाही हो पायी।।

यदि जीवन व्यथा–कथा, न किसी को बतलाओ।
पोंछो औरों के अश्रु, स्वयं के पी जाओ।।
यदि जीवन है संघर्ष हर्ष से नृत्य करो।
रे मनुज, मृत्यु को जीत अमरता प्राप्त करो।।

समरस न अरे मानव–जीवन।
यह सरस–विरस सुख–दुख संगम।।
उत्थान–पतन मधु–कटु रसमय।
यह मिलन निराला जड़–जंगम।।

विकलांगता (दिव्यांगता) ईश्वरीय अलौकिक संरचना

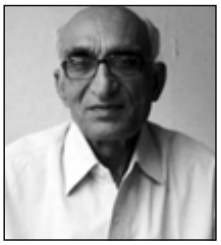

पं. राधाकृष्ण पाठक 'अतीत', भांडेर, दतिया (म.प्र.), फोनः 8770436182

अखिल ब्रह्माण्डनायक मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम की बाल–लीला देखकर काकभुशुण्डिजी मोहित हो गए और जब वे मायामुक्त हुए तथा वरदान में केवल अविरल भक्ति की याचना की, तब श्रीरामजी ने उन्हें अपना सिद्धान्त सुनाते हुए कहा कि सभी जीव मेरे द्वारा ही उत्पन्न किए गए हैं, अतः मुझे सभी प्रिय हैं, किंतु उनमें मनुष्य सबसे अधिक प्रिय हैं, श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

निज सिद्धांत सुनावउँ तोही। सुनु मन धरु सब तजि भजु मोही।।
मम माया संभव संसारा। जीव चराचर बिबिध प्रकारा।।
सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सब ते अधिक मनुज मोहि भाए।।
(7/86/2–4)

विचारणीय है कि यदि किसी मनुष्य में किसी अंग विशेष के कारण विकलांगता है तो वह भी तो भगवान का प्रिय हुआ, क्योंकि यह विकलांगता भी ईश्वरीय संरचना है। यह भी अधिकांशतया पाया गया है कि ऐसे मानवों में कोई न कोई विशिष्ट गुण अवश्य होता है, अतः हमें उस ईश्वरीय संरचना का सम्मान करना चाहिए और जहाँ तक संभव हो उनकी सेवा में तत्पर रहना चाहिए। कई स्वयं सेवी संस्थाएँ इस पुनीत कार्य में संलग्न हैं। हमें उन्हें आर्थिक सहयोग प्रदान करना चाहिए। यह भी भक्ति का एक स्वरूप है, क्योंकि सभी जीवधारी ईश्वर का ही अंश हैं, यथा–

ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी। (7/117/2)

ब्रह्म की अलौकिक करनी के संदर्भ में श्रीरामचरितमानस में इस प्रकार वर्णन किया गया है–

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु करम करइ बिधि नाना।।
आनन रहित सकल रस भोगी। बिनु बानी बकता बड़ जोगी।।
तन बिनु परस नयन बिनु देखा। ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा।।
असि सब भाँति अलौकिक करनी। महिमा जासु जाइ नहिं बरनी।।
(1/118/5–8)

विकलांगता के संदर्भ में भी ईश्वरीय कृपा से, व्यक्ति विशेष के प्रयास (अभ्यास) तथा आधुनिक उपकरणों की सहायता से व्यक्ति पैर न होने (कट जाने पर) चल सकता है, श्रवण

शक्ति न होने पर भी कान में मशीन लगाकर सुन सकता है, नेत्र कमजोर होने पर चश्मा की मदद से पढ़ सकता है और यहाँ तक कि नेत्र विहीन होने पर भी आधुनिक युग में विकसित अंधलिपि के सहारे पढ़ सकता है। चित्रकूट धाम के संत श्रीरामभद्राचार्यजी इस तथ्य के प्रज्ज्वलित उदाहरण हैं, जो जन्मान्ध होते हुए भी कई भाषाओं के ज्ञाता हैं और सनातन धर्म शास्त्रों का उन्होंने गहन अध्ययन किया है। यह सब ईश्वरीय कृपा से संभव है, अतः हमें ऐसे लोगों की सेवा में, अपना कर्तव्य समझकर सदैव तत्पर रहना चाहिए। इसी परिप्रेक्ष्य में निम्नलिखित कुछ विचार प्रस्तुत हैं।

विकलांग विषय का विमर्श, वांग्यमय साहित्य के अध्ययन और चिंतन–मनन का आध्यात्मिक स्तम्भ, आधार है। आध्यात्मिक आधार ही मानव–जीवन में मानवीय गुणों एवं मानवीयता की दिशा निर्धारित करता है। सेवा भाव यहीं से उत्पन्न होता है। हम अपने शास्त्रों का अध्ययन तो करते हैं, पर हमारा चिंतन–मनन उस दिशा में कम ही जाता है, जो ईश्वरीय स्वरूप का प्रत्यक्षीकरण, मानवीय जीवन में पग–पग पर दिखाई देता है।

यदि विचार करें तो पाते हैं कि ईश्वर की संरचना का स्वरूप पूर्ण है एवं दोष रहित है। सांसारिक एकरूपता को देखते हुए भेद दृष्टिगोचर होता है। एक इंद्री जिसे हम कार्य से जोड़कर देखने के आदी हैं, वही वह सत्ता अपनी विशिष्ट संरचना के द्वारा अन्य इंद्रियों से वह कार्य सम्पन्न करवाने में सक्षम हो जाती है, जो हमारी कल्पना से परे है। स्वीकारने योग्य यही सच है।

वेद जो श्रुति है, सनातन है, अपौरुषेय है। वेद सम्मत ईश्वर का यही निरूपण है। जीव की रचना, संरचना प्राकृतिक रचना है और यह प्रकृति भी ईश्वर का स्वरूप है। प्रथमतः हमें यदि ईश्वर के इस विशिष्ट रूप में दृढ़ विश्वास है, तब कण–कण में ईश्वर का वास, इस कथन की अवधारणा, विकलांग व्यक्ति के प्रति संवेदना, उसकी सेवा, ईश्वर की सेवा बन जाती है। मानवीय गुण जो उस परम सत्ता का मूल मंत्र है, बिना जपे ही फल की प्राप्ति होने लगेगी और तब आप अपने को ईश्वर के समीप अनुभव करेंगे। हमें रास्ता इसी प्रकार के साहित्य साधनों से प्राप्त हो सकता है। चिंतन–मनन प्रकाश का काम करता है और फिर रास्ते प्रकाशित होने लगते हैं, केवल पढ़कर नहीं, पढ़ने के साथ–साथ विषय विमर्श एवं अनुकरण की भी आवश्यकता है।

विषय का विमर्श संदर्भ तब ही बनेगा, जब आपका चिंतन, मनन, पढ़े हुए विमर्श की विचारधारा से अलग हो और यह तभी संभव होगा, जब आप सतत आती हुई विचारधारा को कलमबन्द करने के आदी हो जाएँगे। विचारों की धारा का प्रवाह अविरल है, आप कब और कहाँ डुबकी लगाते हैं, यह आपकी लेखनी की सक्रियता पर निर्भर करता है। सत्ता का संदेश

निरंतर सतत प्रवाहित हो रहा है, प्रसारित हो रहा है, आपकी पात्रता है कि आप उसके कब ग्राहक बनते हैं। जब तक भाव जागरण नहीं होगा, सेवा और समर्पण के लिए हाथ कैसे उठाएँगे? यहाँ यह विचारणीय है कि यह सेवा और समर्पण का भाव किस तरह जाग्रत हो, इसके लिए ही ऐसी विचार गोष्ठियाँ, शोध–पत्रों का पठन–पाठन, संबंधित विषय का साहित्य जन–जन तक पहुँचे और चिंतन–मनन का वातावरण तैयार हो। आज इसके लिए ही विश्वविद्यालयों, शिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में इन अवधारणाओं को लाने का प्रयास भी आवश्यक है। संपूर्ण मानव जाति में विकलांगों के प्रति सम्मान, सद–व्यवहार, उत्थान की सोच के लिए हमें उन वृक्षों की डालियों से सीखना है, जो किसी भी सीमा तक फैली क्यों न हों, किंतु उन पर हरियाली फूल, फलों में, अन्य शाखाओं से समानता, एकरूपता ही देखने को मिलती है। जब मूल एक है, फिर शाखाएँ अलग–अलग होते हुए भी, उसी वृक्ष का अभिन्न अंग हैं।

प्राकृतिक विकलांगता को हमने एक विशेष वर्ग में बाँट दिया है, लेकिन क्या घटना, दुर्घटना की वजह से मिली विकलांगता उसी श्रेणी में नहीं आती। साथ ही साथ आज मानसिक विकलांगता के शिकार व्यक्तियों की संख्या भी कम नहीं।

ईश्वर की रचना, संरचना दोषपूर्ण नहीं है, यह एक तरह से उसके विभिन्न स्वरूपों का दर्शन भी है। यदि हम उस जगन्नियंता को स्वीकारते हैं, तब हमें उसकी रचना–संरचना को भी स्वीकारना चाहिए। आज साहित्यिक मंचों एवं सेवा संस्थानों ने विकलांग समाज को एक सम्मान और उनके प्रति दया, प्रेम तथा अन्य सेवा के कार्यों के लिए सामाजिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी दृष्टिकोणों के बदलाव का कार्य किया है। इससे विगत वर्षों में इस दिशा में बहुत अधिक सेवा के कार्य किए जा रहे हैं। निश्चित ही उक्त प्रयास मानव सेवा के रूप में ईश्वर की सेवा ही है। हमारी सर्वकल्याण की भावना रही है, यथा–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे संतु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यंतु मा कश्चित् दुःख भाग्भवेत्।। **(ऋग्वेद वृहदारण्य उपनिषद)**

सब सुखी हों, सब नीरोगी रहें, सब अच्छी घटनाओं को देखने वाले अर्थात् साक्षी रहें और कभी किसी को दुःख का भागी न बनना पड़े, यही लोक–क्षेम मंत्र है। यह हिन्दू धर्म दर्शन की विचारधारा को प्रदर्शित करता है। यदि हम इस तरह के समाज का निर्माण करें, अपनी कार्यशैली, विचारधारा को जीवन में अपनाएँगे तो फिर कहाँ देरी है कि वसुधैव कुटुंबकम् का रास्ता प्रशस्त न हो। यह उपनिषद का वाक्य है, जो आज विश्व बंधुत्व के लिए आवश्यक है। इसी से मानव और मानव समाज जीवित रहेगा अन्यथा विनाश के विशाल भंडार पर खड़ा समाज, राग, द्वेष, ईर्ष्या से जल रहा है। एक विनाश की चिंगारी समस्त

मानव सभ्यता के विनाश का कारण बन विलुप्त हो सकती है, लेकिन हिन्दू धर्म–दर्शन के विचार, विचारधारा, मानव एवं मानव–समाज को इस धरा पर कायम रखने के लिए महामंत्र हैं। विकास धारा की यह गंगा जब जन–जन के तन–मन में प्रवाहित होगी, तभी कल्याण संभव है। यह विचारधारा हमारे वांग्यमय साहित्य की देन है, जिसे उजागर करने का काम होना चाहिए।

जब हम किसी विषय का विमर्श करते हैं, तब उस विषय के विमर्श की विभिन्न धाराओं को उजागर होता हुआ देखते हैं, क्योंकि विचार–शक्ति अपार है। यह गुण ईश्वर प्रदत्त है। केवल कुछ उपाधियों की विधाओं से उत्पन्न सोच या पढ़कर भी चिंतन की धाराएँ तो बनती हैं, लेकिन सीमित और उसी बँधी बँधाई पद्धति के रास्ते जाती हुई दिखायी देती हैं। स्वतंत्र विचार जो स्वतः प्रकट होते हैं, उनके अलावा कई दिशाओं में विकलांगों के लिए कार्य करना भी सेवा और उत्थान का रास्ता बनेगा, ऐसा मेरा मानना है। आज सोच समझ की दिशा निश्चित रूप से आध्यात्मिक विचारधारा के प्रभाव से प्रभावित, सेवा, संस्कार पैदा कर रही है। यही कारण है कि आज के साहित्यिक मंच, समाज, सामाजिक संस्थाएँ बढ़–चढ़कर सामने आ रही हैं। यही कारण है कि आज राजतंत्र भी इस दिशा में जाग्रत हुआ है।

सदैव चिंतन जब लोक–कल्याण के लिए होगा, स्वः कल्याण तथा ईश्वरीय सेवा जिसके लिए मानव जन्म मिला है, स्वतः होता रहेगा। आवश्यकता इस बात की है कि आने वाली पीढ़ी, जिनके कंधों पर सामाजिक दायित्व रहेगा, वहाँ तक इस सोच–समझ की विभिन्न रेखाओं को पहचानना आवश्यक है। इसके लिए समस्त उपक्रमों को एकजुट होकर सामूहिक प्रयास करना आवश्यक है।

संस्कार के निर्माण का प्रथम पायदान घर, दूसरी शिक्षा और तीसरी समाज की गतिविधियाँ हैं, जिनमें वह प्राणी रहता है। इसमें प्रथम घर के वातावरण एवं शिक्षा के प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा के स्तर तक पाठ्यक्रमों में व्यावहारिक–शिक्षा के पठन–पाठन के प्रयासों तथा प्रचार–प्रसार पर भी ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है। इसी विधारधारा को लेकर जब नई पीढ़ी अपने कार्यक्षेत्र में उतरेगी, तब उसकी गतिविधियाँ स्वतः ही लोक–कल्याण की भावना से प्रेरित होंगी। प्रयत्नों की सफलता एक दिन में नहीं होती, लेकिन प्रारंभ से उसमें दिन–प्रतिदिन गति देखी गई है। एक पीढ़ी प्रयत्न करती है, बाद में निश्चित ही आने वालों को उसका लाभ मिलना सुनिश्चित है। सेवा समर्पण का विषय है। विकलांग–सेवा किसी लाभ का कार्य नहीं, बल्कि परमार्थ का कार्य है, यह समझना होगा।

वस्तुतः अच्छा समाज वह नहीं है, जिसके अधिकांश सदस्य अच्छे हों, बल्कि वह है, जो अपने तिरस्कृत (विकलांग जैसे) सदस्यों का साथ प्रेम से अच्छा बनाने में सतत प्रयत्नशील

हैं (डब्ल्यू. एच. आडेक, एक पश्चिमी विचारक)। वास्तव में मनुष्य वही है जो परोपकार एवं समाज सेवा के अथक प्रयासों में लगा रहता है। आज के समय में जीवन की आपाधापी में अपनी समस्याओं की प्राथमिकता को पूर्ण करते हुए इस सेवा–कार्य के लिए समय देना जीवन में संस्कारों की ही देन है। इसीलिए आज संस्कारित समाज की परम आवश्यकता है। प्रत्येक क्षेत्र में संस्कारित व्यक्ति एक रचनात्मक कार्य करता ही है। जो व्यक्ति एवं सामाजिक संस्थाएँ इस कार्य में लगी हुई हैं, उनका परिवार और समाज निश्चित ही संस्कारित होगा और परिणामस्वरूप खुशहाल होगा। प्रकृति का गुण है कि वह सेवा–समर्पण का फल प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इतना देती है कि आपकी आवश्यकता की तो पूर्ति होती ही है, साथ ही साथ लोक–कल्याण के लिए आवश्यक साधन एवं धन–दौलत, पर्याप्त मात्रा में बनी रहती है, क्योंकि प्रकृति भी ईश्वर का स्वरूप है और इस धरा पर यह जिम्मेदारी प्रकृति को प्रदत्त है। निःशुल्क कृपा उसका गुण है, लेकिन मानव अहंकार वश उसी निःशुल्क प्रदत्त वस्तुओं से अपनी जीविका का आधार बनाते हुए व्यापार करने लगता है और फिर कहीं न कहीं उसको बाद में कई गुना उसका भुगतान भी करना पड़ता है।

हमारे पास सीमित समय है, अतः एक–एक पल, क्षण सेवा–कार्य में लग जाए, यही मानव–समाज की सच्ची सेवा है। तन–मन और धन से अपनी क्षमता के अनुसार किए गए कार्य ही सामाजिक उत्थान के आदर्श बनते हैं और समझ लीजिए कि यदि आपके द्वारा यह सेवा हो रही है, तो यह ईश्वर की कृपा ही है, जो आपको निमित्त बनाया गया है। इस मानव सेवा में जो आनंद मिलता है वह आनंद कहीं से खरीदा नहीं जा सकता, यह कृपा के बिना मिलता भी नहीं। सबसे बड़ा कार्य जो इस सेवा को गति दे रहा है, वह इन कार्यों की निरंतरता है। कहते हैं आत्मा की आवाज जब आशीर्वाद बन जाती है, अप्रत्यक्ष रूप से ईश्वर से जुड़ने का रास्ता साफ करती है, क्योंकि जीव ईश का ही तो अंश है, तो फिर उसी का आशीर्वाद हुआ।

अंत में इसी निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि इस विषय के विमर्श पर चिंतन का कोई अंतिम पड़ाव नहीं है। इस प्रकार की विचारधारायें निरंतर चारों ओर चल रही हैं, अच्छा हो कोई विचार हमारे इस मार्ग को प्रकाशित कर, एक किरण से ईश्वरीय इस संरचना (विकलांगता) के प्रति प्रेम, सद्भाव, सेवा के रास्ते की दिशा दिखा सके। साहित्य दिशा प्रदान करता है और करता आया है। निश्चित रूप से सामाजिक चेतना ही अन्तिम उद्देश्य है, जो कि भविष्य में स्वीकारोक्ति की दिशा प्रदान करेगी। इस दिशा में किए जा रहे कार्य सराहनीय हैं तथा इस कार्य में प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से निःस्वार्थ सेवाभाव से कार्य करने वाले व्यक्ति सराहना के पात्र हैं।

सत्यासत्य विवेचिका : ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या

पं0 रामनरेश तिवारी 'पिण्डीवासा', भरद्वाजपुरम, प्रयागराज–211003 फोनः 09415443173

इस अखिल सृष्टि में सत्यासत्य विवेचन क्रम में क्या सत्य है क्या असत्य अथवा मिथ्या है, इस जिज्ञासा की शान्ति हेतु भगवान शंकराचार्य स्वयं व्याख्या करते हुए कहते हैं कि इस सृष्टि में जो एकरूप में निश्चित रहकर विकृति रहित है अर्थात् जिसमें कोई परिवर्तन न हो वही सत्य है, अर्थात् जिस वस्तु में शाश्वता हो, परिवर्तन रहित हो, अविनश्वर हो, वही सत्य है। इस गुण विशेष से इतर सब कुछ असत्य अर्थात् मिथ्या है। इस दृष्टि से हम पुष्टरूपेण यह निष्कर्ष प्राप्त करते हैं कि यह सम्पूर्ण संसार असत्य है, क्योंकि यह जगत परिवर्तनशील है। इसमें विकृतियाँ आती हैं, समयानुसार इसमें परिवर्तन सम्भव प्रतीत होता है और ब्रह्म शाश्वत, अपरिवर्तनशील गुण विशेष के कारण सत्य कहा जाता है, क्योंकि इसकी अविनश्वरता के फलस्वरूप अक्षुण्ण रूप की विद्यमानता एवं क्षरण शक्ति का सर्वथा अभाव विहित है।

वेदान्त दर्शन में ब्रह्म को निर्विकल्प, निरुपाधि और निर्विकार कहा गया है। वह ब्रह्म दो रूपों में अभिहित किया गया है–निर्गुण और सगुण। निर्गुण ब्रह्म परमार्थ की दृष्टि से सच्चिदानन्द स्वरूप में विद्यमान रहता है। वही संसार का प्रकाशक है। उसकी ही सत्ता के कारण सूर्य चन्द्रादि प्रकाशयुक्त हैं तथा उसी निर्गुण ब्रह्म का सगुण रूप, नाम, रूप, लीला, धाम आदि रूपों में अन्यान्य देवताओं के रूप में अस्तित्व ग्रहण करता है अर्थात् विविध रूप धारण कर अवतार लेता है। इस तथ्य को कठोपनिषद् इस भाँति व्यक्त करता है–

एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा रूपं रूपं प्रतिरूपोबहिश्च।। (कठो0 2/5/10)
एकं रूपं बहुधा यः करोति।। (कठो0 2/5/12)

श्रीरामचरितमानस में ब्रह्म का स्वरूप इस प्रकार से वर्णित है –

सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा।।
अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई।।(1/116/1–2)

श्रीरामजी निर्गुण ब्रह्म के सगुण रूप हैं और उन्हीं के तेज से सभी प्रकाशित हो रहे हैं–

विषय करन सुर जीव समेता। सकल एक तें एक सचेता।।
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।।(1/117/5–6)

वही ब्रह्म समष्टि रूप से ईश्वर और व्यष्टि रूप में 'प्राज्ञ' अथवा जीव कहलाता है। उसी के ज्ञान से सब कुछ विज्ञापित होता है। वही संसार में व्याप्त अर्थात् ओतप्रोत है। ब्रह्म

के एकत्व ज्ञान में न तो मोह है और न ही शोक है। इस ब्रह्म से इतर कोई वस्तु भी नहीं है, इसीलिए श्रुतियों में इसे अनेक प्रकार से प्रतिपादित किया गया है–

'ईशावास्यमिदं सर्वम्'। (ईश0 1) 'एतदात्म्यमिदं सर्वम्', 'यस्मिन् विज्ञाते सर्व विज्ञातं भवति, 'स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो'–(छान्दोग्य0) 'तत्र को मोहः क शोकः एकत्वमनुपश्यत'–(ईश06), 'मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति।'

जीव और ब्रह्म के संबंध में श्रीरामचरितमानस में लिखा है कि सभी जीव ईश्वर के अंश हैं और इस कारण उनमें चेतनता, अमलता और सहज ही सुख की राशि सभी गुण ब्रह्म के हैं, किन्तु जड़ के साथ संयोग (ग्रन्थि) से वे अपने असली स्वरूप को भूल गए हैं, यथा–

ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी।।
जड़ चेतनहि ग्रंथि परि गई। जदपि मृषा छूटत कठिनई।। (7/117/2 एवं 4)

ईश्वर और जीव के भेद के संदर्भ में श्रीरामचरितमानस में यह कहा गया है कि जो ईश्वर, उनकी माया और अपने स्वरूप को नहीं पहचानता है, वह जीव है और जो अपनी माया के प्रभाव से जीव को बंधन में बाँधता है, बंधन काटकर मोक्ष प्रदान करने वाला, सबसे श्रेष्ठ और सबको प्रेरित करने वाला ही ईश्वर है, यथा–

माया ईस न आपु कहुँ जान कहिअ सो जीव।
बंध मोच्छ प्रद सर्बपर माया प्रेरक सीव।। (3/15)

वेदान्तानुसार जगत को मिथ्या माना गया है। इस विषय में अनेक विपत्तियाँ हैं। वेदान्त के अनुसार ब्रह्म की माया की दो शक्तियाँ हैं–आवरण और विक्षेप।

आवरण शक्ति ब्रह्म के शुद्ध स्वरूप का वरण करती है, जबकि विक्षेप शक्ति के माध्यम से आकाशादि प्रपंचों का सृजन होता है। दृग्दृश्य विवेककार ने इसे इस प्रकार प्रस्तुत किया है–

शक्तिइयं हि मायया विक्षेपावृतिरूपकम्।
विक्षेपशक्तिर्लिगांदि ब्रह्माण्डान्तं जगत्सृजेत्।।
अन्तर्दृग्दृश्ययोर्भेदं बहिश्च ब्रह्मसर्गयोः।
आवृत्यपरा शक्ति सा संसारस्य कारणम्।। (दृग्दृश्य0 श्लोक 13, 15)

माया द्वारा ही अविद्या, अज्ञान, अध्यात्म, अध्यारोप, विवर्त्त आदि शब्द व्यवहृत होते हैं। यहाँ अज्ञान नाम से अविच्छिन्न स्थूल शरीर व्यष्टि रूप में संसार में सत्य का प्रतीक है, किन्तु तत्व की दृष्टि से चिन्तन करने पर परिवर्तनशीलता व विनाशशीलता के कारण संसार मिथ्या अथवा असत्य कहा जाता है।

आवरण शक्ति और विक्षेप को श्रीरामचरितमानस में 'विद्या माया' और 'अविद्या माया' के रूप में वर्णित किया है। ब्रह्म की प्रेरणा से तथा त्रिगुणों के प्रभाव से विद्या माया इस जगत

की रचना करती है, जबकि 'अविद्या माया' जीव को भवकूप में ढकेलती है, यथा–

गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई।।
तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। बिद्या अपर अबिद्या दोऊ।।
एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा।।
एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें।।(3/15/3–6)

वेदान्त के अनुसार सत्ता के तीन स्वरूप स्वीकार किए गए हैं–प्रातिभासिकी, व्यावहारिकी और पारमार्थिकी। प्रातिभासिकी सत्ता वह है जो कुछ ही समय तक रहती है। कुछ काल के अनन्तर वह प्रतिबाधित हो जाती है, जैसे–रस्सी में सर्प का आभास करना अथवा सीपी में चाँदी का प्रतिभास। व्यावहारिकी सत्ता संसार में व्यवहार प्रधान होती है। विविध रूपों में विद्यमान यह जगत व्यावहारिक दृष्टि से सत्य की प्रतीति करता है, किन्तु परमार्थ की दृष्टि से असत्य अथवा मिथ्या हो जाता है। संसार को उसकी नश्वरता, परिवर्तनशीलता अथवा अशाश्वतता के कारण ही असत्य अथवा मिथ्या कहा जाता है, न कि लौकिक ज्ञान की निर्मूलता अपादान के कारण।

पारमार्थिकी सत्ता उसे कहते हैं जो कभी बाधित अथवा नष्ट न की जा सके अर्थात् जो तात्विक दृष्टि से अक्षर (क्षरणमुक्त) व शाश्वत हो, वही पारमार्थिक सत्य है। इस प्रकार केवल ब्रह्म ही पारमार्थिक सत्ता है तथा तात्विक दृष्टि से ही संसार मिथ्या है। ऐसा वेदान्त तत्वज्ञ कहते हैं। व्यावहारिक दृष्टि से तो उसकी अनुभूति निर्मूल नहीं है। यह सत्य है कि अज्ञान संज्ञा का अविच्छिन्न व्यष्टिरूप होते हुए शरीर के कारण वह प्राज्ञ अथवा जीव कहा जाता है। ईश्वर का समष्टि और जीव का व्यष्टि रूप है। सर्वज्ञ और अल्पज्ञ आदि के भेद से ब्रह्म और जीवात्मा का भेद प्रतिस्थापित होता है। आत्म तत्व रूप और चैतन्य रूप में उनमें भेद नहीं है। अतएव **'तत्त्वमसि'** इस महावाक्य के द्वारा ब्रह्म और जीव का एकाकार स्वरूप प्रतिपादित होता है। सर्वज्ञ एवं अल्पज्ञ आदि भेद के निवारण द्वारा दोनों में एकात्मभाव स्थापित होता है। एक ही तत्त्व के समष्टि–व्यष्टि नाम के अन्तर से ब्रह्म और जीवात्मा की संसिद्धि होती है। ब्रह्म से साक्षात्कार होने पर दोनों के एकात्मभाव की अनुभूति होने के फलस्वरूप ही 'तत्त्वमसि' इस महावाक्य की मर्म संगति समीचीन प्रतीत होती है। यहाँ भागलक्षणा के कारण ब्रह्म और जीव का ऐक्य रूप सिद्ध होता है। सुरेश्वराचार्य ने अपनी 'नैष्कर्म्य सिद्धि' में यही तत्त्व प्रतिपादित किया है–

समानाधिकरण्यं च विशेषण विशेष्यता।
लक्ष्य लक्षण सम्बन्धः पदार्थप्रत्यगात्यनाम्।। (नैष्कर्म्य सिद्धिः 3.3)

पंचदशी में इसी भाव की पुष्टि इस प्रकार की गई है–

संसर्गो वा विशिष्टो वा वाक्यार्थो नात्र सम्मतः।

अखण्डैकरसत्वेन वाक्यार्थो विदुषां मतः।। (पंचदशी 7.75)

अतएव यह कहना यथार्थतः सत्य ही है कि–

ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः।

श्रीरामचरितमानस में भी यही भाव व्यक्त किया गया है–

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना। सत हरि भजनु जगत सब सपना।। (3/39/5)

अर्थात् शिवजी कहते हैं कि हे उमा! मेरा अनुभव यह है कि हरि भजन (सगुण ब्रह्म का चिंतन) ही सत्य है और यह जगत स्वप्न की तरह है अर्थात् जब तक स्वप्न में रहते हैं तभी तक वह सत्य प्रतीत होता है और जागते ही वह सब असत्य हो जाता है। इस प्रकार ब्रह्म सत्य और जगत् मिथ्या का सिद्धांत प्रतिपादित होता है।

रहिमन विपदा हू भली जो थोरे दिन होइ।
हित अनहित इस जगत में जान परइ सब कोइ।।

मानस के अनुसार–

धीरज धरम मित्र अरु नारी। आपद काल परखिहहिं चारी।।

- अगर आप अपने परिजनों और सहयोगियों का स्वभाव नहीं पहचान पा रहे हैं या उनका स्वभाव पहचानने के बाद भी एडजस्ट नहीं कर पा रहे हैं तो गलती उनकी नहीं, आपकी स्वयं की है।
- शौक पालने की उम्र में जो व्यक्ति सब्र करना सीख जाता है, वह जिंदगी की आधी जंग बिना लड़े ही जीत जाता है।
- इतना आसान नहीं होता जीवन का हर किरदार निभा पाना, इंसान को बिखरना पड़ता है रिश्तों को समेटने के लिए!
- वक्त से पहले मिली चीज अपना मूल्य खो देती है और वक्त के बाद मिली चीजें अपना महत्व!
- धन आते ही सुख मिलेगा इसकी कोई गारंटी नहीं, पर इंसानियत आते ही जीवन सुखमय हो जाएगा, इसमें तनिक भी संदेह नहीं।
- भरोसा स्टिकर जैसा होता है, दूसरी बार पहले जैसा नहीं चिपकता!
- यदि कोई आहार में विष घोल दे तो उसका उपचार संभव है, किंतु यदि कोई विचार में विष घोल दे तो उसका उपचार संभव नहीं!
- मनुष्य अपनी क्षमताओं की कभी कद्र नहीं करता, वह हमेशा उसे प्राप्त करने की होड़ में रहता है जो उसके लिए संभव नहीं।

श्रीराम कथा आयोजन

कथा व्यासः मानस मर्मज्ञ पं. श्यामजी मनावत, फोनः 9826583380

इस समिति द्वारा समय–समय पर राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में श्रीराम कथा का आयोजन किया जाता है। कभी–कभार दिल्ली से बाहर भी श्रीराम कथा का आयोजन होता है। इसी शृंखला में दूसरी बार इस प्रकार का आयोजन कार्तिक कृष्ण एकादशी संवत् 2081 तदनुसार 27 अक्टूबर 2024 को पावन तीर्थ 'शुक्रताल' गंगा तट (उ0प्र0) में सम्पन्न हुआ। कथा व्यास मानस मर्मज्ञ पं. श्यामजी मनावत ने अपनी ओजस्वी एवं भक्ति रस से परिपूर्ण वाणी से श्रीराम कथा श्रवण कराके श्रोताओं को मंत्र मुग्ध कर दिया। प्रवचन के कुछ अंश पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत हैं –

(1) मनुष्य यदि देवता बनना चाहे तो उसे सुनने की आदत डालनी चाहिए, बोलना जहाँ अत्यावश्यक हो, वहीं बोलना चाहिए। इसीलिए हमारे शास्त्रों में सुनने का महत्व है। शास्त्रानुसार **'भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम'** अर्थात् हम कानों से अच्छा सुनें। गर्ग संहिता के अनुसार जब जीव गर्भ में तीन माह का होता है, तभी से उसकी श्रवण शक्ति जाग्रत हो जाती है। इसका उदाहरण हमें महाभारत में मिलता है। अभिमन्यु ने अपनी माता के गर्भ में ही चक्रव्यूह की रचना सुन ली थी और कालान्तर में उसी के बल पर चक्रव्यूह में प्रवेश कर लिया था। बच्चा लगभग दो वर्ष का हो जाने पर बोलना प्रारंभ करता है। इससे यह आशय निकलता है कि हमें सुनना अधिक चाहिए और बोलना कम से कम, केवल उतना ही जितने से काम चल सके। विधाता की रचना देखिए, उन्होंने हमें दो कान और दो आँखें दी हैं, पर बोलने के लिए एक ही जीभ दी है।

श्रीरामचरितमानस में बोलने और सुनने के संदर्भ में किष्किंधाकाण्ड और सुन्दरकाण्ड में प्रमाण मिलता है। सीतान्वेषण पर जाने हेतु जाम्बवान्जी हनुमानजी को प्रेरित करते हैं और तब वे अपनी सामर्थ्य के बारे में बहुत कुछ बोलने के पश्चात् जाम्बवान्जी से पूछते हैं कि मुझे क्या करना है, बताइए। उस समय हनुमानजी ने कुछ नहीं कहा, केवल सुना। इसी कारण वंदना प्रकरण के बाद सुन्दरकाण्ड का प्रारंभ इस चौपाई से होता है–

जामवंत के बचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।। (5/1/1)

इस प्रकार से जब हम बोलते हैं तो किष्किंधाकाण्ड होता है और जब हम सुनना प्रारंभ करते हैं, तब सुन्दरकाण्ड होता है।

एक बार एक श्रोता ने पूछा कि आप लोग (कथा वाचक) तो महँगी गाड़ियों में आते हैं, पर हम तो कड़ी धूप में मीलों पैदल चलकर आते हैं, हमें क्या प्राप्त होता है। प्रभु प्रेरणा से उनको यह उत्तर दिया–

सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान।। (5/60)

अर्थात् श्रीरघुनाथजी के गुणगान सभी प्रकार के मंगल प्रदान करने वाले हैं, किंतु जो इन्हें सादर (श्रद्धा–विश्वास सहित) सुनते हैं, वे इस भवसागर से पार हो जाएँगे।

पुनश्च न बोलने के संदर्भ में शत्रुघ्नजी का व्यवहार उल्लेखनीय है। श्रीराम–वनवास, माताओं का विधवापन और पिता की मृत्यु के पीछे मंथरा का ही षड्यंत्र था और जब उनके सामने मंथरा आई, तब भी वे कुछ नहीं बोले, हालाँकि उनका हृदय क्रोध से जल रहा था। ऐसी विषम परिस्थिति में भी वे कुछ नहीं बोले। उनका एक ही व्रत रहा–'भद्रं कर्णेभि शृणु'।

(2) हम कलश के ऊपर छोटा पात्र रखते हैं। इसका भाव यह है कि हम किसी भी बात पर अपनी बड़ी बात न रखें अर्थात् हम नहले पर दहला न बनें, क्योंकि इस प्रयास से तामसिक गुण बढ़ता है। एक बार चर्चा के दौरान एक नवयुवक से मैंने कहा कि इस वर्ष सोयाबीन की फसल अच्छी हुई है, 10 क्विंटल प्रति एकड़। उसने तुरंत कहा कि हमारी तो 15 क्विंटल प्रति एकड़ हुई। तब मैंने पूछा कि तुम्हारे तो खेत भी नहीं है फिर फसल कहाँ से हो गई। उसने कहा कि हमारे मामाजी के खेत में हुई है। हमें ऐसी बातों से बचना चाहिए, ताकि हमारे अंदर तामसिक प्रवृत्ति न उभरे, क्योंकि यह अभिमान को जन्म देती है।

(3) प्रकृति के तीन गुण हैं–सत्, रज और तम। सतोगुण से सेवा और समर्पण का भाव प्रबल होता है। रजोगुण से सुविधा और सम्मान की प्राप्ति की लालसा जाग्रत होती है और तमोगुण की वृद्धि से नहले पर दहला बनने की भावना प्रबल होती है। यह अहंकार उत्पन्न करता है और अहंकार ही सभी मानस रोगों की जड़ है।

(4) युधिष्ठिर के राज्याभिषेक के पश्चात् जब भगवान श्रीकृष्ण द्वारका जाने को तैयार थे, ठीक उसी समय अभिमन्यु की पत्नी उत्तरा 'त्राहि माम्, त्राहि माम्' पुकारते हुए उनके सम्मुख आती है। उनके गर्भ पर अश्वत्थामा ने ब्रह्मास्त्र का प्रहार किया था। विचारणीय है कि यह वही अश्वत्थामा है जिसे द्रौपदी ने अपने पाँचों पुत्रों की हत्या करने पर भी जीवनदान दिया था, किंतु फिर भी उसने यह जघन्य अपराध कर दिया। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अपराधी को दण्ड अवश्य मिलना चाहिए अन्यथा वह फिर और जघन्य अपराध करता रहेगा। आज हमारे देश का कानून ऐसा है कि निरपराधी दंडित न होने पाए, भले ही संदेह का लाभ लेकर अपराधी बच जाए, किंतु हमारे शास्त्र बताते हैं कि भले ही निरपराधी दंडित हो जाए, पर अपराधी न बचे, उसे दंडित करना ही चाहिए। इसका प्रमाण श्रीरामचरितमानस में

'परशुराम प्रसंग' में मिलता है। शिवजी के धनुष भंग के पश्चात् अति क्रोध में आकर परशुरामजी कहते हैं कि जिसने भी शिव–धनुष तोड़ा है वह इस समाज से अलग हो जाए अथवा यह समाज उसे छोड़कर चला जाए अन्यथा सभी राजा मारे जाएँगे, यथा–

सो बिलगाउ बिहाइ समाजा। न त मारे जैहहिं सब राजा।। (1/271/5)

उत्तरा की पीड़ा समझकर भगवान श्रीकृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र को आज्ञा दी कि गर्भ में प्रवेश करके ब्रह्मास्त्र को शांत करे। चक्र ने संदेश दिया कि गर्भाशय में आग फैल गई है, तुरंत शंख को भेजिए। प्रभु ने शंख भेजा जिसने शीतल जल की वर्षा की और चक्र ने उसे फैलाया, जिससे आग शांत हो गई। अब चक्र ने गर्भस्थ शिशु को शंख के अंदर प्रवेश करा दिया। शंख की कठोरता से शिशु को असहनीय कष्ट हो रहा था, अतः प्रभु को शंख ने संदेश दिया कि पद्म को भेजिए और पद्म आने पर शंख के अंदर रखे शिशु को आराम मिला और तब भगवान ने गदा भेजकर ब्रह्मास्त्र को पूर्णतः निस्तेज कर दिया। अब गर्भस्थ शिशु ने कहा कि जिसने मेरी रक्षा की है, मैं उनका दर्शनाभिलाषी हूँ, तब भगवान ने स्वयं सूक्ष्म रूप से उत्तरा के गर्भ में प्रवेश किया और गर्भस्थ शिशु (परीक्षित) को दर्शन दिए। अब परीक्षित ने कहा कि प्रभु मैं आपसे बड़ा हुआ, क्योंकि पहले गर्भ में मैं आया था और बाद में आप। प्रभु ने यह भी स्वीकार कर लिया। प्रभु अपने भक्तों को इतना सम्मान देते हैं कि वे तीन को अपने से बड़ा मानते हैं। वे तीन हैं–उनका नाम, संत और उनका दास। श्रीरामचरितमानस में इसका प्रमाण इस प्रकार से वर्णित है–

(क) ब्रह्म राम तें नामु बड़ बर दायक बर दानि।
रामचरित सत कोटि महँ लिय महेस जियँ जानि।। (1/25)

(ख) सातवँ सम मोहि मय जग देखा। मोतें संत अधिक करि लेखा।। (3/36/3)

(ग) मोरें मन प्रभु अस बिस्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा।। (7/120/16)

(5) जिन परीक्षित ने गर्भ में ही प्रभु का दर्शन कर लिया था, उनको भी कलियुग ने नहीं छोड़ा। यह प्रसंग इस प्रकार से है–

एक बार राजा परीक्षित ने एक गाय पर प्रहार करते हुए एक युवक को देखकर तुरंत अपनी तलवार निकाल कर उस पर प्रहार करने को उद्यत हुए, तो दृश्य बदल गया, गाय गायब हो गई और युवक राजा परीक्षित के चरणों में गिरकर बोला कि मैं कलियुग हूँ, महाकाल का दशांश। यह नाटक मैंने ही किया है। आप मुझे रहने का स्थान दीजिए। राजा परीक्षित ने उसे 4 स्थान बताए–द्यूत (जुआ), मद्यपान, आपसी झगड़ा और व्यभिचार। कलियुग ने कहा कि ये सभी तो गंदी जगह हैं, कुछ अच्छा स्थान दीजिए, तब राजा परीक्षित ने कहा कि जो अधर्म से कमाई धन–सम्पत्ति और सोना हो, वहाँ तुम्हारा वास रहेगा। राजा परीक्षित ने जब पापी जरासंध का मुकुट धारण किया, उसी समय कलियुग उन पर हावी हो

गया और तब उनके अंदर तामस गुण आ गया, जिसके प्रभाव से उन्होंने एक मुनि का अपमान कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप मुनि–पुत्र ने परीक्षित को शाप दे दिया कि तुम्हें सातवें दिन 'तक्षक' नाम का सर्प डस लेगा और तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी। राजा परीक्षित इसी स्थान (शुक्रताल) आए और श्रीनारायण की प्रेरणा से शुकदेवजी ने उन्हें सात दिन श्रीमद्भागवत कथा सुनाई, जिससे उनका उद्धार हो गया। विचारणीय है कि जिन परीक्षित को गर्भ में ही ईश्वर के दर्शन हो गए थे, पापी का मुकुट पहनने पर उनके ऊपर भी कलियुग का प्रभाव हो गया, अतः हमें सावधान रहना चाहिए और अनैतिकता से प्राप्त सम्पत्ति, दूसरों के कपड़े, गहने आदि पहनने से परहेज करना चाहिए।

(6) एक बार एक नवयुवक ने प्रश्न किया कि जब दिन में सूर्य का इतना प्रकाश है, तब पूजा करते समय दीपक जलाने का क्या औचित्य है। उसे समझाया कि गाय के घी से जलाया दीपक जहाँ तक प्रकाश फैलाता है, वातावरण में सतोगुण की वृद्धि करता है, कलश में रखी हरियाली रजोगुण प्रसारित करती है, जिससे धन–सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।

(7) पृथ्वी रजोगुणी है, इसीलिए इसके कणों को 'रज' कहते हैं। इस कारण आसन पर बैठकर ही संध्या, पूजा, पाठ, अनुष्ठान आदि शुभ कर्म करने चाहिए।

श्रीरामायणजी और भगवत् विग्रह की आरती के पश्चात् कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

पास जो तेरे है वन्दे उसका उपभोग नहीं करता।
न जाने क्या पाने के लिए बेचैन उदास बना रहता।। (सप्त सुमन से)

- जो आपके हैं वे आपको देखकर कभी व्यस्त नहीं हो सकते और जो आपको देखकर व्यस्त हो जायें, वे आपके कभी नहीं हो सकते!
- जिस प्रकार पेड़ पर पत्ते अधिक होने से उस पर फल कम लगते हैं, उस प्रकार व्यक्ति के अधिक बोलने से उसकी बातों की विश्वसनीयता कम हो जाती है।
- ज्ञान तीन तरह से मिल सकता है–स्वयं के चिन्तन–मनन से, जो सर्वश्रेष्ठ होता है, दूसरों के अनुभवों से उसका अनुसरण करने से, जो सरल होता है और तीसरा अपने स्वयं के अनुभव से जो कड़वा होता है।
- धन को एकत्रित करना सहज है, पर संस्कारों को एकत्रित करना बहुत ही कठिन है। काया और माया का घमंड ही हमारी उन्नति में बाधक है।
- जिस प्रकार दर्पण साफ होने पर उसमें चेहरा साफ दिखाई पड़ने लगता है, उसी प्रकार हृदय के स्वच्छ होते ही भगवान का स्वरूप दिखाई देने लगता है।
- उस शत्रु से उतना भय नहीं है जो तुम पर आक्रमण करने जा रहा है, बल्कि उस नकली मित्र से अधिक भय है जो आपको अपनी चिकनी–चुपड़ी, मीठी–मीठी बातों में फँसाकर तुम्हें गले लगा रहा है।

निषाद से निकटता

कथा व्यासः मानस मर्मज्ञ पं. श्यामजी मनावत, फोनः 9826583380

प्रभु श्रीराम जब माँ कैकेयी की इच्छा से चौदह वर्षों के लिए वन में जाते हैं, तब वन में रहने वाले निषादराज से उनकी भेंट होती है। गुहराज जंगल में रहते हैं, वनवासी हैं, परन्तु श्रीराम उन्हें जो अपनत्व, स्नेह और सम्मान देते हैं वह स्तुत्य है। आइए देखते हैं गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज इस घटना को किस अनूठे एवं रोचक ढंग से प्रस्तुत करते हैं–

(1) सत्कार की सांस्कृतिक परम्परा

यह सुधि गुहँ निषाद जब पाई। मुदित लिए प्रिय बंधु बोलाई।।
लिए फल मूल भेंट भरि भारा। मिलन चलेउ हियँ हरषु अपारा।।(2/88/1–2)

जब निषादराज गुह ने यह खबर पाई, तब आनन्दित होकर उन्होंने अपने प्रियजनों और भाई बंधुओं को बुला लिया। भेंट के लिए कन्द, मूल, फल आदि लेकर चले। उनके हृदय में हर्ष का पार नहीं था।

उपर्युक्त चौपाई का निहितार्थ बड़ा भावपूर्ण है। इसमें वनवासी समाज की निम्नांकित गौरवशाली परम्परा का पता लगता है।

(क) सत्कार के लिए स्वयं अकेले न जाकर परिजन–पुरजन सहित स्वागत करना। यह पारिवारिक और सामाजिक समन्वय और सौहार्द का प्रमाण है।

(ख) आए हुए अतिथि के स्वागत सत्कार में कुछ लेकर उपस्थित होना, यह आदर्श गृहस्थाश्रम की व्यवस्था है। आज भी देश के अनेक क्षेत्रों में यह परम्परा है कि अतिथि को जल पिलाने से पहले कुछ खाने को देते हैं। निषादराज भी भगवान से खाली हाथ नहीं मिले। वे कन्द–मूल लेकर उपस्थित हुए।

(ग) निषादराज जब भगवान से मिले तब उनके मन में अपार हर्ष था। मिलने की परम्परा में यह अनिवार्य शर्त है कि मन में प्रसन्नता होनी चाहिए। स्वयं महात्मा तुलसीदास इस नीति को प्रतिपादित करते हुए लिखते हैं–

आवत ही हरशै नहीं नैनन नहीं सनेह।
तुलसी तहाँ न जाइए चाहे कंचन बरसे मेह।।

जब निषादराज इस आत्मीयता से मिले तो प्रभु श्रीराम ने उनके इस व्यवहार का जो प्रत्युत्तर दिया वह भी प्रेरणादायक है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

सहज सनेह बिबस रघुराई। पूँछी कुसल निकट बैठाई।। (2/88/4)

भगवान राम स्वाभाविक स्नेहवश होकर निषादराज को अपने पास बैठाकर कुशल क्षेम

पूछते हैं। इस घटना का मर्म कुछ गहरा दिखाई देता है, वह इस प्रकार से है–

(क) भगवान राम निषादराज से सहज स्वभाव स्नेह से मिलते हैं अर्थात् प्रभु श्रीराम की यह सहजता है। उनके व्यवहार में निषादराज से मिलते समय कोई संकोच या असहजता नहीं दिखाई देती। जैसे वे सबसे मिलते हैं वैसे ही वे निषादराज से मिले। उन्हें वनवासी जनों से मिलने में न संकोच है, न कठिनाई है और न ही कोई परहेज है। प्रभु की आत्मीयता सबके लिए समान है, क्योंकि वे समरस हैं, समदृष्टि हैं और भेदभाव से दूर हैं।

(ख) महात्मा तुलसीदास लिखते हैं कि **''पूँछी कुसल निकट बैठाई''** अर्थात् रामजी निषाद को अपने पास बैठाते हैं। समाज की उस मर्मस्थिति पर यह सीधी चोट है जो अस्पृश्यता का जहर घोलती है। आज भी समाज में कुछ लोग ऐसे हैं जो कुछ वर्गों से दूरी बनाकर रखते हैं, अस्पृश्यता का भाव रखते हैं। धन्य हैं श्रीराम जिन्हें वनवासी निषाद को अपने पास बैठाने में कोई आपत्ति नहीं है, जबकि निषाद स्वयं यह कह रहे थे, ''मैं जनु नीच सहित परिवारा।'' परन्तु श्रीराम प्रभु ने उनकी इस हीन भावना को, ग्लानि को एवं अपराध बोध को दूर किया। प्रभु अपने विचार और व्यवहार से यह सिद्ध कर देते हैं कि 'मानव मात्र–एक समान'।

(ग) भगवान श्रीराम निषाद को अपना 'सखा' संबोधित करते हैं अर्थात् उसे मित्र की संज्ञा देते हैं। भगवान श्रीराम उन्हें बुद्धिमान और चतुर मानकर 'सुजान' भी कहते हैं–

कहेहु सत्य सबु सखा सुजाना। मोहि दीन्ह पितु आयसु आना।। (2/88/8)

(2) आदर्श का अनुसरण

जब समाज का कोई प्रतिष्ठित एवं नेतृत्वशील व्यक्ति किसी रूढ़िवादी परम्परा को तोड़कर नया आदर्श स्थापित करता है, तब फिर अन्य समाजजन भी उसका अनुसरण करते हैं। भगवान श्रीराम ने वनवासी समाज के साथ जो प्रेमपूर्ण व्यवहार किया, उसका अन्य लोगों ने कैसे अनुसरण किया इसका उल्लेख गोस्वामीजी करते हैं। यह घटनाक्रम उस समय का है जब श्रीभरतजी भगवान को मनाने चित्रकूट जा रहे थे। मार्ग में उन्हें गुहराज निषाद मिले, तब भरतजी का प्रेम देखिए–

राम सखा सुनि संदनु त्यागा। चले उतरि उमगत अनुरागा।।
गाउँ जाति गुहँ नाउँ सुनाई। कीन्ह जोहारु माथ महि लाई।।(2/193/7–8)
करत दंडवत देखि तेहि भरत लीन्ह उर लाइ।।
मनहुँ लखन सन भेंट भइ प्रेम न हृदयँ समाइ।। (2/193)

यह रामजी का मित्र है, इतना सुनते ही भरतजी ने रथ त्याग दिया। वे रथ से उतर कर प्रेमभाव से चले। निषादराज गुह ने अपना गाँव, जाति व नाम बताकर पृथ्वी पर माथा टेक कर जोहार की अर्थात् प्रणाम किया। दण्डवत करते देखकर भरतजी ने गुह को छाती से लगा लिया। हृदय में प्रेम समाता नहीं है। मानो लक्ष्मणजी से भेंट हो गई हो।

उस समय जब निषादराज ने वसिष्ठजी को प्रणाम किया, तब उन्होंने दूर से ही

आशीर्वाद दे दिया था, किन्तु चित्रकूट में जब पुनः निषादराज ने उन्हें दण्डवत् प्रणाम किया तब उनकी स्थिति देखिए–

प्रेम पुलकि केवट कहि नामू। कीन्ह दूर तें दंड प्रनामू।।
रामसखा रिषि बरबस भेंटा। जनु महि लुठत सनेह समेटा।।(2/243/5–6)

फिर प्रेम से पुलकित होकर केवट अर्थात् निषादराज ने अपना नाम लेकर दूर से ही प्रणाम किया, परन्तु वसिष्ठजी ने उन्हें राम सखा जानकर जबरदस्ती हृदय से लगा लिया, मानो जमीन पर लेटते हुए प्रेम को समेट लिया हो। प्रभु श्रीराम ने जब निषादराज को गले से लगाया और अपना मित्र बनाया तो भरतजी भी उन्हें आदर देते हैं और अब वसिष्ठजी भी उन्हें हृदय से लगाते हैं। प्रभु की इस उदारता और समरसता के भाव के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए स्वयं निषादराज कहते हैं कि जब से प्रभु श्रीराम ने मुझे अपनाया है तभी से मैं विश्व का भूषण हो गया हूँ।

राम कीन्ह आपन जबही तें। भयउँ भुवन भूषन तबही तें।। (2/196/2)

जंगल में रहने वाले निषाद, भील आदि समाज जनों को श्रीराम ने अपना मित्र बनाकर सम्पूर्ण समाज के लिए स्नेह एवं आदर योग्य बना दिया। समरसता के इस सेतु को श्रद्धा भरा प्रणाम। यह वनवासी समाज श्रीरामजी को कृतज्ञता पूर्ण भाव से कहता है–

जब तक हम बिके न थे कोई पूछता न था।
आपने खरीद कर हमें अनमोल कर दिया।।

(3) राम कार्य हेतु समर्पण

भगवान राम ने निषादराज एवं सभी वन्यजनों को जो स्नेह एवं आत्मीयता दी, उसका परिणाम यह हुआ कि वे प्रभु श्रीराम के लिए पूर्णतः समर्पित हो गए। उन्होंने भगवान के लिए निवास एवं आहार की व्यवस्था की। इतना ही नहीं, वे श्रीरामजी के लिए अपने प्राण तक देने को तैयार हो गए। उनका यह समर्पण तब दिखाई देता है, जब भरतजी भगवान को मनाने चित्रकूट जा रहे थे। भरतजी को चतुरंगिणी सेना के साथ आता देखकर निषादराज के मन में संदेह पैदा हो गया। उन्हें लगा कि भरतजी रामजी से युद्ध करने जा रहे हैं, तब रामजी के प्रति उनका समर्पण प्रकट दिखाई देता है, वे कहते हैं–

होहु सँजोइल रोकहु घाटा। ठाटहु सकल मरै के ठाटा।।
सनमुख लोह भरत सन लेऊँ। जिअत न सुरसरि उतरन देऊँ।।(2/190/1–2)

रहिमन विपदा हू भली जो थोरे दिन होइ।
हित अनहित इस जगत में जान परइ सब कोइ।।

राम सदा सेवक रुचि राखी

श्रीमती कुसुम पटैरया, नोएडा, फोनः 9811201847

भरतजी अपने भाई श्रीरामजी को मनाने चित्रकूट के समीप पहुँच रहे हैं। उनके प्रेमभाव को देखकर साधु–सिद्ध–मुनिगण उनकी प्रशंसा कर रहे हैं। भरतजी के इस प्रभाव को देखकर देवराज इन्द्र गुरु बृहस्पतिजी से निवेदन करते हैं कि कुछ ऐसा करिए कि भरतजी और रामजी का मिलन ही न हो पाए, क्योंकि संकोचवश यदि श्रीरामजी अयोध्या लौट जाएँगे तो हमारा बना बनाया काम बिगड़ जाएगा। सुरगुरु उन्हें समझाते हुए कहते हैं कि श्रीरामजी अपने सेवक की रुचि सदैव पूर्ण करते हैं, यथा–

राम सदा सेवक रुचि राखी। बेद पुरान साधु सुर साखी।। (2/219/7)

इसके साथ ही उन्होंने समझाया कि भगवान का सेवक (भक्त) अत्यंत दयालु स्वभाव का होता है और दूसरों के दुख देखकर स्वयं दुखी हो जाता है, अतः भक्त शिरोमणि भरतजी से डरने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वे तो श्रीरामजी की इच्छा के विरुद्ध कुछ सोच ही नहीं सकते हैं। श्रीरामजी का रुख जानकर ही हमने कुचक्र रचकर मंथरा को अजस पिटारी बनाकर श्रीराम–वनवास करवाया था, यथा–

तब किछु कीन्ह राम रुख जानी। अब कुचालि करि होइहि हानी।। (2/218/3)

अब प्रश्न उठता है कि जब भगवान अपने सेवक (भक्त) की रुचि पूर्ण करते हैं, तब नारदजी की रुचि पूरी क्यों नहीं की? इस प्रसंग पर हमें गंभीरता से विचार करना होगा। भगवान भक्त की रुचि पूर्ण करते हैं, किंतु वे यह भी ध्यान रखते हैं कि उसकी रुचि पूर्ण करना उसके लिए कल्याणकारी है या अनर्थकारी। यदि भक्त की रुचि पूर्ण करना हितकारी नहीं है तो फिर भगवान कुछ ऐसी लीला रचते हैं जो भक्त की रुचि के विपरीत होने पर भी उसके लिए कल्याणकारी सिद्ध हो। नारदजी को काम–विजय का अभिमान हो गया था, जिसे भगवान दूर करना चाहते थे–

करुनानिधि मन दीख बिचारी। उर अंकुरेउ गरब तरु भारी।।
बेगि सो मैं डारिहउँ उखारी। पन हमार सेवक हितकारी।। (1/129/4–5)

ऐसी स्थिति में फिर भक्त की रुचि और उसका पुरुषार्थ काम नहीं करता, फिर तो भगवान भक्त के कल्याणार्थ जो करना चाहते हैं, वही होता है, यथा–

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई।। (1/128/1)

इस तथ्य का उल्लेख स्वयं श्रीरामजी पंपापुर सरोवर के तट पर नारदजी से करते हैं।

वे कहते हैं कि मेरे भक्त नादान शिशु के समान होते हैं, जिनके कल्याण हेतु मैं उसी तरह सजग रहता हूँ और उनकी रक्षा करता हूँ जिस तरह एक माँ अपने नादान शिशु का पालन करती है। ज्ञानी लोग मेरे युवा पुत्र की तरह हैं, किंतु मेरे अमानी भक्त तो मेरे लिए नादान शिशु की तरह ही हैं–

सुनु मुनि तोहि कहउँ सहरोसा। भजहिं जे मोहि तज सकल भरोसा।। (3/43/4)
करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी। जिमि बालक राखइ महतारी।।(3/43/5)
मोरें प्रौढ़ तनय सम ग्यानी। बालक सुत सम दास अमानी।।(3/43/8)

श्रीहनुमानजी का जब ऋष्यमूक पर्वत पर प्रथम वार श्रीरामजी से मिलन होता है, तब वे ब्राह्मण वेश में थे, इसीलिए श्रीरामजी ने उन्हें तब तक गले से नहीं लगाया, जब तक वे अपने असली रूप में नहीं आ गए। उस समय श्रीहनुमानजी ने कहा था कि जिस प्रकार एक शिशु अपनी माता के भरोसे रहता है, ठीक उसी प्रकार सेवक को अपने स्वामी का भरोसा होता है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

सेवक सुत पति मातु भरोसें। रहइ असोच बनइ प्रभु पोसें।।
अस कहि परेउ चरन अकुलाई। निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई।।
तब रघुपति उठाइ उर लावा। निज लोचन जल सींचि जुड़ावा।।(4/3/4–6)

सेवक की रुचि भगवान पूर्ण करते हैं, तो यह जानना भी आवश्यक है कि सेवक की परिभाषा क्या है। स्वयं श्रीरामजी इसे परिभाषित करते हैं, यथा–

सोइ सेवक प्रियतम मम सोई। मम अनुसासन मानै जोई।। (7/43/5)

सेवक का एक और महत्वपूर्ण लक्षण है कि वह अपने स्वामी की इच्छा के विरुद्ध कभी नहीं जाता। स्वामी के हित में सेवक अपना हित समझता है। चित्रकूट प्रवास के दौरान श्रीरामजी को मनाने भरतजी के साथ कुलगुरु वसिष्ठजी तथा अन्य गणमान्य लोग जाते हैं। सभी इस प्रयास में हैं कि किसी तरह श्रीरामजी अयोध्या लौट चलें। किसी को कोई उपाय नहीं सूझता है, तब वे भरतजी की ओर देखते हैं। भरतजी का उत्तर देखिए–

बूझिअ मोहि उपाय अब सो सब मोर अभागु।
सुनि सनेहमय बचन गुर उर उमगा अनुरागु।। (2/255)

भरतजी का उत्तर सुनकर वसिष्ठजी एक सुझाव देते हैं कि तुम और शत्रुघ्न दोनों भाई वन में रहो और श्रीराम, सीता और लक्ष्मण को हम अयोध्या लौटा ले जाते हैं। यह सुनकर भरतजी प्रसन्नता पूर्वक कहते हैं कि चौदह वर्ष क्या, मैं जीवनपर्यन्त वन में वास करने को तैयार हूँ। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

कानन करउँ जनम भरि बासू। एहिं तें अधिक न मोर सुपासू।। (2/256/8)

इसके पश्चात् सम्पूर्ण समाज श्रीरामजी के पास जाता है और विचार–विमर्श के दौरान

श्रीरामजी घोषणा कर देते हैं कि जो भरत कहें, मैं वही करने को तैयार हूँ। भरतजी तो उन्हें मनाने आए ही थे, वे चाहते तो कह सकते थे कि आप अयोध्या लौट चलें, पर उन्होंने वही बात कही जो गुरु वसिष्ठजी ने सुझाई थी। उन्होंने कहा–

सानुज पठइअ मोहि बन कीजिअ सबहि सनाथ।
नतरु फेरिअहिं बंधु दोउ नाथ चलौं मैं साथ।। (2/268)
नतरु जाहिं बन तीनिउ भाई। बहुरिअ सीय सहित रघुराई।।
जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई। करुना सागर कीजिअ सोई।।(2/269/1–2)

भरतजी के इस प्रस्ताव पर श्रीरामजी मौन रहे। अब भरतजी कहते हैं कि हे स्वामी! जिसमें आपको संकोच न हो वही कीजिए। फिर भी श्रीरामजी मौन रहे, तब भरतजी ने कहा कि आप प्रसन्न मन से संकोच त्याग कर जो आज्ञा देंगे, सभी उसका पालन करेंगे। भरतजी के ऐसे वचन सुनकर देवगण हर्षित हुए, क्योंकि उन्हें लग रहा था कि यदि भरतजी श्रीरामजी को अयोध्या लौटने को कहेंगे, तो उनका बना बनाया काम बिगड़ जाएगा। अयोध्यावासी असमंजस में थे कि अब क्या होगा, श्रीरामजी का क्या आदेश होगा। विचार–विमर्श चल ही रहा था कि राजा जनक के आगमन की सूचना मिली, इस कारण वह सभा स्थगित हो गई।

अब राजा जनक के आने पर श्रीरामजी और अधिक संकोच में पड़ गए। वसिष्ठजी, जनकजी एवं सम्पूर्ण समाज विचार–विमर्श करता है कि किस तरह श्रीरामजी अयोध्या लौटें, किंतु जब कोई समाधान नहीं निकलता है, तब सभी पुनः भरतजी की ओर देखते हैं और भरतजी अब स्पष्ट शब्दों में अपना विचार रखते हैं। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना। सेवाधरमु कठिन जगु जाना।।
स्वामि धरम स्वारथहि बिरोधू। बैरु अंध प्रेमहि न प्रबोधू।।(2/293/7–8)
राखि राम रुख धरमु ब्रतु पराधीन मोहि जानि।
सब कें संमत सर्ब हित करिअ पेमु पहचानि।। (2/293)

अर्थात् वेद–शास्त्र–पुराणों में सेवक का धर्म बहुत कठिन बताया गया है। जिस प्रकार किसी से दुश्मनी हो जाने पर वह व्यक्ति अंधा अर्थात् विवेकहीन हो जाता है और कुछ भी धर्म विरुद्ध कर सकता है और जिस प्रकार प्रेमीजन को केवल अपना प्रेमास्पद ही दिखाई देता है, फिर उसे कोई भी समझाए, उसे कुछ समझ में नहीं आता अर्थात् वह वही करेगा जो उसने ठान लिया है, इसी प्रकार स्वामी धर्म और निजी स्वार्थ में विरोध होता है। हम सबका निजी स्वार्थ तो यह है कि श्रीरामजी अयोध्या लौट चलें, किंतु मुझ सेवक का धर्म यह है कि उनको संकोच में न डालूँ, वे जैसा चाहें वैसा ही हो। इस प्रकार से मैं सेवक–धर्म के कारण पराधीन हूँ, मैं श्रीरामजी को अयोध्या लौटने को नहीं कह सकता।

अंततः श्रीरामजी ने निर्णय लेते हुए कहा कि हे भरत! मैं चौदह वर्ष वन में रहूँगा और तुम अयोध्या का राज–पाट सँभालो। फिर श्रीरामजी ने उन्हें अपनी चरणपादुकाएँ दीं, जिन्हें भरतजी ने प्रसन्नता से शिरोधार्य किया और उनको ऐसा सुख प्राप्त हुआ मानो श्रीरामजी ही अयोध्या लौट रहे हों। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

प्रभु करि कृपा पाँवरीं दीन्हीं। सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।।
भरत मुदित अबलंब लहे तें। अस सुख जस सिय रामु रहे तें।।

(2/316/4 तथा 8)

इस प्रकार श्रीरामजी ने सदा अपने सेवक की रुचि रखी है। वास्तव में सच्चा सेवक वही है जिसकी अपनी कोई इच्छा (चाह/रुचि) ही न हो, बल्कि स्वामी की रुचि में ही अपना कल्याण समझे।

इस संदर्भ में एक भक्त की यह प्रार्थना उल्लेखनीय है–

चाह यही इक मेरी भगवान और चाह मिट जावे।
केवल तेरी चाह रहे बस एक चाह रह जावे।।

- यह सत्य है कि भीड़ में सभी लोग अच्छे नहीं होते, लेकिन एक सच्चाई यह भी है कि अच्छे लोगों की भीड़ नहीं होती।
- जिंदगी का सुकून छीनने के लिए ये तीन चीजें काफी हैं–झूठा प्यार, मतलबी यार और पंचायती रिश्तेदार।
- प्रेम और सम्मान ये दो ऐसे तोहफे हैं कि अगर देने लग जाओ तो बेजुबान भी झुक जाते हैं।
- कुछ बातें समझाने पर नहीं, बल्कि खुद पर बीत जाने पर ही समझ में आती हैं।
- हर कोई चन्दन नहीं, कि सुगन्धित कर सके, कुछ नीम के पेड़ भी हैं, जो सुगन्धित तो नहीं करते, पर काम बहुत आते हैं।
- अपने आस–पास छिपे कौवों को पहचानिए और उनसे दूर रहिए, किंतु जो हंस प्रवृत्ति के हैं, उनका साथ कीजिए, इसी में आपका कल्याण है।
- बच्चों को यदि उनके पसंद के खिलौने नहीं दोगे तो वे थोड़ी देर रोएँगे, किंतु अगर उन्हें अच्छे संस्कार नहीं दिए तो वे फिर जीवनभर रोएँगे, इसलिए बच्चों को अच्छे संस्कार दीजिए, क्योंकि अच्छे संस्कार से ही अच्छा संसार (जीवन) बनता है।
- श्रीभगवन्नाम–जब आप स्नान करते समय लेते हो तो वह गंगा स्नान के समान हो जाता है, जब भोजन बनाते समय लेते हो तो भोजन प्रसाद बन जाता है, जब चलते समय लेते हो तो वह तीर्थाटन बन जाता है, सोते समय लेते हो तो नींद ध्यानमय बन जाती है, जब काम करते समय लेते हो तो वह समय भक्तिमय दिव्य बन जाता है और जब घर में नाम लेते हो, तो वह घर मंदिर बन जाता है।

श्रीरामजन्म से अयोध्या में परमानंद

श्रीमती ज्योत्सना प्रसाद, वाराणसी, फोनः 9839413700

तुलसी के 'मानस' में भगवान श्रीराम के सरल, निर्मल एवं पावन चरित्र का वर्णन है। महाकवि तुलसीदास ने दोनों महाशक्तियों उमा–शिव का स्मरण करके निर्मल मन से 'श्रीरामचरितमानस' की रचना की। प्रत्येक चरित्र की भाँति तुलसीदासजी ने राम के बाल्यरूप का बालकाण्ड में अत्यन्त सुन्दर व सजीव चित्रण किया है। इसे जब हम पढ़ते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है, जैसे कि सब कुछ आँखों के सामने चलचित्र की भाँति चल रहा है। कल्पना भी ऐसी की है जो स्मरणीय और अद्‌भुत है। चैत्र मास की नवमी तिथि और दिन मंगलवार को श्रीरामचन्द्रजी का जन्म हुआ। वेद भी कहते हैं कि उस दिन सारे तीर्थ अयोध्या में चले आते हैं। मानो पृथ्वी सतरंगी होकर वह भी भगवान के जन्म की प्रतीक्षा में मग्न हो रही है।

नौमी भौम बार मधुमासा। अवधपुरीं यह चरित प्रकासा।।
जेहि दिन राम जनम श्रुति गावहिं। तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं।।
(1/34/5–6)

पृथ्वी पर सभी रामजी के जन्म के लिए उस पवित्र समय की प्रतीक्षा कर रहे थे। ऋषि, मुनि, देवी–देवता इत्यादि एवं स्वयं भगवान शिवजी भी भगवान श्रीराम के दर्शन के लिए आतुर थे। उन्हें तो सब ज्ञात था फिर भी वह व्याकुल थे कि कब श्रीहरि मनुज रूप में अवतार लेंगे। प्रभु श्रीराम के जन्म के लिए ब्रह्माजी ने भी स्तुति की।

भगवान श्रीराम सत्य, चेतन, व्यापक एवं आनन्द स्वरूप परब्रह्म हैं। वे लीला करने के लिए ही अव्यक्त से व्यक्त रूप में प्रकट हुए। जब ब्रह्मा आदि सब देवतागण और सिद्धगण दानवों के अत्याचार से व्याकुल हो गए, तब उनके कल्याण हेतु निर्गुण ब्रह्म ने नर शरीर धारण किया। प्रभु श्रीराम (श्रीहरि) कल्याणरूप अवध नरेश श्रीदशरथजी (कश्यप ऋषि) और कल्याण स्वरूप महारानी कौसल्या (देवी माता अदिति) के यहाँ चार भाइयों के रूप में सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य एवं सायुज्य मोक्ष के सुन्दर चार फलस्वरूप उत्पन्न हुए।

भगवान श्रीराम ने जन्म लेकर वेदोक्त यज्ञादि कर्म, धर्म, पृथ्वी, गौ, ब्राह्मण, भक्त और संत–साधुओं को आनन्दित किया। महाप्रभु का पवित्र यश चौदह भुवनों में जगमगाता है, वे सदा सर्वथा पुण्यमय और धन्य हैं।

जय जय सुरनायक जन सुखदायक प्रनतपाल भगवंता।
गो द्विज हितकारी जय असुरारी सिंधुसुता प्रिय कंता।।
सारद श्रुति सेषा रिषय असेषा जा कहुँ कोउ नहिं जाना।
जेहि दीन पिआरे बेद पुकारे द्रवउ सो श्रीभगवाना।।
भव बारिधि मंदर सब बिधि सुंदर गुनमंदिर सुखपुंजा।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ पद कंजा।। (1/186/छंद)

देवताओं द्वारा वंदना करने एवं देवताओं और पृथ्वी को भयभीत जानकर शोक व सन्देह को हरने वाली यह आकाशवाणी हुई–

हे देवताओ! मैं सूर्यवंश में अंशों सहित मनुष्य का अवतार लूँगा।

असन्ह सहित मनुज अवतारा। लेहउँ दिनकर बंस उदारा।।
कस्यप अदिति महातप कीन्हा। तिन्ह कहुँ मैं पूरब बर दीन्हा।।
ते दशरथ कौसल्या रूपा। कोसलपुरीं प्रगट नर भूपा।।
तिन्ह कें गृह अवतरिहउँ जाई। रघुकुल तिलक सो चारिउ भाई।।
(1/187/2–5)

महर्षि कश्यप और देव माता अदिति ने घोर तप किया था और उन्हें मैंने वरदान दिया था कि जब वे दशरथ और कौसल्या के रूप में सरयू नदी के किनारे बसी अयोध्या नगरी में जन्म लेंगे, तब उनके यहाँ पुत्र रूप में प्रकट होऊँगा और नारद के वचनों को सत्य करूँगा।

सुर समूह बिनती करि पहुँचे निज निज धाम।
जगनिवास प्रभु प्रगटे अखिल लोक बिश्राम।। (1/191)

श्रीरामचरितमानस के इस दोहे में तुलसीदासजी ने प्रभु श्रीराम के जन्म का बखान किया और प्रभु श्रीराम की अद्‌भुत लीला इस प्रकार दर्शायी–

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै सिसुलीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा।। (1/192/छंद)

शुभ घड़ी में प्रभु श्रीराम का जन्म हुआ, माता कौसल्या के हितकारी, मुनियों के मन को हरने वाले उनके अद्‌भुत रूप का विचार करके माता कौसल्या हर्ष से भर गयीं। माता कौसल्या दोनों हाथ जोड़कर स्तुति करने लगीं। हे अनन्त! मैं किस प्रकार आपकी स्तुति करूँ। वेद, पुराण, संतजन सभी दया और सुख का सागर, सब गुणों के धाम कहकर जिसका गान करते हैं, वही भक्तों से प्रेम करने वाले आप मेरे कल्याण के लिए प्रकट हुए। भगवान श्रीराम ने मुनि कश्यप एवं देवी अदिति के पुत्र के रूप में जन्म लेकर अपने दिए हुए

वचन का पालन किया।

कौसल्या माता कहती हैं कि वेद कहते हैं कि हे प्रभु! आपके प्रत्येक रोम में माया के रचे हुए अनेकों ब्रह्मांडों के समूह भरे हैं। जब माता को ज्ञान हुआ, तब प्रभु मुस्कराए और माता कौसल्या को बहुत प्रकार से समझाया कि अब मैं ईश्वर नहीं आपका पुत्र हूँ। माता कौसल्या को श्रीराम द्वारा समझाने पर उनकी बुद्धि बदल गई और तब वे श्रीहरि से प्रार्थना करते हुए बोलीं–हे तात! यह रूप छोड़ो और अत्यन्त प्रिय बाल लीला करो। प्रभु श्रीराम माता कौसल्या द्वारा प्रार्थना करने पर बोले कि अब मैं तो आपका बालक बन गया हूँ। कितनी भाग्यशाली हैं माता कौसल्या, जिनके पुत्र के रूप में श्रीहरि स्वयं जन्म लिए। अपनी बाल–लीला से सबका मन मोहने के लिए स्वयं श्रीराम भी आतुर हुए।

पवित्र नगरी अयोध्या में राजा दशरथ ने जब अपने कानों से पुत्र जन्म का समाचार सुना तो वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। राजा दशरथ की प्रसन्नता का वर्णन हो नहीं सकता है। अयोध्या में ईश्वर के जन्म से राजा दशरथ कितने भाग्यशाली राजा थे, इसका बखान देवता, मुनि, ऋषि नहीं कर पाए। राजा ने ब्राह्मणों को सोना, चाँदी, वस्त्र, धन और मणियों का दान दिया और सभी याचकों को अपार धन देकर अयाचक बना दिया। अयोध्या में ईश्वर के जन्म के समय सारे देवता, मुनि, किन्नर, गन्धर्व इत्यादि इस अद्‌भुत बालक को देखने के लिए लालायित थे। जिस प्रकार अयोध्या नगरी को सजाया गया, उसका वर्णन नहीं हो सकता। आकाश से पुष्पों की वर्षा हो रही थी। सभी लोग ब्रह्मानंद में मग्न थे। गवैये रघुकुल के स्वामी के पवित्र गुणों का गान करते हैं। इस मनभावन रूप एवं सुन्दरता से परिपूर्ण उत्सव को देखते हुए सब अपने स्थान से हिले तक न हों। सभी नर–नारी अयोध्या को निराली एवं अद्‌भुत रूप से सजाने लगे। अयोध्या एवं सरयू तोरण से सज रही थी। अयोध्या में सोहर, बधावा, मंगलगान स्तुति आदि से नगरी मनमोहक एवं उत्कर्षित थी।

गृह गृह बाज बधाव सुभ प्रगटे सुषमा कंद।
हरषवंत सब जहँ तहँ नगर नारि नर बृंद।। (1/194)

अर्थात् घर–घर मंगलमय बधावा बजने लगा, क्योंकि शोभा के मूल भगवान प्रकट हुए हैं।

अवधपुरी सोहइ एहि भाँती। प्रभुहि मिलन आई जनु राती।।
देखि भानु जनु मन सकुचानी। तदपि बनी संध्या अनुमानी।।(1/195/3–4)

अवधपुरी इस प्रकार सुशोभित हो रही है, मानो रात्रि प्रभु से मिलने आयी हो और सूर्य को देखकर मानो मन में सकुचा गई है, फिर भी मन में विचार कर वह मानो संध्या बन गई है। महाकवि तुलसीदास ने ऐसी सुन्दर रचना की, जिसे सुनने मात्र से परम सुख की प्राप्ति होती है। माता कौसल्या जो सब कुछ जानती थीं कि राम स्वयं महाविष्णु हैं और उन्होंने

प्रार्थना की, हे ईश्वर आप मेरे पुत्र अवश्य हैं, परन्तु इस विश्व की अनगिनत एवं विकट समस्या हेतु जन्म लिए हैं, अपनी उस अखण्ड लीला का संचालन करें। पुनः आप मेरे पुत्र की भाँति बाल–लीला का दर्शन दें, ताकि मैं भी यह पुत्र–सुख का आनन्द प्राप्त कर सकूँ।

ठुमक चलत रामचन्द्र बाजत पैजनियाँ।
किलक किलक उठत धाय गिरत भूमि लटपटाया।।

प्रभु श्रीराम का नाम कलियुग में कल्प वृक्ष के समान है। जो शरणागत भक्तों को सान्त्वना देने वाले हैं, जो सूर्य कुल रूपी कमलों के वन को प्रफुल्लित करने वाले साक्षात सूर्य हैं, जो सम्पूर्ण दिव्य गुणों के धाम हैं, संपूर्ण विश्व का हित करने वाले हैं, उन श्रीराम के जो नयनाभिराम रूप का ध्यान करते हैं, वे कल्याण के भागी हैं तथा धन्य हैं।

मर्यादा की लक्ष्मण रेखा

नख सिख देखि राम कै सोभा। सुमिरि पिता पनु मनु अति छोभा। (1/234/4)

सीताजी के इस पुष्प वाटिका प्रसंग से शिक्षा मिलती है कि मनोहारी सुंदरता देखकर या कुछ विशेषता, विशेष आकर्षण ही हो, वो सभी के मन में हलचल मचा सकता है, मन को क्षुब्ध कर सकता है, उसे पाने की मन में तीव्र इच्छा हो सकती है, किंतु विजयी वही होता है, जो अपने मन को नियंत्रण में रखता हो। रामजी के प्रति सीताजी के आकर्षण हुआ और शूर्पणखा के भी, किंतु जिसने मन को नियंत्रित नहीं किया–

होइ बिकल सक मनहि न रोकी। जिमि रबिमनि द्रव रबिहि बिलोकी।। (3/17/6)

वह असफल हो गई और जिन्होंने मन पर नियंत्रण पाया उन्होंने राम को पा लिया। हो सकता है कि कभी–कभी अभिभावक के निर्णय खटकने लगें इसका ये अर्थ नहीं कि भटक जाएँ। गोस्वामीजी ने शूर्पणखा की इस स्वच्छंदता को स्वतंत्रता से संबोधित किया है जबकि आजकल के बुद्धिजीवी लोग आपत्ति करते हैं–

महाबृष्टि चलि फूटि किआरीं। जिमि सुतंत्र भएँ बिगरहिं नारीं।। (4/15/7)

यहाँ सुतंत्र से स्वच्छंदता है। सीताजी को अपने पिता के वचन के प्रति सम्मान है, वे कोई साधारण स्त्री नहीं हैं फिर भी उन्होंने अपने को पिता के अधीन माना, 'फिरी अपनपउ पितु बसजाने' (1/234/8), तो राम की प्राप्ति हुई। मन कहता है कि पिताजी ने जो निर्णय लिया है वह सही नहीं है इसलिए उसे मत मानो, किंतु विवेक ने निर्णय लिया कि जो पिताजी का निर्णय है वह सही होगा और सीताजी ने यही किया। बस यही मर्यादा की लक्ष्मण रेखा के कारण सीता, सीता हैं, और शूर्पणखा, शूर्पणखा है।

मूदें आँखि कतहुँ कोउ नाहीं

पं. डॉ. रामगोपाल तिवारी, 'मानस रत्न' द्वारा संचालित 'मानस चिन्तन चैनल' से साभार, ग्रा.–निवादा, जिला–बाँदा (उ.प्र.), फोनः 9451142792

श्रीरामचरितमानस में श्री परशुराम–लक्ष्मण संवाद एक विनोदप्रिय प्रसंग के रूप में जाना जाता है, परन्तु इसमें वर्णित तथ्यों पर यदि आध्यात्मिक दृष्टि से चिन्तन करें तो कई कल्याणकारी सूत्र प्राप्त होते हैं। ऐसे ही एक सूत्र पर इस आलेख में चर्चा की जा रही है।

धनुष–भंग के पश्चात् श्री परशुराम अत्यधिक क्रोधित होकर महाराज जनक से पूछते हैं कि यह शिव धनुष किसने तोड़ा है, उसे तुरंत दिखाओ अन्यथा जहाँ तक तुम्हारा राज्य है सारी पृथ्वी को ही उलट दूँगा। जब किसी ने कोई उत्तर देने का साहस नहीं किया, तब श्रीरामजी बोले कि हे नाथ! जिसने यह धनुष तोड़ा होगा वह तो आपका ही कोई दास होगा।

यह सुनकर परशुरामजी कहते हैं कि हे राम! सुनो, जिसने यह धनुष तोड़ा है वह सहस्रबाहु के समान मेरा शत्रु है। भला सेवक शत्रुता का ऐसा कार्य क्यों करेगा। इस पर श्रीलक्ष्मणजी तुरंत बोल पड़े कि हमने तो बालपन में बहुत से धनुष तोड़े हैं, पर आपने तो कभी क्रोध नहीं किया। इस पर परशुरामजी कुछ बोलते हैं और तब इस संवाद का सिलसिला प्रारंभ हो जाता है। जब बहुत गरमा–गर्मी हो जाती है, तब परशुरामजी क्रोधित होकर कहते हैं कि इस हठी बालक को मेरी आँखों से ओझल कर दो, यदि आप सभी अपना कल्याण चाहते हो। इस पर लक्ष्मणजी विहँसते हुए मन में विचार करते हैं कि अपनी आँख मूँद लेने पर कहीं कुछ भी दिखाई नहीं देता है।

बिहसे लखनु कहा मन माहीं। मूँदें आँखि कतहुँ कोउ नाहीं।। (1/280/8)

आँख मूँद लेने का आध्यात्मिक भाव यह है कि हमने ईश्वर की सत्ता पर विश्वास कर लिया है। सामान्यतया यह कहा जाता है कि देख–सुन कर निर्णय लीजिए, किंतु जिस पर विश्वास हो जाता है उसे हम आँख मूँदकर स्वीकार कर लेते हैं। व्यावहारिक दृष्टि से हम जिस पर विश्वास करते हैं उसकी बात आँख मूँदकर मान लेते हैं। कल्पना कीजिए कि कोई प्रतिष्ठित दुकान है जहाँ का सामान गुणवत्तापूर्ण होता है और जब हम उस दुकान पर जाते हैं और किसी परिचित से पूछते हैं कि अमुक दुकान में अमुक सामान मिल रहा है, आपकी क्या राय है, तब वे यही कहेंगे कि आँख मूँदकर ले लो अर्थात् विश्वास करके ले लो।

श्रीरामचरितमानस में विश्वास के प्रतीक स्वरूप आँख मूँदने के 4 प्रसंग हैं जिनका क्रमवार वर्णन इस प्रकार से है–

(1) सतीजी द्वारा आँख मूँदनाः

एक बार त्रेतायुग में शंकरजी सतीजी के साथ कुंभज ऋषि के आश्रम में श्रीराम कथा

सुनने के लिए गए। शिवजी ने श्रीराम कथा सुनकर परमसुख प्राप्त किया, किंतु सतीजी ने ध्यान से कथा नहीं सुनी। कैलाश लौटते समय शिवजी ने श्रीरामजी को सीता–हरण के पश्चात् विरह–लीला करते हुए देखा, तो अति प्रसन्न हुए। कुअवसर समझकर पास नहीं गए, पर दूर से ही 'जय सच्चिदानंद' कहकर प्रणाम किया। सतीजी ने देखा कि अपनी पत्नी के विरह में जो इस तरह विलख रहा है वह ब्रह्म कैसे हो सकता है। शिवजी के बहुत समझाने पर भी जब वे नहीं मानी, तब शिवजी ने कहा कि यदि तुम्हारे मन में संदेह है तो जाकर परीक्षा कर लो। सतीजी जाती हैं और सीताजी का वेश धारण करके श्रीरामजी के सम्मुख खड़ी हो जाती हैं। अन्तर्यामी श्रीरामजी सतीजी का कपट वेश समझ जाते हैं और व्यंगात्मक भाव से पूछते हैं कि माते! आप इस वन में अकेले क्यों विचरण कर रही हो, शिवजी कहाँ पर हैं। यह सुनकर सतीजी समझ गईं कि सचमुच ये ब्रह्म का अवतार हैं और वे बहुत दुखी होकर पछताते हुए लौट जाती हैं। वे विचार करती हैं कि मैं शंकरजी को क्या उत्तर दूँगी। श्रीरामजी सतीजी का पछतावा समझ जाते हैं और अपना प्रभाव दिखाने के लिए यह लीला करते हैं–

सतीं दीख कौतुकु मग जाता। आगें रामु सहित श्री भ्राता।।
फिरि चितवा पाछें प्रभु देखा। सहित बंधु सिय सुंदर बेषा।।(1/54/4–5)
पूजहिं प्रभुहि देव बहु बेषा। राम रूप दूसर नहिं देखा।।
अवलोके रघपुति बहुतेरे। सीता सहित न बेष घनेरे।।(1/55/3–4)

यह दृश्य देखकर, विशेषकर यह कि श्रीराम, लक्ष्मण और सीता का एक ही रूप है जबकि भिन्न–भिन्न देवता अलग–अलग वेश में थे, सतीजी का हृदय भय से काँपने लगा। अब उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया कि श्रीरामजी निश्चित रूप से ब्रह्म का अवतार हैं और विश्वासस्वरूप आँख मूँदकर मार्ग में ही बैठ जाती हैं। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

हृदय कंप तन सुधि कछु नाहीं। नयन मूदि बैठीं मग माहीं।।
बहुरि बिलोकेउ नयन उघारी। कछु न दीख तहँ दच्छकुमारी।।(1/55/6–7)

इस प्रकार से श्रीरामजी का प्रभाव देखकर सतीजी ने विश्वास के प्रतीक स्वरूप अपने नेत्र बंद कर लिए थे।

(2) माता कौसल्या द्वारा आँख मूँदना:

एक बार माता कौसल्या ने शिशु रामजी को नहलाकर तथा शृंगार करके पालने में लिटा दिया, तत्पश्चात् स्नान करके इष्टदेव (भगवान विष्णु) के पूजन हेतु पकवान बनाए और प्रसाद अर्पण करके पुनः पाकशाला में आ गईं। इसके बाद वे पुनः पूजा ग्रह में गईं और देखा कि शिशु रामजी प्रसाद पा रहे हैं। उन्हें आश्चर्य हुआ कि वे पालने से नीचे कैसे उतरे, किसने उन्हें पालने से नीचे उतारा, अतः वे दौड़कर पालने के पास आईं तो देखा कि शिशु रामजी तो पालने में सो रहे हैं। उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वे अति गंभीर मुद्रा में आकर पूजा गृह में देखती हैं कि शिशु रामजी प्रसाद पा रहे हैं। अब तो वे बहुत व्याकुल हो

गईं कि यह क्या रहस्य है। माता की व्याकुलता समझकर श्रीरामजी ने अपने मुख में उन्हें अपना विराट रूप दिखाया। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा। मतिभ्रम मोर कि आन बिसेषा।।
देखि राम जननी अकुलानी। प्रभु हँसि दीन्ह मधुर मुसुकानी।। (1/201/7–8)

देखरावा मातहि निज अद्भुत रूप अखंड।
रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मंड।। (1/201)

श्रीरामजी ने अपने मुख में अगणित रवि, शशि, शिव, ब्रह्मा आदि देवगण और अगणित पृथ्वी, सिंधु आदि दिखाए। यह दृश्य देखकर माता कौसल्या पुलकित होकर प्रार्थना करना चाहती हैं, पर उनके मुख से वचन नहीं निकल रहे हैं। विश्वासस्वरूप उन्होंने अपने नेत्र बंद कर लिए, तब श्रीरामजी पुनः शिशु रूप में आ गए।

तन पुलकित मुख बचन न आवा। नयन मूदि चरननि सिरु नावा।
बिसमयवंत देखि महतारी । भए बहुरि सिसुरूप खरारी।।(1/202/5–6)

(3) वानरों द्वारा आँखें मूँदना:

सीतान्वेषण हेतु सुग्रीव ने दक्षिण दिशा की ओर जाने वाले दल के नेतृत्व का प्रभार अंगदजी को दिया। इस दल में श्रीजामवान् एवं हनुमानजी भी थे। वन–बीहड़, गिरि–कंदरा आदि देखते हुए वानर दल जब प्यास से व्याकुल हो गया, तब श्रीहनुमानजी ने एक शिखर पर चढ़कर जलस्रोत की खोज के उद्देश्य से देखा कि एक गुफा से पक्षी और हंस निकल रहे हैं और कुछ प्रवेश कर रहे हैं। उन्होंने अनुमान लगाया कि इस गुफा के अन्दर जलस्रोत होगा। सभी वानरों को वे उस गुफा के समीप ले गए और यह निर्णय लिया गया कि गुफा के अन्दर प्रवेश किया जाए। सभी वानर गुफा के अन्दर जाकर आश्चर्य चकित होकर देखते हैं कि वहाँ पर एक मंदिर है जिसमें एक तेजपुंज नारी विराजमान हैं। उनका नाम स्वयंप्रभा है। गुफा के अंदर फलदार वृक्षों का बगीचा और सरोवर भी था। सभी ने स्वयंप्रभा को प्रणाम किया और अपने लक्ष्य को बताया। उन्होंने कहा सुंदर फल खाकर जलपान करो। जब सभी वानर तृप्त हो गए, तब स्वयंप्रभा ने उन्हें समझाया कि तुम दृढ़ विश्वास रखो कि तुम सीताजी का पता लगा लोगे। अब तुम लोग विश्वासस्वरूप अपने–अपने नेत्र बंद कर लो। सभी ने नेत्र बंद कर लिए और जब नेत्र खोले तब स्वयंप्रभा के तप–प्रताप से अपने को समुद्र तट पर पाया। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

मूदहु नयन बिबर तज जाहू। पैहहु सीतहि जनि पछिताहू।।
नयन मूदि पुनि देखहिं बीरा। ठाढ़े सकल सिंधु कें तीरा।। (4/25/5–6)

वानर दल हताश हो चुका था, किंतु स्वयंप्रभा के समझाने पर उन्होंने विश्वासस्वरूप आँखें मूँदीं और वे समुद्र तट पर पहुँच गए, क्योंकि यही मार्ग था लंका जाने का, जहाँ पर

रावण की अशोक वाटिका में सीताजी कैद थीं। आगे का मार्ग जटायु का भाई गीध संपाती प्रशस्त करता है।

(4) काकभुशुंडिजी द्वारा आँख मूँदनाः

अखिल ब्रह्माण्ड नायक सगुण स्वरूप भगवान श्रीराम की बाल–लीलाओं का दर्शन करने हेतु भक्तराज काकभुशुंडिजी अयोध्या में थे। वे नित्य भगवान की लीलाओं को देखकर आनंदित हो रहे थे, पर एक दिन उन पर भगवान की माया के प्रभाव से वे विचार करने लगे–

प्राकृत सिसु इव लीला देखि भयउ मोहि मोह।
कवन चरित्र करत प्रभु चिदानंद संदोह।। (7/77ख)

श्रीरामजी ने भ्रम से चकित देखकर काकभुशुंडिजी को पकड़ने के लिए अपनी नन्ही सी भुजा पसारी तो वे उड़ चले। गरुड़जी को यह प्रसंग सुनाते हुए काकभुशुंडिजी कहते हैं कि मैं अपनी शक्ति के अनुसार उड़ता गया, यहाँ तक कि ब्रह्मलोक तक उड़ा, परन्तु पीछे देखा तो श्रीरामजी की भुजा और मुझमें मात्र दो अंगुल का अंतर था। यह दो अंगुल का अंतर जीव और ब्रह्म के बीच के अंतर का प्रतीक है। ब्रह्म और जीव के बीच की दूरी दो अंगुल ही तो है, क्योंकि माया स्वरूप भी तो दो अर्थात् 'मैं और मोर' है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

मैं अरु मोर तोर तैं माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया।। (3/15/2)

यहाँ पर 'मैं अरु मोर' तो माया है, पर 'तोर तैं' माया से बचने का उपाय है– उदाहरणार्थ यदि आप कहें कि यह अमुक विशेष कार्य मैंने किया है तो कई प्रतिद्वन्द्वी खड़े हो जाएँगे, परन्तु यदि यह कहा जाए कि यह तुमने ही किया है, मैं तो केवल निमित्त मात्र था, तब कोई समस्या नहीं है। वेदान्त में भी माया का स्वरूप इसी प्रकार दो के रूप में अर्थात् 'अहंता और ममता' वर्णित है। अहंता का आशय अहंकार से है और ममता का किसी प्राणि–पदार्थ–परिस्थिति में 'राग' हो जाने से है। ब्रह्म सुख तब तक नहीं प्राप्त हो सकता है जब तक अहंता–ममता का नाश न हो जाए। इस संदर्भ में भरतचरित्र का वर्णन करते हुए गोस्वामीजी लिखते हैं–

भरत प्रेमु तेहि समय जस तस कहि सकइ न सेषु।
कबिहि अगम जिमि ब्रह्मसुखु अह मम मलिन जनेषु।। (2/225)

'ममता' के संदर्भ में स्वयं श्रीरामजी कहते हैं कि मन में ममता स्वरूप पतले–पतले धागे दस स्थानों से बँधे हुए हैं। उन सभी को वहाँ से तोड़कर उन्हें बटकर एक मजबूत रस्सी बनाकर मन को मेरे पैर से बाँध दो तो इस दो अंगुल की माया की दूरी समाप्त हो जाएगी और जीव जो मेरा ही अंश है मुझे प्राप्त हो जाएगा, यथा–

जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परिवारा।।
सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनहिं बाँधि बरि डोरी।।(5/48/4–5)

लंका में जब हनुमानजी सीताजी के दर्शन के पश्चात् अशोक वाटिका उजाड़ देते हैं, तब मेघनाद उन्हें बंदी बनाकर रावण के दरबार में प्रस्तुत करता है। श्रीहनुमानजी के लिए दण्ड स्वरूप रावण यह आदेश देता है–

कपि कें ममता पूँछ पर सबहि कहउँ समुझाइ।
तेल बोरि पट बाँधि पुनि पावक देहु लगाइ।। (5/24)

हनुमानजी ने अपनी ममता स्वरूपा पूँछ को बहुत लम्बा कर दिया और जब आग लगाई गई, तब छोटी कर ली तथा उससे निबुककर लंका में आग लगा दी। इसका तात्पर्य यह है कि आवश्यकतानुसार ममता को बड़ा–छोटा कर लेना चाहिए। जिसकी ममता जितनी अधिक फैली हुई होती है, उतना ही व्यक्ति दुखी होता है। यह 'ममता' 'दाद' की तरह है कि जब उसमें खुजली की जाती है तब सुख का अनुभव होता है, किंतु बाद में जलन का भयंकर दुख सहना पड़ता है। श्रीरामचरितमानस में मानस रोगों में ममता को दाद का रोग कहा गया है, यथा–

ममता दादु कंडु इरषाई। हरष बिषाद गरह बहुताई।। (7/121/33)

जब काकभुशुंडि उड़ते–उड़ते थक जाते हैं, तब वे विश्वासस्वरूप अपनी आँख मूँद लेते हैं और फिर देखते हैं कि वे श्रीरामजी की उसी बाल–लीला का दर्शन कर रहे हैं।

मूदेउँ नयन त्रसित जब भयऊँ। पुनि चितवत कोसलपुर गयऊँ।।
मोहि बिलोकि राम मुसुकाहीं। बिहँसत तुरत गयउँ माहीं।। (7/80–1–2)

इस प्रकार से विश्वासस्वरूप नयन मूँदने से काकभुशुंडिजी का मोह दूर हुआ। सारांश स्वरूप आँख मूँदने का आशय ईश्वर की सत्ता में संशयरहित दृढ़ विश्वास से है।

लक्ष्य प्राप्ति में सबसे बड़ी बाधा

किसान के घर एक दिन उसका कोई परिचिते आया। उस समय वह घर पर नहीं था। उसकी पत्नी ने कहा–वह खेत पर गए हैं। मैं बच्चे को बुलाने के लिए भेजती हूँ। तब तक आप इंतजार करें। कुछ ही देर में किसान घर आ पहुँचा। उसके साथ उसका पालतू कुत्ता भी आया। कुत्ता जोरों से हाँफ रहा था। उसकी हालत देख, मिलने आए व्यक्ति ने किसान से पूछा–क्या तुम्हारा खेत बहुत दूर है? किसान ने कहा नहीं, लेकिन आप ऐसा क्यों पूछ रहे हैं? उस व्यक्ति ने कहा, मुझे आश्चर्य हो रहा है कि तुम और तुम्हारा कुत्ता दोनों साथ–साथ आए, लेकिन तुम्हारे चेहरे पर रंच मात्र थकान नहीं, जबकि कुत्ता बुरी तरह से हाँफ रहा है। किसान ने कहा–मैं और कुत्ता एक ही रास्ते से घर आए हैं। मेरा खेत भी कोई खास दूर नहीं है। मैं थका नहीं हूँ। मेरा कुत्ता थक गया है। इसका कारण यह है कि मैं सीधे रास्ते से चलकर घर आया हूँ, मगर कुत्ता अपनी आदत से मजबूर है। वह आसपास दूसरे कुत्तों को देखकर उनको भगाने के लिए उनके पीछे दौड़ता था और भौंकता हुआ वापस मेरे पास आ जाता था। अपनी आदत के अनुसार उसका यह क्रम जारी रहा, इसलिए वह थक गया है। देखा जाए तो यही स्थिति आज के इंसान की भी है।

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत)

स्थानीय कार्यालय : ए–447, सेक्टर–47, नोएडा–201 301
दूरभाष : 0120–4305457, 9811056467

वित्तीय वर्ष 2023–24 का आय–व्यय विवरण (राशि भारतीय रुपयों में)

क्र0सं0	आय विवरण	2023–24	क्र0सं0	व्यय विवरण	2023–24
1)	वर्ष के प्रथम दिन की स्थिति		1)	स्मारिका छपाई व्यय	58,543.00
	क) मियादी जमा खाता	2,30,000.00			
	ख) बैंक में चालू खाता	2,02,335.07			
	ग) नकद राशि	12,372.00			
2)	स्मारिका में विज्ञापन से प्राप्त राशि	54,900.00	2)	कुल आयकर भुगतान	3,501.00
3)	दान/आरती–मानस पाठ एवं सदस्यता शुल्क से प्राप्त राशि	1,07,128.00	3)	श्रीरामनवमी उत्सव एवं श्रीराम कथा आयोजन पर व्यय	39,100.00
4)	अन्य प्राप्तियाँ, आयकर रिफण्ड, बैंक ब्याज आदि	–	4)	टेलीफोन बिलों का भुगतान	9,738.36
5)	आयकर वापसी आवेदित (Applied for)	–	5)	विविध व्यय (बैंक चार्ज, डाक खर्च, वैबसाइट रखरखाव, संदेशवाहक पर खर्च आदि)	29,002.00
6)	प्रतिभूति वापसी (Security Refund)	–	6)	दान (Charity)	–
			7)	प्रतिभूति जमा	–
			8)	वर्ष के अंतिम दिन की स्थिति	
				क) मियादी जमा खाता	4,10,000.00
				ख) बैंक में चालू खाता	43,744.91
				ग) नकद राशि	13,105.80
	कुल योग	6,06,735.07		कुल योग	6,06,735.07

अध्यक्ष **महासचिव** **कोषाध्यक्ष** **कार्यकारी सदस्य** **चार्टर्ड लेखाकार**

*श्रीरामचरितमानस की प्रेरणाप्रद चौपाइयाँ *

जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।
राम बाम दिसि जानकी लखन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यानमय सुरतरु तुलसी तोर।।

बिनु सतसंग बिबेक न होई । राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।। (1/3/7)
बिधि बस सुजन कुसंगत परहीं। फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।। (1/3/9)
सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।। (1/8/2)
राम भगति भूषित जियँ जानी। सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी।। (1/9/7)
महाबीर बिनवउँ हनुमाना। राम जासु जस आप बखाना।। (1/17/10)
जपहिं नामु जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी।। (1/22/5)
राजा रामु अवध रजधानी। गावत गुन सुर मुनि बर बानी।। (1/25/6)
सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।। (1/26/6)
भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ। नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ।। (1/28/1)
मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती।। (1/28/3)
जन्म महोत्सव रचहिं सुजाना। करहिं राम कल कीरति गाना।। (1/34/8)
आवत एहिं सर अति कठिनाई। राम कृपा बिनु आइ न जाई।। (1/38/6)
जो नहाइ चह एहिं सर भाई। सो सतसंग करउ मन लाई।। (1/39/8)
राम राज सुख बिनय बड़ाई। बिसद सुखद सोइ सरद सुहाई।। (1/42/6)
बंदउँ बालरूप सोइ रामू। सब सिधि सुलभ जपत जिसु नामू।। (1/112/3)
मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।। (1/112/4)
जिन्ह हरिकथा सुनी नहिं काना। श्रवन रंध्र अहिभवन समाना।। (1/113/2)
जिन्ह हरिभगति हृदयँ नहिं आनी। जीवत सव समान तेइ प्रानी।। 1/113/5)
रामकथा सुंदर कर तारी। संसय बिहग उड़ावनिहारी।। (1/114/1)
राम ब्रह्म ब्यापक जग जाना। परमानंद परेस पुराना।। (1/116/8)
आदि अंत कोउ जासु न पावा। मति अनुमानि निगम अस गावा।। (1/118/4)
बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु करम करइ बिधि नाना।। (1/118/5)
जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।। (1/121/6)
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।। (1/121/8)
जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मैं तोरा।। (1/132/7)
सीता राम चरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरे ।। (2/205/2)
प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।। (5/5/1)
दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।। (5/27/4)

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।। (7/21/1)
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।। (7/21/2)
राम भगति रत नर अरु नारी। सकल परम गति के अधिकारी।। (7/21/4)
बड़े भाग पाइब सतसंगा। बिनहिं प्रयास होहिं भव भंगा।। (7/33/8)
पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधभाई।। (7/41/1)
बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।। (7/43/7)
भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी।। (7/45/5)
सरल सुभाव न मन कुटिलाई। जथा लाभ संतोष सदाई।। (7/46/2)
हनूमान सम नहिं बड़भागी। नहिं कोउ राम चरन अनुरागी।। (7/50/8)
राम चरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं।। (7/53/1)
ऐसेहिं हरि बिनु भजन खगेसा। मिटइ न जीवन्ह केर कलेसा।। (7/79/1)

* बालकाण्ड *

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारु।। 31।।

रामचरित चिंतामनि चारू । संत सुमति तिय सुभग सिंगारू।।
जग मंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के।।
सदगुर ग्यान बिराग जोग के। बिबुध बैद भव भीम रोग के।।
जननि जनक सिय राम प्रेम के। बीज सकल ब्रत धरम नेम के।।
समन पाप संताप सोक के। प्रिय पालक परलोक लोक के।।
सचिव सुभट भूपति बिचार के। कुंभज लोभ उदधि अपार के।।
काम कोह कलिमल करिगन के। केहरि सावक जन मन बन के।।
अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दवारि के।।
मंत्र महामनि बिषय ब्याल के। मेटत कठिन कुअंक भाल के।।
हरन मोह तम दिनकर कर से। सेवक सालि पाल जलधर से।।
अभिमत दानि देवतरु बर से। सेवत सुलभ सुखद हरि हर से।।
सुकबि सरद नभ मन उडगन से। रामभगत जन जीवन धन से।।
सकल सुकृत फल भूरि भोग से। जग हित निरुपधि साधु लोग से।।
सेवक मन मानस मराल से। पावन गंग तरंग माल से।।

कुपथ कुतरक कुचालि कलि कपट दंभ पाषंड।
दहन राम गुन ग्राम जिमि इंधन अनल प्रचंड।। 32 (क)।।
रामचरित राकेस कर सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन कुमुद चकोर चित हित बिसेषि बड़ लाहु।। 32 (ख)।।

सत पंच चौपाई मनोहर (1/198 से 199)

सत

काम कोटि छबि स्याम सरीरा। नील कंज बारिद गंभीरा।।
अरुन चरन पंकज नख जोती। कमल दलन्हि बैठे जनु मोती।।
रेख कुलिस ध्वज अंकुस सोहे। नुपूर धुनि सुनि मुनि मन मोहे।।
कटि किंकिनी उदर त्रय रेखा। नाभि गभीर जान जेहिं देखा।।
भुज बिसाल भूषन जुत भूरी। हियँ हरि नख अति सोभा रूरी।।
उर मनिहार पदिक की सोभा। बिप्र चरन देखत मन लोभा।।
कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई। आनन अमित मदन छबि छाई।।

पंच

दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे। नासा तिलक को बरनै पारे।।
सुंदर श्रवन सुचारु कपोला। अति प्रिय मधुर तोतरे बोला।।
चिक्कन कच कुंचित गभुआरे। बहु प्रकार रचि मातु सँवारे।।
पीत झगुलिया तनु पहिराई। जानु पानि बिचरनि मोहि भाई।।
रूप सकहिं नहिं कहि श्रुति सेषा। सो जानइ सपनेहुँ जेहिं देखा।।

-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x--x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x--x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x

मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई। भजत कृपा करिहहिं रघुराई।। (1/200/6)
प्रातकाल उठि कै रघुनाथा । मातु पिता गुरु नावहिं माथा।। (1/205/7)
जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू।। (1/259/6)
जिन्ह कर नामु लेत जग माहीं। सकल अमंगल मूल नसाहीं।। (1/315/1)
करतल होहिं पदारथ चारी। तेइ सिय रामु कहेउ कामारी।। (1/315/2)
नाथ सकल संपदा तुम्हारी। मैं सेवकु समेत सुत नारी।। (1/360/6)
मोरें सबइ एक तुम्ह स्वामी। दीनबंधु उर अंतरजामी।। (2/72/6)
सखा परम परमारथु एहू। मन क्रम बचन राम पद नेहू।। (2/93/6)
राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अबिगत अलख अनादि अनूपा।। (2/93/7)
जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भवसिंधु अपारा।। (2/101/3)
कर नित करहिं राम पद पूजा। राम भरोस हृदयँ नहिं दूजा।। (2/129/4)
रामहि केवल प्रेमु पिआरा। जानि लेउ जो जाननिहारा।। (2/137/1)
राम राम कहि जे जमुहाहीं। तिन्हहि न पाप पुंज समुहाहीं।। (2/194/5)
जोरि पानि बर मागउँ एहू। सीय राम पद सहज सनेहू।। (2/197/8)
नाथ सकल साधन मैं हीना। कीन्ही कृपा जानि जन दीना।। (3/8/4)
मम गुन गावत पुलक सरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा।। (3/16/11)
जाकर नाम मरत मुख आवा। अधमउ मुकुत होइ श्रुति गावा।। (3/31/6)

यह कलिकाल मलायतन मन करि देखु बिचार।
श्रीरघुनाथ नाम तजि नाहिन आन अधार।। (6/121ख)

परहित बस जिन्ह के मन माहीं। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं।। (3/31/9)
कोमल चित अति दीनदयाला। कारन बिनु रघुनाथ कृपाला।। (3/33/1)
सुनहु उमा ते लोग अभागी। हरि तजि होहिं बिषय अनुरागी।। (3/33/3)
उमा कहउँ मैं अनुभव अपना। सत हरि भजनु जगत सब सपना।। (3/39/5)
राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका।। (3/42/8)
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला। हेतु रहित परहित रत सीला।। (3/46/7)
अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँती। सब तजि भजनु करौं दिन राती।। (4/7/21)
देह धरे कर यह फलु भाई। भजिअ राम सब काम बिहाई।। (4/23/6)
सोइ गुनग्य सोई बड़भागी। जो रघुबीर चरन अनुरागी।। (4/23/7)
पापिउ जा कर नाम सुमिरहीं। अति अपार भवसागर तरहीं।। (4/29/3)
पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना।। (4/30/4)
गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।। (5/5/2)
गरुड़ सुमेरु रेनु सम ताही। राम कृपा करि चितवा जाही।। (5/5/3)
अब मोहि भा भरोस हनुमंता। बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता।। (5/7/4)
राम बिमुख संपति प्रभुताई। जाइ रही पाई बिनु पाई।। (5/23/5)
कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई। जब तव सुमिरन भजन न होई।। (5/32/3)
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।। (5/40/6)
अति कोमल रघुबीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ।। (5/57/5)
मोरें तुम्ह प्रभु गुरु पितु माता। जाउँ कहाँ तजि पद जलजाता।। (7/18/4)
निज अनुभव अब कहउँ खगेसा। बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा।। (7/89/5)
स्वारथ साँच जीव कहुँ एहा। मन क्रम बचन राम पद नेहा।। (7/96/1)
सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा। जो तनु पाइ भजिअ रघुबीरा।। (7/96/2)
एहिं कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।। (7/130/5)
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि। संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।। (7/130/6)

बारि मथें घृत होइ बरु सिकता ते बरु तेल।
बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिद्धांत अपेल।। (7/122ख)

श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र

श्रीरामचरितमानस एक महाकाव्य ही नहीं, बल्कि अखिल ब्रह्माण्ड नायक भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार है। इसकी चौपाइयाँ, दोहे आदि सशक्त मंत्रों का संकलन है। इसकी चौपाइयाँ, दोहे, सोरठे सभी सरल मंत्र हैं। संस्कृत के मंत्र कठिन होते हैं, इससे हर व्यक्ति को उनके उच्चारण में सुगमता नहीं होती, इसलिये जापक का मन उनमें पूरा नहीं लगता। साबर–मंत्र रूखे और कठिन शब्दावली से भरे होते हैं। उनमें भी मन नहीं लगता, परन्तु श्रीरामचरितमानस के ये मंत्र सरल, सरस और सार्थक हैं। जापक इनमें तन्मय हो जाता है। इच्छाशक्ति तल्लीन हो जाती है। इससे मनवांछित फल शीघ्र प्राप्त होता है।

रक्षा–रेखा :

मन्त्र सिद्ध करने के लिये या किसी संकटपूर्ण जगह पर रात्रि व्यतीत करने के लिये अपने चारों ओर रक्षा की रेखा खींच लेनी चाहिए। लक्ष्मणजी ने सीताजी की कुटी के आसपास जो रक्षा रेखा खींची थी, उसी लक्ष्य पर निम्नांकित रक्षा–मन्त्र बनाया गया है। इसे एक सौ आठ आहुति द्वारा सिद्ध कर लेना चाहिए।

मामभिरक्षय रघुकुलनायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक।। (मानस 7/115/छंद)

इन मंत्रों को सिद्ध करके उनका जप करना अथवा मानस पाठ करते समय दोहा/सोरठा एवं चौपाइयों के बीच संपुट लगाने से इष्ट फल की अवश्य ही प्राप्ति होती है। मंत्र सिद्ध करने के लिए उपयुक्त मुहूर्त में रात्रि 10 बजे के बाद अष्टांग हवन सामग्री से इष्ट चौपाई अथवा दोहा/सोरठा से 108 आहुतियाँ देनी चाहिए। अष्टांग हवन सामग्री में चन्दन का बुरादा, तिल, शुद्ध घी, शक्कर, अगर, तगर, कपूर, शुद्ध केशर, नागर मोथा, पंच मेवा, जौ और चावल आते हैं। एक दिन हवन करने से मंत्र सिद्ध हो जाता है। इसके बाद जब तक कार्य सफल न हो, तब तक उस मंत्र (दोहा/चौपाई आदि) का प्रतिदिन कम से कम एक सौ आठ बार प्रातःकाल या रात्रि को जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिए, पर किसी भी स्थिति में 21 बार से कम जप न हो, इसका ध्यान रखें। सामान्यतया सवा लाख जप किया जाता है, पर इससे पहले ही यदि कार्य सिद्ध हो जाए, तब भी अनुष्ठान पूरा करना चाहिए और जीवन पर्यन्त उस मंत्र को रोज स्मरण कर लेना चाहिए, ताकि मंत्र सिद्ध रहे।

इस सम्बन्ध में निम्नांकित नियम महत्त्वपूर्ण हैं :

1. पूर्ण श्रद्धा–विश्वास एवं समर्पण भाव से जप करें।

2. वाराणसी में भगवान शंकरजी ने मानस की चौपाइयों को मन्त्र शक्ति प्रदान की है, इसलिये वाराणसी की ओर मुख करके शंकरजी को साक्षी मानकर श्रद्धा से जप करना चाहिये।

3. जिस उद्देश्य के लिये जो चौपाई, दोहा या सोरठा जप करना बताया गया है, उसको सिद्ध करने के लिये अष्टांग हवन की सामग्री से उसी चौपाई, दोहे या सोरठे के द्वारा 108 आहुतियाँ देनी चाहिये। यह हवन केवल एक ही दिन करना है। शुद्ध मिट्टी की वेदी बनाकर उस पर अग्नि स्थापित करके उसमें आहुति देनी चाहिये। प्रत्येक आहुति के साथ चौपाई, दोहा, सोरठा आदि के अन्त में 'स्वाहा' बोलना चाहिये।

4. प्रत्येक आहुति लगभग 10 ग्राम की (सब चीजें मिलाकर) होनी चाहिये। इस हिसाब से 108 आहुति के लिये लगभग एक किलोग्राम सामग्री सब चीजें मिलाकर बना लेनी चाहिये। कोई चीज कम–ज्यादा हो तो कुछ आपत्ति नहीं। पंचमेवा में पिस्ता, बादाम, किशमिश (द्राक्षा), अखरोट और काजू ले सकते हैं। इनमें से कोई चीज न मिले तो उसके बदले में मिसरी मिला सकते हैं।
   केसर शुद्ध 3 ग्राम ही डालने से काम चल जायेगा, अधिक की आवश्यकता नहीं है।

5. हवन करते समय माला रखने की आवश्यकता एक सौ आठ की संख्या गिनने भर के लिये है। माला रखने में असुविधा हो तो गेहूँ, जौ या चावल आदि के 108 दाने रखकर उनसे गिनती की जा सकती है। करमाला का भी उपयोग कर सकते हैं।

6. बैठने के लिये आसन ऊन का अथवा कुशा का होना चाहिये।

7. मन्त्र सिद्ध करने के लिये यदि लंकाकाण्ड की चौपाई या दोहा हो तो उसका हवन शनिवार को करना चाहिये। दूसरे काण्डों की चौपाई–दोहे किसी भी दिन उपयुक्त मुहूर्त में हवन करके सिद्ध किये जा सकते हैं।

8. एक दिन हवन करने से ही मन्त्र सिद्ध हो जाता है। इसके बाद जब तक कार्य सफल न हो, तब तक उस मन्त्र (चौपाई–दोहे आदि) का प्रतिदिन कम से कम एक सौ आठ बार प्रातःकाल या रात्रि को, जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिये, अधिक कर सकें तो अधिक उत्तम। आप चाहें तो नियमित जप के अलावा भी दिनभर चलते–फिरते हुए उस चौपाई या दोहे का जप कर सकते हैं। जितना अधिक जप हो, उतना ही उत्तम है।

9. कोई दो तीन कार्यों के लिये दो तीन मन्त्रों का अनुष्ठान एक साथ करना चाहें तो कर सकते हैं, पर उन मन्त्रों को पहले अलग–अलग हवन करके सिद्ध कर लेना चाहिये। हवन के द्वारा एक ही दिन में दो या तीन मंत्रों को सिद्ध कर सकते हैं।

10. स्त्रियाँ भी इस अनुष्ठान को कर सकती हैं, परन्तु रजस्वला होने की स्थिति में मानसिक जप किया जा सकता है, पर इस अवस्था में हवन नहीं करना चाहिये।

11. जप करते समय मन में यह विश्वास अवश्य रखना चाहिये कि भगवान श्रीसीताराम की अहैतुकी कृपा से मेरा कार्य अवश्य सफल होगा। विश्वासपूर्वक जप करने पर सफलता निश्चित रूप से प्राप्त होगी।

12. अधिकांश मंत्र तथा उपर्युक्त नियम कल्याण के मासिक अंकों से लिए गए हैं।

13. जप करते समय यदि निम्नांकित बिन्दुओं का पालन करें तो सफलता शीघ्रता से प्राप्त होगी

(क) जप सूर्योदय से पूर्व करें।

(ख) पूर्व की ओर अथवा वाराणसी की ओर मुँह करके जप करें।

(ग) ऊन के आसन पर बैठें।

(घ) अपने सामने श्रीरामदरबार का चित्र रखें। एक लोटा जल अपने बाईं ओर रखें जिसे जप के पश्चात् किसी पौधे में डाल दें या सूर्य को अर्घ्य दें।

(ङ) अपने दाईं ओर घी का दीपक जलाकर रखें।

विभिन्न कामनाओं की प्राप्ति हेतु मानस के कुछ सिद्ध मंत्र इस प्रकार हैं–

1. **असमंजस की स्थिति में परम कल्याण हेतु**
जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मैं तोरा।। (1/132/7)
हे नाथ! जिस तरह मेरा हित हो, आप वही शीघ्र कीजिए। मैं आपका दास हूँ।
2. **शरणागत होकर संकट निवारणार्थ**
मोरें हित हरि सम नहिं कोऊ। एहि अवसर सहाय सोइ होऊ।। (1/132/2)
श्रीहरि के समान मेरा हितू भी कोई नहीं है, इसलिए इस समय वे ही मेरे सहायक हैं।
3. **सर्व मंगल कामना हेतु**
मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।। (1/112/4)
मंगल के धाम, अमंगल के हरने वाले और श्रीदशरथ के आँगन में खेलने वाले वे (बालरूप) श्रीरामचन्द्रजी मुझ पर कृपा करें।
4. **श्रेष्ठ भक्ति की कामना**
अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें। दीनदयाल अनुग्रह तोरें।। (2/102/7)
हे नाथ! हे दीनदयालु! आपकी कृपा से अब मुझे कुछ नहीं चाहिए।
5. **मानस का गायत्री मन्त्र**
जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।
ताके जुग पद कमल मनावउँ। जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ।।
(1/18/7–8)
राजा जनक की पुत्री, जगत की माता और करुणानिधान श्रीरामजी की प्रियतमा

श्रीजानकीजी के दोनों चरण कमलों को मैं मनाता हूँ, जिनकी कृपा से निर्मल बुद्धि पाऊँ।

6. **संकट नाश के लिए**

दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।। **(5/27/4)**

दीनों पर दया करना आपका विरद है (और मैं दीन हूँ), अतः उस विरद को याद करके, हे नाथ! मेरे भारी संकट को दूर कीजिए।

7. **जीविका प्राप्ति के लिए**

बिस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।। **(1/197/7)**

जो संसार का भरण–पोषण करते हैं, उन (आपके दूसरे पुत्र) का नाम 'भरत' होगा।

8. **लक्ष्मी प्राप्ति हेतु**

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं।।
तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ। धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ।।
(1/294/2–3)

जैसे नदियाँ समुद्र में जाती हैं, यद्यपि समुद्र को नदी की कामना नहीं होती। वैसे ही सुख और सम्पत्ति बिना ही बुलाए स्वाभाविक ही धर्मात्मा पुरुष के पास जाती हैं।

9. **शत्रुता नाश के लिए**

बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप बिषमता खोई।। **(7/20/8)**

कोई किसी से वैर नहीं करता। श्रीरामचन्द्रजी के प्रताप से सबकी विषमता (आन्तरिक भेदभाव) मिट गई।

10. **यात्रा की सफलता के लिए**

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।। **(5/5/1)**

अयोध्यापुरी के राजा श्रीरघुनाथजी को हृदय में रखे हुए नगर में प्रवेश करके सब काम कीजिए।

11. **परीक्षा में पास होने के लिए**

जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी। कबि उर अजिर नचावहिं बानी।। **(1/105/6)**
मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती।। **(1/28/3)**

अपना भक्त जानकर जिस कवि पर वे कृपा करते हैं, उसके हृदयरूपी आँगन में सरस्वती को वे नचाया करते हैं। वे (श्रीरामजी) मेरी (बिगड़ी) सब तरह से सुधार लेंगे, जिनकी कृपा, कृपा करने से नहीं अघाती।

12. **विद्या प्राप्ति के लिए**

गुरगृहँ गए पढ़न रघुराई। अलप काल बिद्या सब आई।। **(1/204/4)**

श्रीरघुनाथजी (भाइयों सहित) गुरु के घर में विद्या पढ़ने गए और थोड़े ही समय में सब विद्याएँ आ गयीं।

13. **आपसी सद्भाव (प्रेम) बढ़ाने के लिए**

सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।। (7/21/2)
सब मनुष्य परस्पर प्रेम करते हैं और वेदों में बतायी हुई नीति (मर्यादा) में तत्पर रहकर अपने–अपने धर्म का पालन करते हैं।

14. **विविध रोगों एवं उपद्रवों की शांति के लिए**
दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।। (7/21/1)
राम राज्य में दैहिक, दैविक और भौतिक ताप किसी को नहीं व्यापते।

15. **ईश्वर से अपराध क्षमा कराने के लिए**
अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता। छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता।।(1/285/6)
मैंने अनजाने में आपको बहुत से अनुचित वचन कहे। हे क्षमा के मंदिर दोनों भाई! मुझे क्षमा कीजिए।

16. **मन पसन्द वर की प्राप्ति हेतु**
सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।। (1/236/7)
हे सीता! हमारी सच्ची आसीस सुनो, तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।

17. **मन पसन्द वधू की प्राप्ति हेतु**
सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे।। (1/237/4)
मुनि ने दोनों भाइयों को आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे मनोरथ सफल हों। यह सुनकर श्रीराम–लक्ष्मण सुखी हुए।

18. **अपने इष्ट की प्राप्ति हेतु**
जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू।। (1/259/6)
जिसका जिस पर सच्चा स्नेह होता है, वह उसे मिलता ही है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

19. **विपत्ति नाश हेतु**
राजिवनयन धरें धनु सायक। भगत बिपति भंजन सुखदायक।।(1/18/10)
कमल नयन, धनुष–बाणधारी, भक्तों की विपत्ति का नाश करने वाले और उन्हें सुख देने वाले चरण–कमलों की वंदना करता हूँ।

20. **भूत–प्रेत भगाने हेतु**
प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।। (1/17)
मैं पवन कुमार श्रीहनुमानजी को प्रणाम करता हूँ, जो दुष्टरूपी वन को भस्म करने के लिए अग्निरूप हैं, जो ज्ञान की घनमूर्ति हैं और जिनके हृदयरूपी भवन में धनुष–बाण धारण किए श्रीरामजी निवास करते हैं।

21. **दरिद्रता नाश के लिए**
अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दबारि के।। (1/32/8)
शिवजी के पूज्य और प्रियतम अतिथि हैं और दरिद्रता रूपी दावानल को बुझाने के लिए

कामना पूर्ण करने वाले मेघ हैं।

22. **सन्तान प्राप्ति के लिए**

दसरथ पुत्रजन्म सुनि काना। मानहुँ ब्रह्मानंद समाना।। (1/193/3)
प्रेम मगन कौसल्या निसि दिन जात न जान।
सुत सनेह बस माता बालचरित कर गान।। (1/200)

राजा दशरथजी पुत्र का जन्म कानों से सुनकर मानो ब्रह्मानन्द में समा गए। प्रेम में मग्न कौसल्याजी रात और दिन का बीतना नहीं जानती थीं। पुत्र के स्नेहवश माता उनके बाल चरित्रों का गान किया करतीं।

23. **सुख सम्पत्ति प्राप्ति हेतु**

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख सम्पति नाना बिधि पावहिं।। (7/15/3)

जो मनुष्य सकाम भाव से सुनते और जो गाते हैं, वे अनेक प्रकार के सुख और सम्पत्ति पाते हैं।

24. **मुकदमा जीतने के लिए**

पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना।। (4/30/4)

तुम पवन के पुत्र हो और बल में पवन के समान हो। तुम बुद्धि–विवेक और विज्ञान की खान हो।

25. **शत्रु को मित्र बनाने हेतु**

गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।। (5/5/2)

श्रीराम कृपा से उसके लिए विष अमृत हो जाता है, शत्रु मित्रता करने लगते हैं, समुद्र गाय के खुर के बराबर हो जाता है और अग्नि में शीतलता आ जाती है।

26. **निन्दा निवृत्ति के लिए**

रामकृपाँ अवरेब सुधारी। बिबुध धारि भइ गुनद गोहारी।। (2/317/3)

श्रीरामजी की कृपा ने सारी उलझन सुधार दी। देवताओं की सेना जो लूटने आयी थी, वही गुणदायक (हितकारी) और रक्षक बन गयी।

27. **विघ्न विनाश के लिए**

सकल बिघ्न ब्यापहिं नहिं तेही। राम सुकृपाँ बिलोकहिं जेही।। (1/39/5)

सारे विघ्न उसको नहीं व्यापते (बाधा नहीं देते) जिसे श्रीरामचन्द्रजी सुन्दर कृपा की दृष्टि से देखते हैं।

28. **अकाल मृत्यु के निवारण हेतु**

नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट।। (5/30)

हनुमानजी ने कहा–आपका नाम दिन–रात पहरा देने वाला है, आपका ध्यान ही किवाड़

है। नेत्रों को अपने चरणों में लगाए रहती हैं, यही ताला है, फिर प्राण जाएँ तो किस मार्ग से?

29. **नजर झाड़ने के लिए**

स्याम गौर सुंदर दोउ जोरी। निरखहिं छबि जननीं तृन तोरी।। (1/198/5)

श्याम और गौर शरीर वाली दोनों सुन्दर जोड़ियों की शोभा देखकर माताएँ तृण तोड़ती हैं (जिसमें दीठ न लग जाए)।

30. **खोयी हुई चीज पुनः प्राप्त करने के लिए**

गई बहोर गरीब नेवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू।। (1/13/7)

प्रभु श्रीरघुनाथजी गयी हुई वस्तु को फिर प्राप्त कराने वाले, गरीब निवाज (दीनबन्धु), सरल स्वभाव, सर्वशक्तिमान और सबके स्वामी हैं।

31. **ऋद्धि–सिद्धि प्राप्त करने के लिए**

साधक नाम जपहिं लय लाएँ। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाएँ।। (1/22/4)

साधक लौ लगाकर नाम का जप करते हैं और अणिमादि (आठों) सिद्धियों को पाकर सिद्ध हो जाते हैं।

32. **उत्सव के अवसर प्राप्त करने के लिए**

सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं।
तिन्ह कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु।। (1/361)

श्रीसीताजी और श्रीरघुनाथजी के विवाह–प्रसंगों को जो लोग प्रेमपूर्वक गायेंगे–सुनेंगे, उनके लिए सदा उत्साह (आनन्द) ही उत्साह है, क्योंकि श्रीरामचन्द्रजी का यश मंगलधाम है।

33. **मंगलमय विदेश यात्रा हेतु**

चढ़ि रथ सीय सहित दोउ भाई। चले हृदयँ अवधहिं सिरु नाई।। (2/83/2)

सीताजी सहित दोनों भाई रथ पर चढ़कर हृदय से अयोध्या को सिर नवाकर चले।

34. **विरक्ति तथा श्रीसीताराम चरणों में प्रेम प्राप्ति के लिए**

भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय राम पद पेमु अवसि होइ भव रस बिरति।। (2/326)

तुलसीदासजी कहते हैं–जो कोई भरतजी के चरित्र को नियम से आदरपूर्वक सुनेंगे, उनको अवश्य ही श्रीसीतारामजी के चरणों में प्रेम होगा और सांसारिक विषय–रस से वैराग्य होगा।

35. **ज्ञान प्राप्ति के लिए**

छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा।। (4/11/4)

पृथ्वी, अग्नि, जल, आकाश और वायु इन पाँचों तत्त्वों से यह अत्यंत अधम शरीर रचा है।

36. **भक्ति की प्राप्ति के लिए**

भगत कल्पतरु प्रनत हित कृपा सिंधु सुख धाम।
सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम।। **(7/84 ख)**

हे भक्तों के (मन–इच्छित फल देने वाले) कल्प वृक्ष! हे शरणागत के हितकारी! हे कृपासागर! हे सुखधाम श्रीरामजी! दया करके मुझे अपनी वही भक्ति दीजिए।

37. **श्रीहनुमानजी को प्रसन्न करने के लिए**

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।। **(1/26/6)**

हनुमानजी ने पवित्र नाम का स्मरण करके श्रीरामजी को अपने वश में कर रखा है।

38. **श्रीसीतारामजी के दर्शन के लिए**

नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम।। (1/146)

भगवान के नीले कमल, नीलमणि और नीले (जलयुक्त) मेघ के समान (कोमल प्रकाशमय और सरस) श्यामवर्ण (चिन्मय) शरीर की शोभा देखकर करोड़ों कामदेव भी लजा जाते हैं।

39. **सहज स्वरूप दर्शन के लिए**

भगत बछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना।। (1/146/8)

भक्तवत्सल, कृपानिधान, सम्पूर्ण विश्व के निवास स्थान (या समस्त विश्व में व्यापक), सर्वसमर्थ भगवान प्रकट हो गए।

40. **भगवत्स्मरण करते हुए आराम से शरीर त्याग करने के लिए**

राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग।। (4/10)

श्रीरामजी के चरणों में दृढ़ प्रीति करके बालि ने शरीर को वैसे ही (आसानी से) त्याग दिया। जैसे हाथी अपने गले से फूलों की माला का गिरना न जाने।

41. **संशय निवृत्ति के लिए**

रामकथा सुंदर कर तारी। संसय बिहग उड़ावनिहारी।। (1/114/1)

श्रीरामचन्द्रजी की कथा हाथ की सुन्दर ताली है, जो संदेह रूपी पक्षियों को उड़ा देती है।

42. **प्रभु–प्रेम में निरन्तर वृद्धि के लिए**

सीता रामचरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें।। (2/205/2)

श्रीसीतारामजी के चरणों में मेरा प्रेम आपकी कृपा से दिन–दिन बढ़ता ही रहे।

43. **सुखद एवं ऐश्वर्यपूर्ण यात्रा के लिए**

चलत बिमान कोलाहल होई। जय रघुबीर कहइ सबु कोई। (6/119/3)

विमान के चलते समय बड़ा शोर हो रहा है। सब कोई श्रीरघुवीर की जय कह रहे हैं।

श्रीरामशलाका–प्रश्नावली

मानसानुरागी महानुभावों को श्रीरामशलाका–प्रश्नावली का विशेष परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती, उसकी महत्ता एवं उपयोगिता से प्रायः सभी मानस प्रेमी परिचित होंगे, अतः नीचे उसका स्वरूपमात्र अंकित करके उससे प्रश्नोत्तर निकालने की विधि तथा उसके उत्तर–फलों का उल्लेख कर दिया जाता है। श्रीरामशलाका–प्रश्नावली का स्वरूप इस प्रकार है–

सु	प्र	उ	बि	हो	मु	ग	ब	सु	नु	बि	घ	धि	इ	द
र	रु	फ	सि	सि	रहिं	बस	ही	मं	ल	न	ल	य	न	अं
सुज	सो	ग	सु	कु	म	स	ग	त	न	इ	ल	धा	बे	नो
त्य	र	न	कु	जो	म	रि	र	र	अ	की	हो	सं	रा	य
पु	सु	थ	सी	जे	इ	ग	म*	सं	क	रे	हो	स	स	नि
त	र	त	र	स	हुँ	ह	ब	ब	प	चि	स	हिं	स	तु
म	का	ा	र	र	म	मि	मी	म्हा	ा	जा	हू	हीं	ा	ा
ता	रा	रे	री	ह्व	का	फ	खा	जू	ई	र	रा	पू	द	ल
नि	को	जो	गो	न	मु	जि	यँ	ने	मनि	क	ज	प	स	ल
हि	रा	मि	स	रि	ग	द	न्मु	ख	म	खि	जि	म	त	जं
सिं	ख	नु	न	को	मि	निज	र्क	ग	धु	ध	सु	का	स	र
गु	ब	म	अ	रि	नि	म	ल	ा	न	ढ़	ती	न	क	भ
ना	पु	व	अ	ा	र	ल	ा	ए	तु	र	न	नु	वै	थ
सि	हुँ	सु	म्ह	रा	र	स	स	र	त	न	ख	ा	ज	ा
र	ा	ा	ला	धी	ा	री	ा	हू	हीं	खा	जू	ई	रा	रे

इस रामशलाका–प्रश्नावली के द्वारा जिस किसी को जब कभी अपने अभीष्ट प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने की इच्छा हो तो सर्वप्रथम उस व्यक्ति को भगवान् श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान करना चाहिये।

तदनन्तर श्रद्धा–विश्वास पूर्वक मन से अभीष्ट प्रश्न का चिन्तन करते हुए प्रश्नावली के मनचाहे कोष्ठक में अंगुली या कोई शलाका रख देनी चाहिये और उस कोष्ठक में जो अक्षर हो उसे अलग किसी कोरे कागज या स्लेट पर लिख लेना चाहिये। प्रश्नावली के कोष्ठक पर भी ऐसा कोई निशान लगा देना चाहिये, जिससे न तो प्रश्नावली गंदी हो और न प्रश्नोत्तर प्राप्त होने तक वह कोष्ठक भूल जायें। अब जिस कोष्ठक का अक्षर लिख लिया गया है, उससे आगे बढ़ना चाहिये तथा उसके नवें कोष्ठक में जो अक्षर पड़े, उसे भी लिख लेना चाहिये। इस प्रकार प्रति नवें अक्षर को क्रम से लिखते जाना चाहिये और तब तक लिखते जाना चाहिये, जब तक उसी पहले कोष्ठक के अक्षर तक अंगुली अथवा शलाका न पहुँच जाये। पहले कोष्ठक का अक्षर जिस कोष्ठक के अक्षर से नवाँ पड़ेगा, वहाँ तक पहुँचते–पहुँचते एक चौपाई पूरी हो जायेगी, ये प्रश्नकर्ता के अभीष्ट प्रश्न का उत्तर होगा। यहाँ इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि किसी–किसी कोष्ठक में केवल 'आ' की मात्रा (ा) और किसी–किसी कोष्ठक में दो–दो अक्षर हैं, अतः गिनते समय न तो मात्रा वाले कोष्ठक को छोड़ देना चाहिये और न दो अक्षरों वाले कोष्ठक को दो बार गिनना चाहिये। जहाँ मात्रा का कोष्ठक आवे, वहाँ पूर्वलिखित अक्षर के आगे मात्रा लिख लेनी चाहिये और जहाँ दो अक्षरों वाला कोष्ठक आवे, वहाँ दोनों अक्षर एक साथ लिख लेने चाहिये।

अब उदाहरण के तौर पर इस रामशलाका प्रश्नावली से किसी प्रश्न के उत्तर में एक चौपाई निकाल दी जाती है। पाठक ध्यान से देखें। किसी ने भगवान् श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान और अपने प्रश्न का चिन्तन करते हुए यदि प्रश्नावली के * इस चिह्न से संयुक्त 'म' वाले कोष्ठक में अँगुली या शलाका रखी और वह ऊपर बताये क्रम के अनुसार अक्षरों को गिन–गिनकर लिखता गया तो उत्तर स्वरूप यह चौपाई बन जायेगी–

हो इ है सो ई जो रा म * र चि रा खा । को क रि त र क ब ढ़ा व हिं सा षा ।।

यह चौपाई बालकाण्डान्तर्गत शिव और पार्वती के संवाद में है। प्रश्नकर्ता को इस उत्तर स्वरूप चौपाई से यह आशय निकालना चाहिये कि कार्य होने में संदेह है, अतः उसे भगवान् पर छोड़ देना श्रेयष्कर है।

1. सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में श्री सीताजी के गौरीपूजन के प्रसंग में है। गौरीजी ने श्रीसीताजी को आशीर्वाद दिया है।

फल– प्रश्नकर्ता का प्रश्न उत्तम है, कार्य सिद्ध होगा।

2. प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।।

स्थान– यह चौपाई सुन्दरकाण्ड में हनुमानजी के लंका में प्रवेश करने के समय की है।

फल– भगवान का स्मरण करके कार्यारम्भ करो, सफलता मिलेगी।

3. उघरहिं अंत न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड के आरम्भ में सत्संग वर्णन के प्रसंग में है।

फल– इस कार्य में भलाई नहीं है। कार्य की सफलता में संदेह है।

4. बिधि बस सुजन कुसंगत परहीं। फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।।

स्थान– यह चौपाई भी बालकाण्ड के आरम्भ में ही सत्संग वर्णन के प्रसंग की है।

फल– खोटे मनुष्यों का संग छोड़ दो। कार्य पूर्ण होने में संदेह है।

5. मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में संत–समाज रूपी तीर्थ के वर्णन में है।

फल– प्रश्न उत्तम है। कार्य सिद्ध होगा।

6. गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।।

स्थान– यह चौपाई श्रीहनुमानजी के लंका में प्रवेश करने के समय की है।

फल– प्रश्न बहुत श्रेष्ठ है। कार्य सफल होगा।

7. बरुन कुबेर सुरेस समीरा। रन सन्मुख धरि काहुँ न धीरा।।

स्थान– यह चौपाई लंकाकाण्ड में रावण की मृत्यु के पश्चात् मन्दोदरी के विलाप के प्रसंग में है।

फल– कार्य पूर्ण होने में संदेह है।

8. सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में पुष्प वाटिका से पुष्प लाने पर विश्वामित्रजी का आशीर्वाद है।

फल– प्रश्न बहुत उत्तम है। कार्य सिद्ध होगा।

इस प्रकार रामशलाका–प्रश्नावली से कुल नौ चौपाइयाँ बनती हैं; जिनमें सभी प्रकार के प्रश्नों के उत्तर सन्निहित हैं।

अहंकार में तीनों गए धन, वैभव और वंश
विश्वास न हो तो देख लें कथा रावण, कौरव और कंस।

संस्कार ही अपराध रोक सकते हैं, सरकार नहीं।

विक्रम संवत् 2082(सन् 2025–26) की प्रमुख तिथियाँ : एक दृष्टि में

मास / पक्ष	गणेशचतुर्थी	एकादशीव्रत (स्मार्त)	प्रदोषव्रत	मास शिवरात्रि	अमावस्या	व्रत की पूर्णिमा	संक्रान्ति
चैत्र शुक्ल		08.04.2025	10.04.2025			12.04.2025	
वैशाख कृष्ण	16.04.2025	24.04.2025	25.04.2025	26.04.2025	27.04.2025		13.04.2025
वैशाख शुक्ल		08.05.2025	09.05.2025			10.06.2025	
ज्येष्ठ कृष्ण	16.05.2025	23.05.2025	24.05.2025	25.05.2025	27.05.2025		14.05.2025
ज्येष्ठ शुक्ल		06.06.2025	08.06.2025			10.07.2025	
आषाढ़ कृष्ण	14.06.2025	21.06.2025	23.06.2025	23.06.2025	25.06.2025		15.06.2025
आषाढ़ शुक्ल		06.07.2025	08.07.2025			08.08.2025	
श्रावण कृष्ण	14.07.2025	21.07.2025	22.07.2025	23.07.2025	24.07.2025		16.07.2025
श्रावण शुक्ल	28.07.2025	05.08.2025	06.08.2025			07.09.2025	
भाद्रपद कृष्ण	12.08.2025	19.08.2025	20.08.2025	21.08.2025	23.08.2025		16.08.2025
भाद्रपद शुक्ल	27.08.2025	03.09.2025	05.09.2025			06.10.2025	
आश्विन कृष्ण	10.09.2025	17.09.2025	19.09.2025	20.09.2025	21.09.2025		16.09.2025
आश्विन शुक्ल		03.10.2025	04.10.2025			05.11.2025	
कार्तिक कृष्ण	10.10.2025	17.10.2025	18.10.2025	19.10.2025	21.10.2025		17.10.2025
कार्तिक शुक्ल		01.11.2025	03.11.2025			04.12.2025	
मार्गशीर्ष कृष्ण	08.11.2025	15.11.2025	17.11.2025	18.11.2025	20.11.2025		16.11.2025
मार्गशीर्ष शुक्ल	24.11.2025	01.12.2025	02.12.2025			02.01.2026	
पौष कृष्ण	07.12.2025	15.12.2025	17.12.2025	18.12.2025	20.12.2025		15.12.2025
पौष शुक्ल		30.12.2025	01.01.2026			01.02.2026	
माघ कृष्ण	06.01.2026	14.01.2026	16.01.2026	17.01.2026	18.01.2026		14.01.2026
माघ शुक्ल		29.01.2026	30.01.2026				
फाल्गुन कृष्ण	05.02.2026	13.02.2026	14.02.2026	15.02.2026	17.02.2026	20.03.2026	12.02.2026
फाल्गुन शुक्ल		27.02.2026	01.03.2026				
चैत्र कृष्ण	06.03.2026	15.03.2026	16.03.2026	17.03.2026	19.03.2026		14.03.2026

शुभ संवत् 2082 शाके 1947 राजा रवि मन्त्री रवि समय वास वणिक गृहे वाहन अश्व रोहिणी का निवासः संधोः संवत्सर का नाम सिद्धार्थ

30 मार्च से 12 अप्रैल 2025 तक (चैत्रमासे शुक्ल पक्ष) वसंत ऋतु, रवि उत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	रविवार	30.03.2025	चैत्र नवरात्रारम्भ, संवत्सरारंभ, कलशस्थापना, गुडी पडवा, श्री गौतम जयन्ती, श्री झूलेलाल जयन्ती
द्वितीया	सोमवार	31.03.2025	गणगौरपूजन, श्रीमत्स्य जयन्ती, सिंधारा दोज
चतुर्थी	मंगलवार	01.04.2025	बैंक वार्षिक लेखाबंदी
पंचमी	बुधवार	02.04.2025	श्रीपंचमी, हयव्रत 5, रोहिणी व्रत, श्रीरामजन्मोत्सवारंभ
षष्ठी	गुरुवार	03.04.2025	स्कन्दषष्ठी, यमुना षष्ठी
सप्तमी	शुक्रवार	04.04.2025	नवपद ओलीप्रा. जैन
अष्टमी	शनिवार	05.04.2025	अशोकाष्टमी, श्रीदुर्गाष्टमी व्रत, भवानी जयन्ती, मनसादेवी, अन्नपूर्णा पूजा
नवमी	रविवार	06.04.2025	श्रीरामनवमीव्रतोत्सव, श्रीरामचरितमानस जयन्ती
दशमी	सोमवार	07.04.2025	श्रीधर्मराजदशमी, विश्व स्वास्थ्य दिवस
एकादशी	मंगलवार	08.04.2025	कामदाएकादशीव्रत, फूलडोल, जल संसाधन दिवस
द्वादशी	बुधवार	09.04.2025	श्रीविष्णुद्वादशी, हरिदमनोत्सवः, शौर्यदिवस
त्रयोदशी	गुरुवार	10.04.2025	प्रदोषव्रत, अनंग त्रयोदशी, श्रीमहावीरजयन्ती (जैन), रेलसप्ताह दिवस
चतुर्दशी	शुक्रवार	11.04.2025	श्रीशिवदमनक 14,बालासुन्दरीदेवी मे. देवबंद
पूर्णिमा	शनिवार	12.04.2025	चैत्रीपूर्णिमासत्यव्रत, श्रीहनुमानजयंती
13 अप्रैल से 27 अप्रैल 2025 तक (वैशाख कृष्ण पक्ष) वसंत ऋतु रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	रविवार	13.04.2025	वैशाखी,
प्रतिपदा	सोमवार	14.04.2025	डॉ0 अम्बेडकरजयन्ती
तृतीया	बुधवार	16.04.2025	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22.01, उर्स मेला
पंचमी	शुक्रवार	18.04.2025	गुडफ्राईडे, गुरुतेगबहादुरजयंती, पुरातत्वरक्षणदिवस
सप्तमी	रविवार	20.04.2025	गुरुअर्जुनदेव जयन्ती, ईस्टरसन्डे
अष्टमी	सोमवार	21.04.2025	श्रीशीतलापूजा, बूढ़ाबासोड़ा
नवमी	मंगलवार	22.04.2025	पंचक प्रारम्भ 24.25,श्रीचण्डिकानवमी, वसुन्धरारक्षणदिवस
दशमी	बुधवार	23.04.2025	बाबू कुंवरसिंहजयंती (बिहार)
एकादशी	गुरुवार	24.04.2025	वरूथिनीएकादशीव्रतसर्वे, श्रीबल्लभाचार्यजयंती
द्वादशी	शुक्रवार	25.04.2025	प्रदोषव्रत, (अगस्ततताराअस्त)
त्रयोदशी	शनिवार	26.04.2025	पंचक समाप्त 27.38, मासशिवरात्रिव्रत
अमावस्या	रविवार	27.04.2025	देवपितृकार्येअमापुण्यः, श्रीशुकदेवमुनिजयन्ती

28 अप्रैल से 12 मई 2025 तक (वैशाख शुक्ल पक्ष) ग्रीष्म ऋतु रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	सोमवार	28.04.2025	ऋषिपाराशर जयन्ती, गुरुअंगददेव जयन्ती
द्वितीया	मंगलवार	29.04.2025	चन्द्रदर्शन, शिवाजीजयन्ती, श्रीपरशुरामजयन्ती, रोहिणीव्रत
तृतीया	बुधवार	30.04.2025	अक्षयतृतीया, तपपारणजैन, चन्दनयात्रा
चतुर्थी	गुरुवार	01.05.2025	विश्वश्रमिकदिवस
पंचमी	शुक्रवार	02.05.2025	आद्यशंकराचार्यजयन्ती, श्रीसूरदासजयन्ती, नर्मदेश्वर ज0
षष्ठी	शनिवार	03.05.2025	श्रीरामानुजाचार्यजयन्ती, श्रीगंगासप्तमी, सौरऊर्जादिवस
अष्टमी	सोमवार	05.05.2025	देवीबगलामुखीजयन्ती, श्रीजानकीनवमी, वैष्णवोत्सव
दशमी	बुधवार	07.05.2025	श्रीमहावीरकेवलज्ञानजैन, कविटैगोरजयंती
एकादशी	गुरुवार	08.05.2025	मोहिनीएकादशीव्रतसर्वे
द्वादशी	शुक्रवार	09.05.2025	प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	शनिवार	10.05.2025	देवीछिन्नमस्ता जयन्ती
चतुर्दशी	रविवार	11.05.2025	श्रीनृसिंहजयन्ती, गुरुअमरदासजयंती, मदर्सडे
पूर्णिमा	सोमवार	12.05.2025	सत्यव्रत, बुद्धपूर्णिमा, पीपलपूजनं, यमतीर्थ जल कुंभदानं
13 मई से 27 मई 2025 तक (ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	मंगलवार	13.05.2025	जिनवरव्रत प्रारम्भ (जैन), बुढ़वामंगल, एकतादिवस
द्वितीया	बुधवार	14.05.2025	श्रीनारदजयन्ती, वीणादान, वृन्दावनपरिक्रमा
तृतीया	गुरुवार	15.05.2025	विश्वपरिवारदिवस
चतुर्थी	शुक्रवार	16.05.2025	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22.40, डेंगूदिवस
पंचमी	रविवार	18.05.2025	बाबाजयगुरुदेवपुण्यः
सप्तमी	मंगलवार	20.05.2025	पंचक प्रारम्भ 7.30, कालाष्टमीव्रत, संतदादूदयालजयंती
एकादशी	शुक्रवार	23.05.2025	अपराएकादशीव्रत, स्मार्त रुक्मणीहरणलीला
द्वादशी	शनिवार	24.05.2025	पंचक समाप्त 13.47, शनि प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	रविवार	25.05.2025	मासशिवरात्रि, सावित्रीव्रतारम्भः, तपनकाल प्रारम्भ
चतुर्दशी	सोमवार	26.05.2025	पितृकार्ये अमावस्या, अन्वाधान, फलाहारिणी कालिकापूजा
अमावस्या	मंगलवार	27.05.2025	भौमवारी देवकार्ये अमावस्या, सावित्रीव्रत, वटपूजन, भावुका 30 श्रीशनिजयन्ती, बुढ़वा मंगल, रोहिणीव्रत, श्रीनेहरू पुण्यः

28 मई से 11 जून 2025 तक (ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
द्वितीया	बुधवार	28.05.2025	चन्द्रदर्शन, वीरसावरकरजयंती
तृतीया	गुरुवार	29.05.2025	रम्भातीजव्रत, श्रीमहाराणाप्रतापजयन्ती
चतुर्थी	शुक्रवार	30.05.2025	शहीदीगुरुअर्जुनदेव
पंचमी	शनिवार	31.05.2025	श्रुतिपंचमी (जैन), तम्बाकूनिषेधदिवस
षष्ठी	रविवार	01.06.2025	अरण्यषष्ठी, जामित्रषष्ठी, विन्ध्यवासिनीपूजा
सप्तमी	सोमवार	02.06.2025	बड़पूजा (भिंड), बाबाबालकनाथजयंती
अष्टमी	मंगलवार	03.06.2025	श्रीदुर्गाष्टमी, देवी धूमावतीजयंती, मेला क्षीरभवानी, बुढ़वामंगल
नवमी	बुधवार	04.06.2025	श्रीमहेशनवमी, माहेश्वरीवंशे (दहीचूड़ामहोत्सव)
दशमी	गुरुवार	05.06.2025	श्रीगंगादशहरा, रामेश्वरप्रतिष्ठादिवस, बटुकभैरवजयन्ती, विश्वपर्यावरणदिवस, आचार्यश्रीरामशर्मापुण्यः
एकादशी	शुक्रवार	06.06.2025	निर्जलाएकादशीव्रतस्मार्त, भीमसैनीग्यारसव्रत
द्वादशी	शनिवार	07.06.2025	चम्पकद्वादशी, मेलाखाटूश्याम (राज0)
द्वादशी	रविवार	08.06.2025	प्रदोषव्रत, वायुप्रवाहकाल
त्रयोदशी	सोमवार	09.06.2025	सावित्रीव्रतारम्भ
चतुर्दशी	मंगलवार	10.06.2025	सत्यव्रत, बुढ़वामंगल
पूर्णिमा	बुधवार	11.06.2025	वटसावित्री व्रतपूर्ण, संतकबीरजयंती, श्रीजगन्नाथजीस्नान–यात्रा, श्रीअमरनाथपूजा, गुरुगोरखनाथजयंती
12 जून से 25 जून 2025 तक (आषाढ़ कृष्ण पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	गुरुवार	12.06.2025	गुरुहरगोविन्दजयन्ती, बालश्रमनिषेधदिवस
तृतीया	शनिवार	14.06.2025	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22.08, एकतादिवस, रक्तदानदिवस
चतुर्थी	रविवार	15.06.2025	बंग व सौर आषाढ़ारम्भ
पंचमी	सोमवार	16.06.2025	पंचकप्रारम्भ 13.06
सप्तमी	बुधवार	18.06.2025	कालाष्टमीव्रत, रानीझाँसीपुण्यः
नवमी	शुक्रवार	20.06.2025	पंचकसमाप्त 21.44
दशमी	शनिवार	21.06.2025	योगिनीएकादशीव्रतसर्वे, बाबा देवरहापुण्यः, योगदिवस
त्रयोदशी	सोमवार	23.06.2025	सोमप्रदोषव्रत, मासशिवरात्रि, रोहिणीव्रत
अमावस्या	बुधवार	25.06.2025	देवपितृकार्ये अमावस्या

26 जून से 10 जुलाई 2025 तक (आषाढ़ शुक्ल पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	गुरुवार	26.06.2025	गुप्तनवरात्रविधान (मिथिलांचल), विश्वनशाविरोधदिवस, अहिल्याबाईहोल्करजयंती, चन्द्रदर्शन
द्वितीया	शुक्रवार	27.06.2025	श्रीजगन्नाथजीरथयात्रापुरी, मनोरथ द्वितीया
तृतीया	शनिवार	28.06.2025	गुड़ीचाउत्सव (पुरी), श्रीबल्लभाचार्य पुण्यः
चतुर्थी	रविवार	29.06.2025	स्वामीविवेकानंदस्मृतिदिवस
पंचमी	सोमवार	30.06.2025	द्वारकाधीशपाटोत्सव, कौमारिकीष्षष्ठी
षष्ठी	मंगलवार	01.07.2025	विवस्वतसप्तमी सूर्यपूजा, महावीर गर्भकल्याणकजैन डॉक्टर्सडे
अष्टमी	गुरुवार	03.07.2025	अष्ट्राह्निकापर्व जैन
नवमी	शुक्रवार	04.07.2025	भड्डलीनवमी, मेला शरीफभवानी, विवेकानन्दपुण्यः
दशमी	शनिवार	05.07.2025	उल्टारथ बहुडायात्रा (पुरी)
एकादशी	रविवार	06.07.2025	शयनीएकादशीव्रतसर्वे
त्रयोदशी	मंगलवार	08.07.2025	भौमप्रदोषव्रत
चतुर्दशी	बुधवार	09.07.2025	चौमासी 14 जैनमुनीनां
पूर्णिमा	गुरुवार	10.07.2025	गुरुपूर्णिमा, सत्यव्रत, व्यासपूजा, शिवशयनोत्सव, कोकिलाव्रत, संन्यासीनांयमनियमादिप्रा., परिक्रमागोवर्धन
11 जुलाई से 24 जुलाई 2025 तक (श्रावण कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	शुक्रवार	11.07.2025	विश्वजनसंख्यादिवस, कांवड़धारण मुहूर्त
द्वितीया	शनिवार	12.07.2025	अशून्यशयनव्रतारंभः
तृतीया	रविवार	13.07.2025	पंचकप्रारम्भ 18.50 स्वामीकल्याणदेवपुण्यः (शुक्रताल)
चतुर्थी	सोमवार	14.07.2025	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21.56 श्रावणसोमवारव्रत
पंचमी	मंगलवार	15.07.2025	नागपंचमी मरुस्थले
सप्तमी	गुरुवार	17.07.2025	पंचकसमाप्त 27.38, कालाष्टमीव्रत
नवमी	शनिवार	19.07.2025	गुरुहरकिशनजयंती
एकादशी	सोमवार	21.07.2025	कामिकाएकादशीव्रतसर्वे, रोहिणीव्रत, श्रावणसोमवारव्रत
द्वादशी	मंगलवार	22.07.2025	प्रदोषव्रत
चतुर्दशी	बुधवार	23.07.2025	मासशिवरात्रिव्रत, श्रीगंगाजल से रुद्राभिषेक, मेला रामतीर्थमंदिर, लोकमान्यतिलकजयंती, चन्द्रशेखरआजाद जयन्ती
अमावस्या	गुरुवार	24.07.2025	हरियाली अमावस्या

25 जुलाई से 9 अगस्त 2025 तक (श्रावण शुक्ल पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	शुक्रवार	25.07.2025	नक्तव्रतारम्भ, अखण्डानन्द जयंती
द्वितीया	शनिवार	26.07.2025	चन्द्रदर्शन 30, सिंधारा 2, स्वामीकरपात्रीजयंती
तृतीया	रविवार	27.07.2025	हरियालीतीज, स्वर्णगौरीव्रत, झूलाप्रारंभ
चतुर्थी	सोमवार	28.07.2025	विनायकचतुर्थी, वरद 4, श्रवणतपजैन, श्रावणसोमवारव्रत
पंचमी	मंगलवार	29.07.2025	नागपंचमी देशाचारे, श्रीअमरनाथयात्रारम्भ, वाद्यदिवस
षष्ठी	बुधवार	30.07.2025	वर्णश्रृयालषष्ठी, श्रीकल्किजयंती
सप्तमी	गुरुवार	31.07.2025	श्रीतुलसीदासजयंती
अष्टमी	शुक्रवार	01.08.2025	श्रीदुर्गाष्टमीमेला सिंध, मे0 नयनादेवीचिंतपूर्णी, तिलकपुण्यः
नवमी	रविवार	03.08.2025	फ्रेंडशिपडे
दशमी	सोमवार	04.08.2025	श्रावणसोमवारव्रत
एकादशी	मंगलवार	05.08.2025	पवित्रा एकादशीव्रतसर्वे
द्वादशी	बुधवार	06.08.2025	श्रीविष्णुपवित्रार्पणं, दधित्यागव्रतारम्भसर्वे
त्रयोदशी	गुरुवार	07.08.2025	श्रीटैगोरपुण्यः
चतुर्दशी	शुक्रवार	08.08.2025	सत्यव्रत, ह्यग्रीवोत्पत्तिः पूजादर्शन भदैनीमंदिर
पूर्णिमा	शनिवार	09.08.2025	पूर्णिमा, रक्षाबंधन, श्रावणीकर्म, पंचक प्रारम्भ 26.08 से, ऋषितर्पण, श्रीगायत्रीजं0, अमरनाथदर्शन, कोकिलाव्रत, संस्कृतदिवस
10 अगस्त से 23 अगस्त 2025 तक (भाद्रपद कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	रविवार	10.08.2025	श्रवणतपपूर्ण, शेरदिवस
द्वितीया	सोमवार	11.08.2025	अशून्यशयनव्रतपूर्ण, भीमचण्डीविन्ध्याजयन्ती
तृतीया	मंगलवार	12.08.2025	कज्जली 3, बहुलाचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय 21.02
चतुर्थी	बुधवार	13.08.2025	रक्षापंचमी
षष्ठी	गुरुवार	14.08.2025	पंचक समाप्त 9.05, हलचन्दन षष्ठीव्रत, चन्द्रोदय 22.09, ललहीछठ
सप्तमी	शुक्रवार	15.08.2025	जन्माष्टमीव्रतस्मार्त, राष्ट्रीयस्वतंत्रतादिवस ध्वजारोहण
अष्टमी	शनिवार	16.08.2025	श्रीकृष्णजन्माष्टमीव्रत वैष्णव, संतज्ञानेश्वर जयन्ती, आद्यकाली जयन्ती
नवमी	रविवार	17.08.2025	गोगानवमी, नन्दोत्सवः नन्दगाँव, रोहिणीव्रत
एकादशी	मंगलवार	19.08.2025	अजाएकादशीव्रतसर्वे
द्वादशी	बुधवार	20.08.2025	गोवत्सपूजा, बछबारस, पर्यूषणपर्वारम्भ जैन, प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	गुरुवार	21.08.2025	छटीपूजन, मासशिवरात्रिव्रत, बुजुर्ग दिवस
चतुर्दशी	शुक्रवार	22.08.2025	अघोराचौदस
अमावस्या	शनिवार	23.08.2025	शनैश्चरीमावस, पिठौरी 30, कुशोत्पाटिनी अमावस्या

24 अगस्त से 7 सितम्बर 2025 तक (भाद्रपद शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	रविवार	24.08.2025	नक्तव्रत पूर्ण, चन्द्रदर्शन
द्वितीया	सोमवार	25.08.2025	तेलाधारतपजैन, शंकरदेवतिथि असम
तृतीया	मंगलवार	26.08.2025	हरितालिकातीजव्रत, श्रीवराहजयन्ती, सामवेदीयउपाकर्म,
चतुर्थी	बुधवार	27.08.2025	श्रीगणेशजन्मोत्सव, पत्थर चौथ, कलंकचौथ,चन्द्रदर्शन निषेध
पंचमी	गुरुवार	28.08.2025	ऋषिपंचमी, जैनसंवत्सरी, क्षमावाणी पर्व, पर्यूषण पर्वारम्भ
षष्ठी	शुक्रवार	29.08.2025	सूर्यषष्ठीव्रत, बलदेवछठ
सप्तमी	शनिवार	30.08.2025	मुक्ताभरण, संतान सप्तमी
अष्टमी	रविवार	31.08.2025	महालक्ष्मीव्रतारम्भ, श्रीराधाष्टमी व्रतोत्सव, श्रीदधीचजयन्ती,
नवमी	सोमवार	01.09.2025	श्रीचन्दनवमीजन्मोत्सव, उदासीनसंप्रदाय, भागवतसप्ताहप्रा0
दशमी	मंगलवार	02.09.2025	महालक्ष्मीव्रतपूर्ण, श्रीनवलदुर्गेमेला, सम्राटगुर्जरजयंती
एकादशी	बुधवार	03.09.2025	पद्माजलझूलनीएकादशीव्रतसर्वे, फूलडोल मेला
द्वादशी	गुरुवार	04.09.2025	दधित्यागव्रतपूर्ण, श्रीवामन जयन्ती
त्रयोदशी	शुक्रवार	05.09.2025	ओनमपर्व, प्रदोषव्रत, शिक्षकदिवस, शान्तिदिवस
चतुर्दशी	शनिवार	06.09.2025	पंचक प्रा0 11.16, अनन्तचतुर्दशी, श्रीगणेशविसर्जन
पूर्णिमा	रविवार	07.09.2025	प्रौष्ठपदीसत्यव्रतपूर्णिमा, महालयारम्भ खग्रासचन्द्रग्रहण 21.57 से 26.31 तक, पूर्णिमाश्राद्ध
8 सितम्बर से 21 सितम्बर 2025 तक (आश्विन कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	सोमवार	08.09.2025	प्रतिपदाश्राद्ध, विश्वसाक्षरतादिवस, स्वामी शिवानंद जयंती
द्वितीया	मंगलवार	09.09.2025	द्वितीयाश्राद्धं, पंतजयंती
तृतीया	बुधवार	10.09.2025	पंचकसमाप्त 16.02 तृतीयाश्राद्ध, चतुर्थीव्रतचन्द्रोदय 20.09
चतुर्थी	गुरुवार	11.09.2025	चतुर्थी–पंचमी का श्राद्ध, विनोबाजयंती
पंचमी	शुक्रवार	12.09.2025	षष्ठी का श्राद्ध
षष्ठी	शनिवार	13.09.2025	सप्तमी का श्राद्ध, रोहिणीव्रत
अष्टमी	रविवार	14.09.2025	अष्टमी का श्राद्ध, हिंदीदिवस, जीवितपुत्रिकाव्रत,
नवमी	सोमवार	15.09.2025	मातृनवमीश्राद्ध, सौभाग्यवतीनां श्राद्ध, इंजीनियरदिवस
दशमी	मंगलवार	16.09.2025	दशमी का श्राद्ध
एकादशी	बुधवार	17.09.2025	इन्दिराएकादशीव्रतस्मार्त, एकादशी का श्राद्ध
द्वादशी	गुरुवार	18.09.2025	संन्यासीनां द्वादशीश्राद्ध
त्रयोदशी	शुक्रवार	19.09.2025	प्रदोषव्रत, त्रयोदशी श्राद्ध
चतुर्दशी	शनिवार	20.09.2025	मासशिवरात्रिव्रत, चतुर्दशीश्राद्ध, देवीकात्यायनीजयन्ती, दर्मरणश्राद्ध
अमावस्या	रविवार	21.09.2025	सर्वपितृअमावस्याश्राद्ध, श्राद्धतर्पण, पितरविसर्जन, भूलेबिसरों का श्राद्ध

22 सितम्बर से 7 अक्टूबर 2025 तक (आश्विन शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	सोमवार	22.09.2025	नवरात्रारम्भः, कलशस्थापन, श्रीअग्रसेनजयन्ती, मातामहश्राद्ध
द्वितीया	मंगलवार	23.09.2025	चन्द्रदर्शन
तृतीया	बुधवार	24.09.2025	सिन्दूरतृतीया, ओलीप्रा0 जैनमुनिपुष्करजयंती
चतुर्थी	शुक्रवार	26.09.2025	उपांगललिता व्रत
पंचमी	शनिवार	27.09.2025	पर्यटनदिवस
षष्ठी	रविवार	28.09.2025	शहीदभगतसिंहजयंती
सप्तमी	सोमवार	29.09.2025	श्रीसरस्वती आवाहनं, नवपदओलीप्रा0, भद्रकाल्यावतार
अष्टमी	मंगलवार	30.09.2025	श्रीदुर्गाष्टमी पूजा, मातापूजन, सरस्वतीपूजन
नवमी	बुधवार	01.10.2025	महानवमी, आयुधपूजा, बलिदानं, रक्तदान दिवस
दशमी	गुरुवार	02.10.2025	विजयादशमी, अपराजितापूजा, शमीपूजन, माधवाचार्य ज0
एकादशी	शुक्रवार	03.10.2025	पंचक प्रारंभ 21.20, पापांकुशाएकादशीव्रतसर्वे
द्वादशी	शनिवार	04.10.2025	प्रदोषव्रत, पशुकल्याणदिवस
त्रयोदशी	रविवार	05.10.2025	वरिष्ठनागरिकदिवस
चतुर्दशी	सोमवार	06.10.2025	शरदपूर्णिमाव्रत, शाकुंभरीदेवीदर्शन, कोजागरीव्रत
पूर्णिमा	मंगलवार	07.10.2025	उदयापूर्णिमा, महर्षिवाल्मीकि जयन्ती, कार्तिकस्नानप्रारम्भ
8 अक्टूबर से 21 अक्टूबर 2025 तक (कार्तिक कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
द्वितीया	बुधवार	08.10.2025	गुरुरामदासजयंती, वायुसेनादिवस
तृतीया	गुरुवार	09.10.2025	विश्वडाकदिवस
चतुर्थी	शुक्रवार	10.10.2025	करवाचौथव्रत, चन्द्रोदय 23.21, रोहिणीव्रत
सप्तमी	सोमवार	13.10.2025	अहोईअष्टमीव्रत पूजा, चन्द्रोदय 23.21
दशमी	गुरुवार	16.10.2025	विश्ववाद्यदिवस
एकादशी	शुक्रवार	17.10.2025	रमाएकादशीव्रतसर्वे
द्वादशी	शनिवार	18.10.2025	गोवत्सद्वादशी, यमदीपदानं, गोसेवा, प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	रविवार	19.10.2025	धनतेरस, श्रीधन्वन्तरी जयंती, आयुर्वेददिवस मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	सोमवार	20.10.2025	नरकचतुर्दशी, स्वामीरामतीर्थजन्म, परिनिर्माणदिवस
अमावस्या	मंगलवार	21.10.2025	कार्तिकीअमावस्या दीपावली, श्रीमहालक्ष्मीपूजन, प्रदोषे–दीपोत्सव, महावीरनिर्वाणजैन, महर्षि दयानंदपुण्यः

22 अक्टूबर से 5 नवम्बर 2025 तक (कार्तिक शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	बुधवार	22.10.2025	अन्नकूटगोवर्धनपूजा, बलिपूजा, द्यूतक्रीड़ा
द्वितीया	गुरुवार	23.10.2025	भाईदूज, चन्द्रदर्शन, चित्रगुप्तविश्वकर्मापूजा
पंचमी	रविवार	26.10.2025	सौभाग्य एवं ज्ञानपंचमी
षष्ठी	सोमवार	27.10.2025	सूर्यषष्ठी
सप्तमी	बुधवार	29.10.2025	सहस्रार्जुन जयंती, अष्ट्रान्हिका प्रारम्भ जैन
अष्टमी	गुरुवार	30.10.2025	गोपाष्टमीपर्व, गोपूजन, विश्वबचतदिवस
नवमी	शुक्रवार	31.10.2025	पंचक प्रारम्भ 6.41 अक्षय–आँवला कूष्माडनवमी जुगल जोड़ी परिक्रमा, सरदारपटेलजयंती
दशमी	शनिवार	01.11.2025	आशादशमी, आरोग्यव्रत, कंसवध लीला मथुरा, प्रबोधनीएकादशीव्रतस्मार्त, तुलसीविवाह, भीष्मपंचकप्रा0
एकादशी	रविवार	02.11.2025	खाटूश्यामचतुर्मास, श्रीकालीदासजयंती
त्रयोदशी	सोमवार	03.11.2025	सोमप्रदोषव्रत, जैनदिवाकर चौथ जयन्ती
चतुर्दशी	मंगलवार	04.11.2025	बैकुण्ठ चतुर्दशी, चौमासीचौदसजैन, पंचकसमाप्त 12.34
पूर्णिमा	बुधवार	05.11.2025	कार्तिकीपूर्णिमापर्व, पुष्करराजरेणुकातीर्थ, गढ़गंगा भीष्मपंचक, श्रीगुरुनानक जयंती
6 नवम्बर से 20 नवम्बर 2025 तक (मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष) हेमन्तऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	गुरुवार	06.11.2025	मेलावटेश्वर
द्वितीया	शुक्रवार	07.11.2025	रोहिणी व्रत
तृतीया	शनिवार	08.11.2025	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 20.00
पंचमी	रविवार	09.11.2025	श्रीमायानन्दचैतन्यजयंती
अष्टमी	बुधवार	12.11.2025	श्रीमहाकालभैरवाष्टमी
दशमी	शुक्रवार	14.11.2025	श्रीमहावीरस्वामी दीक्षाकल्याणक, बालदिवस, नेहरूजयंती
एकादशी	शनिवार	15.11.2025	उत्पत्तिएकादशीव्रतसर्वे, जनजातीय गौरव दिवस
त्रयोदशी	सोमवार	17.11.2025	सोमप्रदोषव्रत, लालालाजपतरायपुण्यः
त्रयोदशी	मंगलवार	18.11.2025	मासशिवरात्रिव्रत
चतुर्दशी	बुधवार	19.11.2025	श्रीबालाजीजयंती, इन्द्राजीजयंती, पितृकार्ये अमावस्या
अमावस्या	गुरुवार	20.11.2025	देवकार्ये अमापुण्यः

21 नवम्बर से 4 दिसम्बर 2025 तक (मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष) हेमन्तऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
द्वितीया	शनिवार	22.11.2025	चन्द्रदर्शन
चतुर्थी	सोमवार	24.11.2025	वैनायकीचतुर्थीव्रत
पंचमी	मंगलवार	25.11.2025	श्रीपंचमी, बिहारीपंचमी, श्रीबांकेबिहारीप्राकट्योत्सव, श्रीरामजानकीविवाहोत्सव, मीराबाईजयंती, गुरुतेगबहादुर–बलिदानदिवस, नागपंचमी,
षष्ठी	बुधवार	26.11.2025	स्कन्दषष्ठी, चम्पाषष्ठी, संविधानदिवस
सप्तमी	गुरुवार	27.11.2025	पंचक प्रा0 14.01, मित्रसप्तमी, नरसीमेहताजयंती
नवमी	शनिवार	29.11.2025	नन्दिनीनवमी, जैनदिवाकरचौथपुण्यः
दशमी	रविवार	30.11.2025	दशादित्यव्रत
एकादशी	सोमवार	01.12.2025	पंचक समाप्त 23.17, मोक्षदाएकादशीव्रत, मौनी 11 जैन, श्रीगीताजयंती
द्वादशी	मंगलवार	02.12.2025	अखण्डाद्वादशी, प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	बुधवार	03.12.2025	पिशाचमोचनश्राद्ध
चतुर्दशी	गुरुवार	04.12.2025	कपर्दीश्वरयात्रादर्शनकाशी, पूर्णिमापुण्यः, श्रीदत्तजयंती, देवीअन्नपूर्णाजयंती, रोहिणीव्रत, नौसेनादिवस
5 दिसम्बर से 20 दिसम्बर 2025 तक (पौष कृष्ण पक्ष) हेमन्तऋतु, रवि दक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
द्वितीया	शनिवार	06.12.2025	डॉ0 अम्बेडकर पुण्यः
तृतीया	रविवार	07.12.2025	चतुर्थीव्रतचन्द्रोदय 19.56, सशस्त्रसेनाझण्डादिवस
षष्ठी	बुधवार	10.12.2025	मानवाधिकार दिवस
सप्तमी	गुरुवार	11.12.2025	कालाष्टमीव्रत
अष्टमी	शुक्रवार	12.12.2025	अष्टकाश्राद्ध
दशमी	रविवार	14.12.2025	पौषी 10 जैन श्रीसंघपार्श्वनाथचन्द्रप्रभु जयंती,
एकादशी	सोमवार	15.12.2025	सफलाएकादशीव्रतसर्वे, प्रयागराज में कल्पवास प्रारम्भ पटेल पुण्यः
द्वादशी	मंगलवार	16.12.2025	विजयदिवस
त्रयोदशी	बुधवार	17.12.2025	प्रदोषव्रत, बाबानागपाल पुण्यः
चतुर्दशी	गुरुवार	18.12.2025	श्रीजयप्रभविजयपुण्यः, त्रिस्तुतिजैन, मासशिवरात्रिव्रत
अमावस्या	शुक्रवार	19.12.2025	पौषीदेवपितृकार्ये अमावस्यापुण्यः, बकुलामावस (उड़ीसा)
अमावस्या	शनिवार	20.12.2025	उदयापौषी 30 अमावस्यापुण्यः

21 दिसम्बर से 3 जनवरी 2026 तक (पौष शुक्ल पक्ष) शिशिरऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	रविवार	21.12.2025	चन्द्रदर्शन
द्वितीया	सोमवार	22.12.2025	खिचड़ीमहोत्सव प्रारम्भ वृन्दावन
तृतीया	मंगलवार	23.12.2025	किसानदिवस, त्रिस्तुतिजैन, स्वामीश्रद्धानंदबलिदान दिवस
चतुर्थी	बुधवार	24.12.2025	पंचक प्रारम्भ 19.42, राष्ट्रीयउपभोक्तादिवस
पंचमी	गुरुवार	25.12.2025	क्रिसमसडे, मालवीयजयंती, अटलजयंती, बड़ादिन
षष्ठी	शुक्रवार	26.12.2025	वीरबालक दिवस
सप्तमी	शनिवार	27.12.2025	त्रिस्तुतिजैन, गुरुगोविन्दसिंहजयंती, श्रीनंदबाबाजयंती
नवमी	सोमवार	29.12.2025	पंचक समाप्त 17.40
दशमी	मंगलवार	30.12.2025	पुत्रदाएकादशीव्रतस्मार्त, खरतरगच्छजैन
द्वादशी	बुधवार	31.12.2025	कल्पवाससमाप्त
त्रयोदशी	गुरुवार	01.01.2026	प्रदोषव्रत, रोहिणीव्रत
चतुर्दशी	शुक्रवार	02.01.2026	सत्यव्रत
पूर्णिमा	शनिवार	03.01.2026	पौषीपूर्णिमापुण्यः, माघस्नानारंभः, देवीशाकुम्भरी जयंती
4 जनवरी से 18 जनवरी 2026 तक (माघ कृष्ण पक्ष) शिशिरऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	रविवार	04.01.2026	काशिस्थ दशाश्वमेधघाटस्नानारम्भः
तृतीया	मंगलवार	06.01.2026	संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत (सकट चौथ) चन्द्रोदय 20.56, पत्रकार दिवस
सप्तमी	शुक्रवार	09.01.2026	श्रीरामानन्दाचार्य जयंती, प्रवासीभारतीयदिवस
सप्तमी	शनिवार	10.01.2026	कालाष्टमीव्रत, अष्टका श्राद्ध, विश्वहिंदीदिवस
अष्टमी	रविवार	11.01.2026	शास्त्रीजीपुण्यः, सिद्धेश्वरमेलाप्रारम्भ
नवमी	सोमवार	12.01.2026	स्वामीविवेकानंदजयंती, राष्ट्रीययुवक दिवस
दशमी	मंगलवार	13.01.2026	लोहड़ी
एकादशी	बुधवार	14.01.2026	षट्तिलाएकादशीव्रत सर्वे, पौंगलपर्व, श्रीगंगासागरमेला
द्वादशी	गुरुवार	15.01.2026	शीतलनाथजयंतीजैन, सेनादिवस
त्रयोदशी	शुक्रवार	16.01.2026	प्रदोषव्रत, मेरुत्रयोदशी, कल्याणकजैन
चतुर्दशी	शनिवार	17.01.2026	मासशिवरात्रि
अमावस्या	रविवार	18.01.2026	मौनीअमावस्यास्नान मेलाप्रयागराज

19 जनवरी से 1 फरवरी 2026 तक (माघ शुक्ल पक्ष) शिशिरऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	सोमवार	19.01.2026	गुप्तनवरात्रिविधानप्रा0,
द्वितीया	मंगलवार	20.01.2026	पंचकप्रारम्भ 25.32, चन्द्रदर्शन, बाबालालदयालजयंती
तृतीया	बुधवार	21.01.2026	गौरीतृतीया
चतुर्थी	गुरुवार	22.01.2026	तिल–वरद्चतुर्थी
पंचमी	शुक्रवार	23.01.2026	वसन्तपंचमी, श्रीपंचमी, श्रीसरस्वतीजयंती, तक्षकपूजा, सरछोटूरामजयंती, सुभाषजयंती, पराक्रमदिवस
षष्ठी	शनिवार	24.01.2026	मन्दारषष्ठी, शीतला 6 , दारिद्रयहरणषष्ठी
सप्तमी	रविवार	25.01.2026	पंचक समाप्त 13.35, अचलासप्तमी, नर्मदाजयंती
अष्टमी	सोमवार	26.01.2026	भीष्माष्टमी श्राद्ध, गणतंत्रदिवस 77वाँ
दशमी	बुधवार	28.01.2026	ठा0 दामोदरप्राकट्योत्सवः, लालालाजपतरायजयंती
एकादशी	गुरुवार	29.01.2026	जयाएकादशीव्रत
द्वादशी	शुक्रवार	30.01.2026	भीष्मद्वादशी , प्रदोषव्रत, श्रीगाँधीजी पुण्यः
त्रयोदशी	शनिवार	31.01.2026	मरुमहोत्सव जैसलमेर
पूर्णिमा	रविवार	01.02.2026	सत्यव्रत, माघीपूर्णिमा, गुरुरविदासजयंती
2 फरवरी से 17 फरवरी 2026 तक (फाल्गुन कृष्ण पक्ष) शिशिरऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
चतुर्थी	गुरुवार	05.02.2026	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21.36
पंचमी	शुक्रवार	06.02.2026	भागवतभवनप्रतिष्ठादिवस, मथुरा मातायशोदाजयंती
षष्ठी	शनिवार	07.02.2026	महाकालशिवरात्रारम्भ पूजाविशेष
अष्टमी	सोमवार	09.02.2026	कालाष्टमी, श्रीजानकीव्रत, अष्टका श्राद्ध
नवमी	बुधवार	11.02.2026	गुरुरामदासनवमी
दशमी	गुरुवार	12.02.2026	महर्षिदयानन्दसरस्वती जयंती, सर्वोदयदिवस
एकादशी	शुक्रवार	13.02.2026	विजयाएकादशीव्रतसर्वे, रेडियोदिवस
द्वादशी	शनिवार	14.02.2026	शनिप्रदोषव्रत
त्रयोदशी	रविवार	15.02.2026	महाशिवरात्रिव्रत, श्रीवैद्यनाथ जयंती
अमावस्या	मंगलवार	17.02.2026	पंचक प्रारम्भ 9.01, शिवखप्परपूजा

18 फरवरी से 3 मार्च 2026 तक (फाल्गुन शुक्ल पक्ष) वसंतऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	बुधवार	18.02.2026	चन्द्रदर्शन
द्वितीया	गुरुवार	19.02.2026	फुलेरादूज, श्रीरामकृष्ण परमहंस जयंती
तृतीया	शुक्रवार	20.02.2026	पं0 लेखरामवीरतृतीया
चतुर्थी	शनिवार	21.02.2026	पंचम समाप्त 19.06, मातृभाषादिवस
सप्तमी	मंगलवार	24.02.2026	संतदादूदयालजयन्ती, होलाष्टकप्रारम्भ, अष्ट्राह्निका प्रारम्भजैन
नवमी	बुधवार	25.02.2026	लट्ठमारहोलीबरसाना, चन्द्रशेखर पुण्यः
एकादशी	शुक्रवार	27.02.2026	आमलाएकादशीव्रत सर्वे, मेला खाटूश्यामजी (राज0)
द्वादशी	शनिवार	28.02.2026	गोविन्दद्वादशी,
त्रयोदशी	रविवार	01.03.2026	प्रदोषव्रत
चतुर्दशी	सोमवार	02.03.2026	होलिकादहन, सत्यव्रतपूर्णिमा
पूर्णिमा	मंगलवार	03.03.2025	पूर्णिमापुण्यः, छारेंडी, धुलैण्डी, अष्टाकश्राद्ध
4 मार्च से 19 मार्च 2026 तक (चैत्र कृष्ण पक्ष) वसंतऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	बुधवार	04.03.2026	गणगौरपूजनारम्भ
द्वितीया	गुरुवार	05.03.2026	संततुकारामजयन्ती
तृतीया	शुक्रवार	06.03.2026	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21.15
पंचमी	रविवार	08.03.2026	श्रीरंगपंचमी, विश्वमहिलादिवस
षष्ठी	सोमवार	09.03.2026	एकनाथषष्ठी , सोमशीतला पूजा
सप्तमी	मंगलवार	10.03.2026	शीतलापूजन
अष्टमी	बुधवार	11.03.2026	शीतलाष्टमी माता पूजन, श्रीऋषभदेवजयंती
दशमी	शुक्रवार	13.03.2026	दशमातापूजन
एकादशी	रविवार	15.03.2026	पापमोचनीएकादशीव्रत, नौचन्दीमेलामेरठ
द्वादशी	सोमवार	16.03.2026	पंचकप्रारम्भ 18.08, सोमप्रदोषव्रत
त्रयोदशी	मंगलवार	17.03.2026	रंगतेरस, वारुणीपर्व, दिव्यांगदिवस, मासशिवरात्रि,
चतुर्दशी	बुधवार	18.03.2026	अमापुण्य देवपितृकार्येअमावस्या
अमावस्या	गुरुवार	19.03.2026	चैत्रीअमावस्या, नवरात्रारम्भ, कलशस्थापना, गौतम–जयंती, हेडगेवारजयंती

आरती एवं वन्दना

आरती श्री गणेशजी की

जय गणेश, जय गणेश जय गणेश देवा। माता जाकी पार्वती, पिता महादेवा।।
एकदन्त दयावन्त, चार भुजा धारी। मस्तक सिन्दूर सोहे, मूसे की सवारी।। जय गणेश ....।।
अन्धन को आँख देत, कोढ़िन को काया। बाँझन को पुत्र देत, निर्धन को माया।। जय गणेश ....।।
लड्डुन का भोग लगे, सन्त करें सेवा। हार चढ़ें, फूल चढ़ें और चढ़े मेवा।। जय गणेश ....।।
दीनन की लाज रखो शम्भू–सुत वारी। कामना को पूर्ण करो हम बलिहारी।। जय गणेश ....।।

आरती श्रीरामचन्द्रजी की

जगमग जगमग जोत जली है। राम आरती होन लगी है।।
भक्ति का दीपक प्रेम की बाती। आरति संत करें दिन राती।।
आनन्द की सरिता उभरी है। जगमग जगमग जोत जली है।।
कनक सिंहासन सीय समेता। बैठहिं राम होइ चित चेता।।
वाम भाग में जनक लली है। जगमग जगमग जोत जली है।।
आरति हनुमत के मन भावे। राम कथा नित शंकर गावे।।
सन्तों की ये भीड़ लगी है। जगमग जगमग जोत जली है।।

आरती श्रीरामायणजी की

आरति श्रीरामायनजी की। कीरति कलित ललित सिय पी की।। आरती श्री....
गावत ब्रह्मादिक मुनि नारद। बालमीक बिग्यान बिशारद।।
सुक सनकादि सेष अरु सारद। बरनि पवनसुत कीरति नीकी।। आरती श्री....
गावत बेद पुरान अष्टदस। छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।।
मुनि जन धन संतन को सरबस। सार अंस संमत सबही की। आरती श्री....
गावत संतत संभु भवानी। अरु घटसंभव मुनि बिग्यानी।।
ब्यास आदि कबिबर्ज बखानी। कागभुसुंडि गरुड़ के ही की।। आरती श्री....
कलिमल हरनि बिषय रस फीकी। सुभग सिंगार मुक्ति जुबती की।।
दलन रोग भव मूरि अमी की। तात मात सब बिधि तुलसी की।। आरती श्री....

आरती भगवान जगदीश्वर की

ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे,
भक्त जनों के संकट, क्षण में दूर करे।। ॐ जय ...।।
जो ध्यावै फल पावै, दुख विनसै मन का।। स्वामी ...।।
सुख–सम्पति घर आवै, कष्ट मिटै तन का।। ॐ जय ...।।
मात–पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किसकी।। स्वामी ...।।
तुम बिन और न दूजा, आस करूँ जिसकी।। ॐ जय ...।।
तुम पूरन परमात्मा, तुम अन्तर्यामी।। स्वामी ...।।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी।। ॐ जय ...।।
तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्ता।। स्वामी ...।।
मैं मूरख खल कामी, कृपा करो भर्ता।। ॐ जय ...।।
तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपती।। स्वामी ...।।
किस विधि मिलूँ दयामय, तुमको मैं कुमती।। ॐ जय ...।।
दीनबन्धु दुख हरता, तुम ठाकुर मेरे।। स्वामी ...।।
अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे।। ॐ जय ...।।
विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा।। स्वामी ...।।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा।। ॐ जय ...।।
तन, मन, धन, सब कुछ है तेरा।। स्वामी ...।।
तेरा तुझको अर्पण, क्या लागे मेरा।। ॐ जय ...।।
श्यामसुन्दरजी की आरति जो कोई नर गावै।। स्वामी ...।।
कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पति पावै।। ॐ जय ...।।

आरती सरस्वतीजी की

शारदे जय हंसवाहिनी,
जयति वीणावादिनी।
जय सरस्वती ज्ञानदायिनी,
कमल हंस विराजिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
ऋद्धि सिद्धि विवेकदायिनी,
कुमति शूल विनाशनी।
देवी मंद सुहास वर्षनी,
हृदय हंस विराजिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
मधुर काव्य कला,
प्रणव नाद विकासिनी।
भगवती संगीत वर दे,
भुवन मानस वासिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
जयति वीणावादिनी।

आरती शिवजी की

कर्पूर गौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि।।

जय शिव ओंकारा प्रभु भज शिव ओंकारा, ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्द्धंगी धारा। ॐ हर हर महादेव।।
एकानन चतुरानन पंचानन राजै, हंसासन गरुड़ासन वृषवाहन साजै। ॐ हर हर महादेव।।
दो भुज चारु चतुर्भुज दस भुज ते सोहै, तीनों रूप निरखते त्रिभुवन जन मोहै। ॐ हर हर महादेव।।
अक्षमाला वनमाला मुण्डमाला धारी, चंदन मृगमद सोहै भोले शुभकारी। ॐ हर हर महादेव।।
श्वेताम्बर, पीताम्बर, बाघम्बर अंगे, सनकादिक ब्रह्मादिक भूतादिक संगे। ॐ हर हर महादेव।।
कर मध्ये सुकमण्डलु चक्र शूलधारी, सुखकारी दुखहारी जग पालन कारी। ॐ हर हर महादेव।।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका, प्रणवाक्षर में शोभित ये तीनों एका। ॐ हर हर महादेव।।
त्रिगुणस्वामी की आरती जो कोई नर गावै, कहत शिवानन्द स्वामी वांछित फल पावै। ॐ हर हर महादेव।।

आरती श्रीहनुमानजी की

आरती कीजै हनुमान लला की। दुष्ट दलन रघुनाथ कला की।।
जाके बल से गिरिवर काँपै। रोग–दोष जाके निकट न झाँकै।।
अंजनि पुत्र महा बलदाई। सन्तन के प्रभु सदा सहाई।।
दे बीरा रघुनाथ पठाये। लंका जारि सिया सुधि लाये।।
लंका सो कोट समुद्र सी खाई। जात पवनसुत बार न लाई।।
लंका जारि असुर संहारे। सियाराम के काज संवारे।।
लक्ष्मण मूर्छित पड़े सकारे। आनि संजीवन प्रान उबारे।।
पैठि पताल तोरि जमकारे। अहिरावन की भुजा उखारे।।
बायें भुजा असुरदल मारे। दहिने भुजा संतजन तारे।।
सुर नर मुनि आरती उतारें। जै जै जै हनुमान उचारें।।
कंचन थार कपूर लौ छाई। आरती करत अंजना माई।।
जो हनुमानजी की आरती गावै। बसि बैकुण्ठ परम पद पावै।।
तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।। आरती ...

आरती सत्यनारायणजी की

ॐ जय लक्ष्मीरमणा, स्वामी जय लक्ष्मीरमणा।
सत्यनारायण स्वामी, जन–पातक–हरणा।। ॐ जय ...
रत्न जटित सिंहासन, अद्भुत छवि राजै।
नारद करत निराजन, घण्टा ध्वनि बाजै।। ॐ जय ...
प्रकट भये कलि कारण, द्विज को दरस दियो।
बूढ़ो ब्राह्मण बनके, कंचन महल कियो।। ॐ जय. ...
दुर्बल भील कठारो, जिन पर कृपा करी।
चन्द्रचूड़ एक राजा, तिनकी बिपति हरी।। ॐ जय ...
वैश्य मनोरथ पायो, श्रद्धा तज दीन्हीं।
सो फल भोग्यो प्रभुजी, फिर अस्तुति कीन्हीं।। ॐ जय ...
भाव–भक्ति के कारण, छिन–छिन रूप धर्‌यो।
श्रद्धा धारण कीनीं, तिनको काज सर्‌यो।। ॐ जय ...
ग्वाल–बाल सँग राजा, बन में भक्ति करी।
मनवांछित फल दीन्हों, दीनदयालु हरी।। ॐ जय ...
चढ़त प्रसाद सवायो, कदली फल मेवा।
धूप दीप तुलसी से, राजी सत्यदेवा।। ॐ जय ...
सत्यनारायणजी की आरती, जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी वांछित फल पावै।। ॐ जय ...

आरती अम्बेजी की

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी। तुमको निशिदिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिवजी।। ॐ जय अम्बे ...
मांग सिंदूर विराजत, टीको मृगमद को। उज्ज्वल से दोउ नयना, चन्द्र वदन नीको।। ॐ जय अम्बे ...
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजै। रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजै।। ॐ जय अम्बे ...
केहरि वाहन राजत, खड्ग खपर धारी। सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुख हारी।। ॐ जय अम्बे ...
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती। कोटिक चन्द्र दिवाकर, सम राजत ज्योती।। ॐ जय अम्बे ...
शुम्भ–निशुम्भ विदारे, महिषासुर घाती। धूम्र विलोचन नयना, निशिदिन मदमाती।। ॐ जय अम्बे ...
चण्ड–मुण्ड संहारे, शोणितबीज हरे। मधु–कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे।। ॐ जय अम्बे ...
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी। आगम–निगम बखानी, तुम शिव पटरानी।। ॐ जय अम्बे ...
चौसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरू। बाजत ताल मृदंगा, अरु बाजत डमरू।। ॐ जय अम्बे ...
तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता। भक्तन की दुख हरता, सुख सम्पति करता।। ॐ जय अम्बे ...
भुजा चार अति शोभित, वर–मुद्रा धारी। मनवांछित फल पावत, सेवत नर–नारी।। ॐ जय अम्बे ...
कंचन थाल विराजत, अगर कपूर बाती। मालकेतु में राजत, कोटि रतन ज्योती।। ॐ जय अम्बे ...
अम्बे जी की आरति, जो कोई नर गावै। कहत शिवानन्द स्वामी, सुख–सम्पति पावै।। ॐ जय अम्बे ...

श्री रामचन्द्रजी की स्तुति

श्री रामचन्द्र कृपालु भजु मन, हरण भवभय दारुणम्।
नव कंज लोचन, कंज मुख कर कंज पद कंजारुणम्।।
कंदर्प अगणित अमित छवि, नव नील नीरज सुन्दरम्।
पटपीत मानहुँ तड़ित रुचि शुचि, नौमि जनक सुतावरम्।।
भजु दीनबंधु दिनेश दानव दैत्य वंश निकंदनम्।
रघुनन्द आनन्दकन्द कौशलचन्द दशरथ–नन्दनम्।।
सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु उदार अंग विभूषणम्।
आजानु भुज शर चाप धर संग्राम जित खरदूषणम्।।
इति वदति तुलसीदास शंकर शेष मुनि मन रंजनम्।
मम हृदय कंज निवास कुरु कामादि खलदल गंजनम्।।
मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो।।
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि–पुनि मुदित मन मंदिर चली ।।

आरती कुंजबिहारीजी की

आरती कुंज बिहारी की, गिरधर कृष्ण मुरारी की।
गले में बैजन्ती माला, बजावै मुरली मधुर बाला।
श्रवन में कुण्डल झलकाला।
नन्द के आनन्द, मोहन ब्रजचन्द, परमानन्द, राधिका रमण बिहारी की।। आरती कुंज ...
गगन सम अंग कांति काली, राधिका चमक रही आली।
लतन में ठाढ़े बनमाली, भ्रमर सी अलक, कस्तूरी तिलक,
चन्द्र सी झलक, ललित छवि श्यामा प्यारी की।। आरती कुंज ...
कनकमय मोर मुकुट विलसै, देवता दर्शन को तरसै।
गगन से सुमन बहुत बरसें, बजे मुरचंग, मधुर मिरदंग,
ग्वालिनी संग, अतुल छवि गोप कुमारी की।। आरती कुंज ...
जहाँ ते प्रकट भई गंगा, कलुष कलि हारिणि श्रीगंगा,
स्मरण से होत मोह भंगा, बसी शिव शीश, जटा के बीच,
हरै अघ कीच, चरण छवि श्री बनवारी की।। आरती कुंज ...
चमकती उज्ज्वल तट रेणू, बाजती वृन्दावन वेणू।
चहुँ दिशि गोप ग्वाल धेनू, हंसत मृदुमन्द, चांदनी चन्द।
कटत भव फन्द, टेर सुन दीन दुखारी की।। आरती कुंज ...

आरती लक्ष्मीजी की

जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता।
तुमको निशिदिन सेवत हर विष्णू धाता।। जय लक्ष्मी ॰ ॰ ॰
उमा रमा ब्रह्माणी तुम ही जग–माता,
सूर्य चन्द्रमा ध्यावत नारद ऋषि गाता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
दुर्गा रूप निरंजन सुख संपति दाता,
जो कोइ तुमको ध्यावत ऋधि सिधि धन पाता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
तुम पाताल निवासिनि तुम ही शुभदाता,
कर्म प्रभाव प्रकाशिनि भवनिधि की त्राता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
जिस घर तुम रहतीं तहँ सब सद्‌गुण आता,
सब संभव हो जाता, मन नहीं घबराता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
तुम बिन यज्ञ न होते वस्त्र न हो पाता,
खान–पान का वैभव सब तुम से आता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
शुभ गुण मन्दिर सुन्दर क्षीरोदधि जाता,
रत्न चतुर्दश तुम बिन कोई नहिं पाता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
श्रीलक्ष्मीजी की आरती जो कोई नर गाता,
उर आनन्द समाता पाप उतर जाता। जय लक्ष्मी ॰॰॰

आरती श्रीरामजी की

हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ
आरती उतारूँ मैं तो तन मन वारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
कनक सिंहासन राजत जोरी–दसरथ नन्दन जनक किशोरी।
युगल छवी को सदा निहारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
वाम भाग शोभित जग जननी–चरण विराजत हैं सुत अंजनी।
इन चरणों में जीवन वारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
चरणों से निकली गंगा प्यारी– पावन करती है दुनियाँ सारी।।
इन चरणों को सदा पखारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
आरति हनुमत के मन भावै–रामकथा नित शिवजी गावै।
मैं सुन सुन निज जनम संवारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

आरती अवध बिहारी की

आरती अवध बिहारी की, लखन सिया जनक दुलारी की।
शीश पर क्रीट मुकुट सोहे। चंद्रिका की छवि मन मोहे।।
लखन सेवा बलिहारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
कपोलन पै अलकें झलकें। अधर पै बिजली सी चमके।।
छवि कजरारे नयनन की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
अंग सब ज्यों निर्मल नीरा। भरत रिपुदलन महावीरा।।
चरण सेवा धनुधारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
जिए जुग श्यामलता जोरी। भजो मन सब माया तोरी।।
दरस हित युगल बिहारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।

वंदना

जिस घर में हो आरती, चरण कमल चितलाय। वहाँ प्रभु वासा करें, स्वर्ग लोक से आय।।
कथा सदा होती रहे, सुनो वीर हनुमान। राम लखन सीता सहित, सदा करो कल्यान।।
बार बार वर माँगहुं, राम कृपा कर देहु। जन्म जन्म प्रभु पद कमल, कबहुँ घटे जनि नेहु।।
देवता सब आश्रम गये, शम्भु गये कैलाश। श्रोता–वक्ता जायेंगे, हरि सुमिरन की आस।।
मो सम दीन न दीन हित, तुम समान रघुवीर। अस विचार रघुवंश मनि, हरहु विषम भव भीर।।
हम तो कुछ जाने नहीं, तुम जानों रघुनाथ। सेवा पूजा वन्दना, सबहि तुम्हारे हाथ।।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, ग्रहण करो महाराज। कृपा दृष्टि अवलोकिए, शरण पड़े की लाज।।

ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।
ॐ कात्यायन्यै च विद्महे कन्या कुमारी च धीमहि तन्नो दुर्गे प्रचोदयात्।
ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णु प्रचोदयात्।
ॐ आदित्याय विद्महे भास्कराय धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात्।
ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।
ॐ वासुदेवाय विद्महे राधाबल्लभाय धीमहि तन्नो कृष्णः प्रचोदयात्।
ॐ दशरथाय विद्महे सीताबल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्।
ॐ रामदूताय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि तन्नो हनुमत प्रचोदयात्।
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं, पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय, पूर्णमेवावशिष्यते।
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनं। पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर।।
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं, भक्तिहीनं सुरेश्वरः। यत्पूजितं मया देव! परिपूर्णं तदस्तु मे।

श्रीरामचरितमानस पाठ आयोजन हेतु आवश्यक सामग्री

सूची 1 केवल पाठ हेतु

01. नारियल– (पानी वाला)
02. लाल कपड़ा 1 मीटर
03. सुपारी–5
04. धूपबत्ती
05. कलावा
06. रोली
07. कपूर (डली का)
08. इलायची 10 ग्राम
09. लौंग 10 ग्राम
10. देशी घी 250 ग्राम
11. मिश्री 100 ग्राम
12. सौंफ 50 ग्राम
13. काली मिर्च 10 ग्राम
14. गंगाजल
15. फल 5 तरह के
16. मिष्टान्न
17. दूर्वा
18. तुलसी के पत्ते
19. रूई
20. पान साबुत 5
21. फूल हार 7
22. आम के पत्ते
23. कलश 1
24. थाली 4
25. लोटा 2
26. चम्मच 2

सूची 2 यदि पाठ के साथ यज्ञ भी हो

01. घी 500 ग्राम
02. हवन सामग्री 1 कि.ग्रा.
03. काले तिल 50 ग्राम
04. इन्द्र जौ 25 ग्राम
05. जौ 50 ग्राम
06. बेलगिरी 250 ग्राम
07. अगर 25 ग्राम
08. तगर 25 ग्राम
09. नागर मौथा 25 ग्राम
10. गोला साबुत 1
11. हवन के लिए लकड़ी ढाई कि.ग्रा. (आम/आक/ढाक की)
12. कच्ची खांड 250 ग्राम

अनिष्ट ग्रहों की शान्ति, घर परिवार में अमन चैन तथा जीवन का परम लक्ष्य भगवत्कृपा प्राप्ति हेतु रामायण/सुंदरकाण्ड पाठ के आयोजन हेतु हमें संपर्क कर सकते हैं –

सम्पर्क सूत्र– 0120–4305457 एवं 9811056467

समिति के कार्यक्रमों की झलकियां

योगी आदित्यनाथ
मुख्यमंत्री
उत्तर प्रदेश

यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण
के
सर्वांगीण विकास की राह में बढ़ते कदम...

नन्द गोपाल गुप्ता 'नन्दी'
मंत्री, औद्योगिक विकास,
उत्तर प्रदेश सरकार

- **औद्योगिक भूखण्डों का आवंटन** : प्राधिकरण ने कलस्टर आधारित उद्योगों के विकास हेतु प्रभावी कार्यवाही की है। प्राधिकरण के औद्योगिक सैक्टरों में MSME पार्क, टॉय सिटी एवं हैण्डीक्राफ्ट पार्क एवं अपैरल पार्क का विकास किया गया है। वित्तीय वर्ष 2017 से 31 जनवरी 2024 तक कलस्टर आधारित औद्योगिक पार्कों एवं निश्चित भू–उपयोग में कुल 2209 औद्योगिक ईकाईयों की स्थापना हेतु भूमि का आवंटन किया गया है। इन उद्योगों के स्थापना से प्राधिकरण क्षेत्र में लगभग रु. 31,000 करोड़ रुपये का निवेश प्राप्त होगा तथा 3,61,593 लोगों को रोजगार की प्राप्ति होगी।
- **मेडिकल डिवाईस पार्क** : भारत सरकार की योजना के अन्तर्गत मेडिकल डिवाईस पार्क की स्थापना यमुना एक्सप्रेस प्राधिकरण द्वारा सैक्टर–28 में की जा रही है। मेडिकल डिवाईस पॉलसी के अन्तर्गत रु. 100 करोड का ग्रान्ट भारत सरकार द्वारा दिया जाना है जिसके सापेक्ष रु. 30 करोड़ प्राप्त हो चुके हैं। मेडिकल डिवाईस पार्क में इकाईयों की स्थापना के लिए भारत सरकार द्वारा सैद्धान्तिक अनुमति में वर्णित विशेष प्रोत्साहन लाभ प्रदान करने हेतु फार्मास्युटिकल मैन्यूफैक्चरिंग नीति–2018 (यथा संशोधित) के प्रस्तर–12.5 के तहत प्रस्ताव पर ना. मंत्री परिषद द्वारा दिनांक 14.06.2022 को अनुमोदन प्रदान कर दिया गया है। Scheme for promotion of Medical Devices Park के अनुसार मेडिकल डिवाईस पार्क योजना–02 वर्ष में क्रियान्वित की जानी है। मेडिकल डिवाईस पार्क योजना के अन्तर्गत फेज–1 में 35, फेज–2 में 23 एवं फेज–3 में 14 भूखण्डों का आवंटन हो चुका है। इस योजना में लगभग 3,800 करोड़ का निवेश प्राप्त होगा साथ ही 15,000 रोजगार का सृजन होगा।
- **इन्टरनेशनल फिल्म सिटी : इन्टरनेशनल फिल्म सिटी** : उ.प्र. में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की फिल्म सिटी के स्थापना की उ.प्र. शासन की परिकल्पना ने लिया आकार। यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण के विकसित क्षेत्र में 230 एकड़ में फिल्म सिटी की स्थापना हेतु निर्माता निर्देशक बोनी कपूर एवं भूटानी इफ्रा कम्पनी Bayview Projects LLP इनके द्वारा ड्राईंग डिजाईनिंग डीपीआर तैयार किया जा रहा है।
- **नॉयडा इन्टरनेशनल एयरपोर्ट, जेवर** : नॉयडा इन्टरनेशनल एयरपोर्ट, जेवर नागरिक उड्डयन विभाग, उ.प्र. शासन की पी.पी.पी. मोड पर आधारित परियोजना है। इसका विकास प्राधिकरण के मास्टर प्लान क्षेत्र इन्टरनेशनल एयरपोर्ट एण्ड एविएशन हब के अन्तर्गत 1334 हेक्टेयर क्षेत्र में जेवर के निकट किया जा रहा है। इस हेतु 1334 हेक्टेयर भूमि का अधिग्रहण किया जा चुका है तथा भारत सरकार की विभिन्न एजेंसियों से सभी प्रकार की एन.ओ.सी. एवं इन्वायरमेंट क्लीरेन्स प्राप्त हो चुका है। ग्लोबल बिडिंग प्रकिया से Zurich Airport International AG का चयन कंसेशनायर / विकासकर्त्ता के रूप में किया गया है। समस्त भूमि का कब्जा विकासकर्त्ता को प्रदान किया जा चुका है तथा विकास हेतु Master Plan एवं Development Plan अनुमोदित किया जा चुका है। वर्तमान में विकासकर्त्ता Yamuna International Airport Pvt. Ltd. जो Zurich Airport International AG की SPV है, के द्वारा Terminal Building, रनवे, ATC Building के निर्माण कार्य किया जा रहा है। प्रथम चरण मे 12 मिलियन यात्रियों के लिए एयरपोर्ट का निर्माण होगा जिसमें रु. 5,730 करोड़ की धनराशि कम्पनी द्वारा व्यय की जाएगी। एयरपोर्ट की स्थापना से औद्योगिक अवस्थापना का संरचनात्मक विकास होगा, जिससे रोजगार के अवसर बढेंगें, विनिर्माण एवं निर्यात को प्रोत्साहन मिलेगा तथा हवाई यातायात सुगम होगा साथ ही पर्यटन में उल्लेखनीय वृद्धि होगी।
- **हेरीटेज सिटी** : राया नगरीय केन्द्र (वृन्दावन) प्राधिकरण की महायोजना मे शासन द्वारा अनुमोदित है, जहाँ प्राधिकरण द्वारा हेरीटेज सिटी के रूप मे विकास किये जाने की योजना है। इसके अध्ययन हेतु M/s CBRE South Asia Pvt. Ltd. को परामर्शदाता के रूप में चयन किया गया है। ब्रज विकास परिषद के सुझाव पर इसका विकास श्री बांकेबिहारी मंदिर के समीप ग्रीनफील्ड एरिया में किया जाएगा जहाँ पर पूर्व से ही भगवान श्रीकृष्ण से सम्बन्धित कई पौराणिक स्थल मौजूद हैं। इस योजना में यमुना एक्सप्रेसवे से श्री बांकेबिहारी मन्दिर हेतु ग्रीनफील्ड कनेक्टिविटी प्रदान की जाएगी साथ ही रिवर फ्रान्ट, योग केन्द्र, प्रार्थना स्थल आदि का भी विकास हेरीटेज सिटी में सम्मिलित है। इसका DPR कंसलटेन्ट द्वारा तैयार किया जा रहा है। DPR के अनुमोदन के उपरान्त विकासकर्त्ता का चयन पी.पी.पी. मोड पर किया जाएगा। मास्टर प्लान दिनांक 21.10.2024 को शासन से अनुमोदित हो गया है।
- **ग्रुपहाउसिंग भूखण्डों का आवंटन** : प्राधिकरण द्वारा दिनांक 01.08.2024 को सैक्टर–18 एवं 22डी ग्रुपहाउसिंग भूखण्ड योजना (वाई.ई.ए.–जीएच–08/2024) लायी गई थी उक्त योजना में कुल 9 भूखण्डों का आवंटन किया जा चुका है।
- **डेटा सेन्टर पार्क** : सैक्टर–28 में डेटा सेन्टर पार्क 50 एकड़ में विभिन्न आकार के 6 भूखण्डों के आवंटन की योजना लायी गयी है। डेटा सेन्टर पार्क और एविएशन हब के बीच 2.5 कि.मी. की दूरी है। डेटा सेन्टर पार्क के अन्तर्गत 2 भूखण्डों का आवंटन हो चुका है।
- **संस्थागत**: प्राधिकरण के संस्थागत उपयोग हेतु शिक्षण संस्थानों की स्थापना हेतु प्रभावी कार्यवाही की गयी है। प्राधिकरण के संस्थागत सैक्टरों में Degree College, PG College, Medical College, Management Institute/Technical Institute, Vocational College/Institute, Sport College/Sports Academy, Senior/Higher Secondary School, Integrated Residential Schools, Nursery School, Hospital, Nursing Home, Corporate Office etc. के उपयोग हेतु कुल 238 भूखण्डों का आवंटन किया गया है।
- **ग्रामों का सैक्टरों की तर्ज पर स्मार्ट विलेज के रुप में विकास** : प्रथम फेज में प्राधिकरण द्वारा अधिग्रहित क्षेत्र के कुल 29 औद्योगिक नगरों को स्मार्ट विलेज के रुप में विकसित किया जाना प्रस्तावित है। 06 औद्योगिक नगरों निलौनी, रामपुर बांगर, अच्छेजा बुजुर्ग, डूंगरपुर रीलका, मिर्जापुर व रुस्तमपुर का कार्य पूर्ण करा दिया गया है। 13 औद्योगिक नगरों (सलारपुर, मूंजखेडा, बघरगढ़, (माजरा–मिर्जापुर), गुनपुरा, मुरादगढ़ी, मौहम्मदपुर गुर्जर, खेरली भाव, औरंगपुर, अट्टा गुजरान, दनकौर जगनपुर, अफजलपुर, रौनिजा एवं चौंदपुर) में कुल रु. 9584.08 लाख के विकास कार्य प्रगति में है। शेष 11 औद्योगिक नगरों के प्राक्कलन तैयार किया जाना प्रस्तावित है।
- **प्राधिकरण के 96 औद्योगिक नगरी क्षेत्रों के अन्तर्गत स्कूलों के कायाकल्प के कार्य**:

आपरेशन कायाकल्प के अतर्गत परिषदीय विद्यालयों को अवस्थापना से सतृप्त कराये जाने हेतु बेसिक शिक्षा अधिकारी द्वारा कराये गये सर्वे में 14 मानकों के अन्तर्गत 89 प्राईमरी स्कूल तथा 34 जूनियर हाई स्कूल में कार्य पूर्ण कराये जा चुके है।

- **अभ्युदय कम्पोजिट विद्यालय** :

प्राधिकरण सीमा के अन्तर्गत आने वाले 15 विद्यालयों की सूची तैयार कर प्रस्तुत की गयी है, जिसमें नयी शिक्षा नीति–2020 के अनुरूप "At Grade Learning" की अवधारणा के आधार पर उक्त चिन्हित विद्यालयो में पढ रहें बच्चों को विश्वस्तरीय एवं आधुनिक अवस्थापना सुविधाओ के साथ बेहतर शैक्षणिक परिवेश मे शिक्षा प्रदान करने के उददेश्य से परिषदीय कम्पोजिट विद्यालयों को अभ्युदय कम्पोजिट विद्यालय के रूप में उच्चीकृत किये जाने हेतु प्रस्ताव प्रेषित किया गया है। इसके अन्तर्गत विद्यालय में 05 कक्षों से युक्त 01 एकीकृत भवन का निर्माण किया जाएगा, जहाँ निम्नलिखित आधुनिक अवस्थापना सुविधाओं को विकसित किया जाएगा:

• Library with dedicated reading Corner • Computer lab with language lab solution • Modular composite (Math & Science) laboratory • High-tech Smart class by interactive display smart board with virtual class room • Staff room with attached toilet

अभ्युदय कम्पोजिट विद्यालय राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप डिजिटल शिक्षा पर विशेष ध्यान देने के उददेश्य से बच्चों को डिजिटल एजुकेशन प्लेटफार्म एवं डिजिटल लर्निंग के माध्यम से गुणवत्तापरख शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए आधुनिक स्मार्ट क्लास शैटअप को भी तैयार किया जायेगा। प्राधिकरण द्वारा कुल 12 विद्यालयों को दो चरणों में अभ्युदय कम्पोजिट विद्यालयों के रूप में विकसित किये जाने हेतु कार्य प्रगति में है।

YEIDA
FUTURE IS HERE

यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण

प्रथम तल, कॉमर्शियल कॉम्पलेक्स, पी–2, सैक्टर ओमेगा–1, ग्रेटर नोएडा 201308, जनपद–गौतमबुद्ध नगर
Tollfree No. : 180018 08296 वेबसाईट : www.yamunaexpresswayauthority.com

Ideal atmosphere for multifacted growth

Come... experience it

Not just industry. Also commerce, institutions, living, education, sports, health, leisure, retail. Even the latest culturaland arts centres. In Greater Noida, it's all world class. And within reach, Enveloped in an atmosphere that's pollution free- amid growing greeners. Underlining holistic standards of living.

Facets of Greater Noida

Excellent Connectivity: • In proximity of two national and two state highways • Approachable from two 6-lane expressway • Intersection of Eastern and Western Freight Corridors • 20mins from proposed Jewar International Airport • Two metro lines will connect the city to Delhi and IGI Airport • 50 mins from Indira Gandhi International Airport

Meticulously planned with a host of international level facilities: • Weil-laid sewerage system • Drainage & rainwater harvesting • Water supply network • 24x7 uninterrupted power supply • Convergence network Plan Solid waste management plan

Equipped with robust and modern infrastructure for urban and social sector: • Ecologically Sensitive Areas • Spine of 130 mt. wide road • Ground Water Recharge Areas • Interlinked Greens • Energy efficient design & waste treatment • Solid Waste Management

Ease of doing business with transparency and efficiency: • Nivesh Mitra - A friendly single-window centralised portal & mobile application for investment: **www.niveshmitra.up.nic.in**

Greater Noida has become a showpiece of urban development with well-planned commercial, institutional, industrial residential and other areas of gainful living, employment and investment. Investors in any of a multitude of options have easy access to the Greater Noida Industrial Development Authority and will find that the terms of business are most attractive. Thus, this fast-developing city with a pollution-free environment has become a magnet for those seeking better living, working and investment opportunities.

Greater Noida Industrial Development Authority
Plot No. 01, Knowledge Park-04, Greater Noida 201308, Dist. Gautam Budh Nagar., U.P.
Helpline Center No.: 0120-2336046, 2336047, 2336048, 2336049
Ph.: 0120-2336030-33, E-mail: authority@gnida.in, Website: www.greaternoidaauthority.in

Follow us on
/OfficialGNIDA